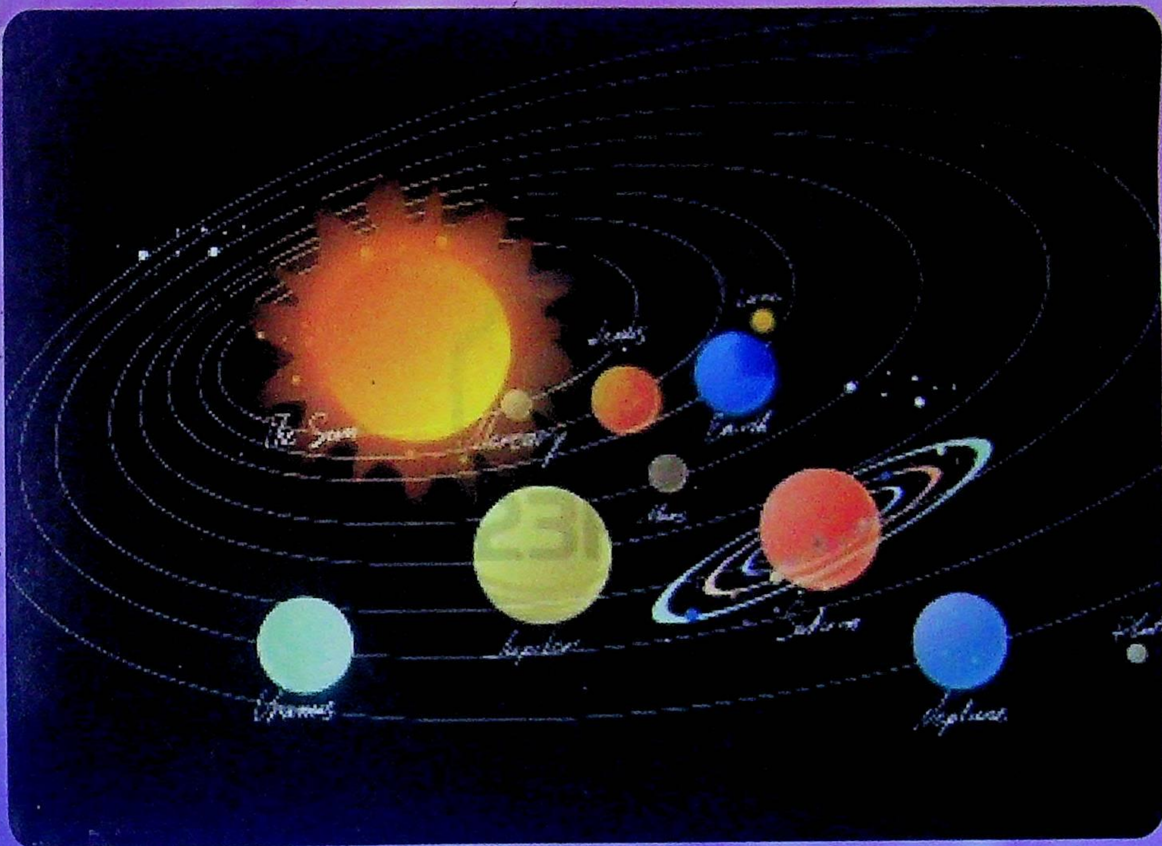
भाग्य दर्पण



डॉ. पारस राम शास्त्री

संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू
जम्मू-कश्मीर संस्कृत परिषद्, जम्मू
द्वारा संचालित
मुख्य कार्यालयः ४२/११ बरनाई रोड बनतलाव, जम्मू-१८११२३
सम्पर्क सूत्र : ०९४१९१४७०७३, ०९४१९२२१७३५
E-mail : ssshodh@gmail.com, jksanskritsociety@gmail.com

।। श्री।।

संस्कृत शोध संस्थान, ग्रन्थमाला 09

भाग्य दर्पण

डॉ. पारस राम शास्त्री
जम्मू

संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू

प्रकाशक : संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू
मुद्रक : शिवा प्रिंटर्स, पलोड़ा, जम्मू
संस्करण : प्रथम, विक्रम सम्वत् 2069, सन् 2012
प्रतियाँ : 500

ISBN : 978-81-928321-6-6

मूल्यः 250/-

संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू
जम्मू-काश्मीर संस्कृत परिषद्, जम्मू
द्वारा संचालित
मुख्य कार्यालयः 42/11 बरनाई रोड बनतलाव, जम्मू-१८११२३
सम्पर्क सूत्र : ०६४१६१४७०७३, ०६४१६२२१७३५
E-mail : ssshodh@gmail.com, jksanskritsociety@gmail.com

।। श्री।।

संस्कृत शोध संस्थान, ग्रन्थमाला 09

भाग्य दर्पण

डॉ. पारस राम शास्त्री
अध्यक्ष
संस्कृत शोध संस्थान
जम्मू

संस्कृत शोध संस्थान, जम्मू
जम्मू-काश्मीर संस्कृत परिषद्
द्वारा संचालित
मुख्य कार्यालयः 42/11 बरनाई रोड बनतलाव, जम्मू-१८११२३
सम्पर्क सूत्र : ०६४१६१४७०७३, ०६४१६२२१७३५
E-mail : ssshodh@gmail.com, jksanskritsociety@gmail.com

दो शब्द

प्रत्यक्ष फल देने वाला यह उत्तम ज्योतिष शास्त्र वेदों के अंगरूप में साक्षात् फलप्रद है और इस संसार में वन्दनीयता गुण के कारण सर्वोत्कृष्ट है। भारतीय फलित (ताजिक) ज्योतिषशास्त्र में वर्षकुण्डली का अत्याधिक महत्त्व है। वर्षकुण्डली में जातक के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं का वर्णन न होकर, किसी एक विशेष वर्ष को मुख्य एवं आकस्मिक घटनाओं, स्वास्थ्य-रोगादि का विचार, पदोन्नति, स्त्री एवं सन्तान सुख, परीक्षा में सफलता, व्यापार में उतार-चढाव, स्थानान्तरणादि मुख्य विषयों का समावेश रहता है।

"ताजिकनीलकण्ठी एवं वर्षकुण्डली" विषय को आधार बनाकर मैंने इस कृति के कार्य को अनुसन्धान के रूप में किया है। इससे पूर्व भी ज्योतिषशास्त्र के अनेक ग्रन्थों पर अनेक प्रकार के अनुसन्धान हुए हैं किन्तु इस विषय पर अभी किसी ने प्रकाश नहीं ढाला। अतः आज के समय में इस विषय की अत्याधिक आवश्यकता है क्योंकि आज का मानव अल्पसमय में ही बहुत कुछ करने का विचार करता है। उसे शीघ्रातिशीघ्र अपने मनईच्छित प्रश्नों का उत्तर चाहिए वह तभी सम्भव है जब वर्ष कुण्डली तथा प्रश्न ज्योतिष का ज्ञान हो। मैंने इस कृति में ज्योतिषशास्त्र के बड़े-बड़े ग्रन्थों का अध्ययन करके गहन चिन्तन एवं मनन करके अनुसन्धान कार्य किया है। प्रत्येक व्यक्ति चिन्ताओं से ग्रस्त है एवं अपने भविष्य के सम्बन्ध में कुछ जानने के लिए उत्सुक है कि मेरा आने वाला समय कैसा होगा।

प्रश्नफल, वर्षफल, सम्बन्धि सब ज्ञान ताजिक तथा ज्योतिष ग्रन्थों में बिखरा हुआ था। उसे मैंने एकत्रित करके वर्षकुण्डली एवं प्रश्नकुण्डली निर्माण एवं फलादेश सम्बन्धि प्रारम्भिक विषयों का सरल एवं व्यापक रीति से वर्णन किया है। किसी जातक के जन्म का इष्टकालीन सूर्य आगामी वर्ष जब ठीक उसी राशि, अंश, कला, विकला पर आयेगा तो तत्कालीन वार, तिथि नक्षत्र एवं इष्टकाल पर आधारित जो वर्षकुण्डली बनाई जाती है, उस समय की कुण्डली को वर्षकुण्डली कहते हैं इस कुण्डली द्वारा वर्ष का शुभाशुभ फलादेश करने के लिए वर्षकुण्डली में स्थित ग्रहों का फल विचार, वर्षेशफल, मुन्थाफल, भावफल, इक्कबाल, इन्दुवार, इत्थशाल आदि षोडश योगों का उदाहरणों सहित वर्णन किया है।

मानव-मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाली इच्छा, आकांक्षा, उत्कण्ठा, शंका या चिन्ता का ज्ञान और समाधान करना एक जटिल पहेली है, तथापि हमारे पूर्वज मर्हषयों एवं मनीषी आचार्यों ने मानव की इस स्वाभाविक जिज्ञासा का रहस्योद्घाटन करने के लिए प्रश्नशास्त्र की रचना की।

मैंने इस कृति में प्रश्नपूछने के नियम, प्रश्नकर्ता की परीक्षा, अधिक प्रश्नों में उत्तर देने की विधि बताई है तथा प्रश्न लग्न द्वारा कार्यसिद्धि विचार, यात्री का आगमन, विदेशी का जीवन-मरण, सन्तान, स्त्री, क्रय-विक्रय आदि अनेकों प्रश्नों का सोदाहरण पूर्वक वर्णन किया है।

इस प्रकार मैंने अथाह ताजिक एवं जातक ज्योतिष सागर में से कतिपय रत्नों को निकालकर ज्योतिष प्रमी पाठकों के समक्ष रखनें का प्रयास किया है।

अन्त में कालिदास की इस उक्ति के अनुसार :-

आपरितोषाद्विदुषां न साधुमन्येप्रयोगविज्ञानम्

यह मेरा प्रयास कहाँ तक जनोपयोगी हो पाया है इसका निर्णय विद्वान्, विचक्षण, पाठकगण ही करेंगे।

इति शुभम्

शब्द संकेत सूची

अ०	—	अध्याय
पृ०	—	पृष्ठ
श्लो०	—	श्लोक
ता०नी०	—	ताजिकनीलकण्ठी
क० (सं० ना०)	—	कल्याण (संक्षिप्त नारदपुराण)
भा० कु० ह०	—	भावकुतूहलम्
बृ० पा० हो०	—	बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्
बृ० जा०	—	बृहज्जातकम्
ल० जा०	—	लघुजातक
सा० व०	—	सारावली
भृ० सं०	—	भृगु संहिता
भा० ज्यो०	—	भारतीय ज्योतिष
भा० ज्यो० प्र०	—	भारतीय ज्योतिष प्रवेश
जा० त०	—	जातकतत्त्वम्
मु० चि०	—	मुहूर्त्तचिन्तामणि
ग्र० ला०	—	ग्रहलाघवकरणम्
प्र० भू०	—	प्रश्न भूषणम्
भा० कु० वि०	—	भारतीय कुण्डली विज्ञान
मू० प्र० वि०	—	मूक प्रश्न विचार
व० फ० वि०	—	वर्षफल विचार
व० फ० द०	—	वर्षफल दर्पण
व० फ० च०	—	वर्षफल चन्द्रिका
व० फ० दी०	—	वर्षफल दीपक
सं० त०	—	संज्ञा तन्त्र
व० त०	—	वर्ष तन्त्र
प्र० त०	—	प्रश्न तन्त्र

भूमिका

अनन्त पारं किल शब्द शास्त्रं स्वल्पं तथायुर्वहवश्च विघ्नाः।
सारं ततो ग्राह्यमुपास्य फल्गुहंसैर्यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात्।।

उपर्युक्त सूक्ति के अनुसार शास्त्र अनेक हैं किन्तु किसी भी शास्त्र का साङ्गोपाङ्ग अध्ययन क्षण भंगुर जीवन के अल्प काल में सम्भव नहीं है। उसमें भी ज्योतिष शास्त्र वेदांगभूत होने के कारण उतना ही विशालकाय है जितना स्वयं वेद, फिर भी मैंने **"यत्सारभूतम् तदुपासनीयम्"** का अबलम्बन करते हुए ज्योतिष महार्णव में से ताजिकनीलकण्ठी के अन्तर्गत वर्ष फल कुण्डली एवं अन्य जीवनोपयोगी तथ्यों का विवेचन प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में समाहित करने का प्रयास किया है जिसमें मुझे कहाँ तक सफलता अधिगत हुई है यह तो विद्वान्, पाठक ही कहेंगे।

प्राचीन भारतीय संस्कृत साहित्य में ज्योतिषशास्त्र का अपना विशिष्ट स्थान है। ज्योतिषशास्त्र की परम्परा वेदों से प्रारम्भ होकर आज तक चली आ रही है भारतीय ज्योतिष शास्त्र सर्वोच्च एवं दूरदर्शी नेत्र स्वरूप है जैसे कहा भी गया है **"ज्योतिषायनं चक्षुः"** सौर मण्डल में जितने भी ग्रह, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रादि हैं इन ग्रहों का मानव के शरीर से सम्बन्ध होता है तथा शरीर की सरंचना ग्रहों के आधार पर ही हुआ करती है। जगत् का आधार भी ग्रह नक्षत्रों पर निर्धारित है और उन ग्रहों का शुभाशुभ प्रभाव कब होगा और किस समय और कहाँ पर किस ग्रह की दृष्टि है तथा किस समय में कैसे ग्रहों का योग है यह सब ज्योतिष-शास्त्र के द्वारा हम जान सकते हैं। मनुष्यों को सर्वदा अपने भविष्य की चिन्ता रहती है कि उसका आने वाला समय कैसा होगा। इन सभी प्रश्नों का समाधान ज्योतिषशास्त्र के द्वारा होता है। सर्वसाधारण मनुष्य के जीवन में ज्योतिष का प्रवेश इस सीमा तक व्याप्त हो चुका है कि शुभदिन, शुभघड़ी, शुभ मुहूर्त्त, शुभलग्न एवं शुभलक्षण यह सब मनुष्य के जीवन के अंग बन चुके हैं।

इस संसार में वेद अमूल्यवान निधि हैं। उसी का अंग ज्योतिष है जैसे लिखा है :-

सिद्धान्त संहिता होरा रूपं स्कन्ध त्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुः ज्योतिः शास्त्रमकल्पवम्।।
अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम्।
प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ।।
विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त्तकर्म न सिद्धयति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा निर्मित पुरा।।

वेद के छः अंग - शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष हैं। इनमें से सर्वोत्तम अंग नेत्र संज्ञक निष्कलंक ज्योतिष ही है। जिसको प्राचीन ऋषियों ने (सिद्धान्त) गणित ग्रन्थ, (संहिता) मुहूर्त आदि, (होरा) जातक, ताजिक आदि फलादेश इन तीन स्कन्धों में विभाजित किया है। यह ज्योतिष शास्त्र अप्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष करता है जिस के साक्षी सूर्य और चन्द्रमा हैं। अन्य शास्त्र केवल मात्र विवाद का कारण हैं। इस शास्त्र के बिना समस्त (श्रौत स्मार्त) वैदिक एवं धर्म शास्त्रोक्त कर्म सिद्ध नहीं हो सकते हैं। इसलिये संसार के उपकारार्थ ब्रह्मा जी ने इसे वेद नेत्र करके कहा है। सम्पूर्ण अंग प्रत्यंग परिपूर्ण होते हुए भी जैसे नेत्र के बिना समस्त अंधकार ज्ञात होता है उसी प्रकार बिना ज्योतिष के समस्त साधन निरर्थक हैं।

वसिष्ठ सिद्धान्त का भी वाक्य है कि -

वेदस्य चक्षुः किल शास्त्रमेतत्प्रधानतांगेषुततोऽर्थ जाता।
अंगेर्युतान्यैः परिपूर्णमूर्तश्चक्षुर्विहीन न किंचित्।।

परब्रह्म परमेश्वर ने इस संसार में कैसी-कैसी अद्‌भुत विद्यायें जगत् के कल्याण के लिए बनाई हैं जिनके जानने से मनुष्य को चौरासी लाख योनियों में अग्रणीय गिना जाता है और बहुधा इन विद्याओं के ज्ञाता मनुष्य देवताओं के समान पूजनीय हो जाते हैं और राजा महाराजा उनका अधिक सम्मान किया करते हैं। इस समय अन्य विद्याओं के वर्णन करने का कुछ प्रयोजन नहीं है। केवल संसार के हित करने वाली धर्मों की मूल ज्योतिष विद्या के विषय में निवेदन किया जा रहा है यथा :-

अन्यानि शास्त्राणि विनोदमात्रं किंचिदेषां तु विशिष्टमस्ति।
चिकित्सितं ज्योतिषमंत्र वादाः पदे-पदे प्रत्ययामावहन्ति।।

अन्य शास्त्र तो विनोद मात्र हैं, वैद्यशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, मन्त्रशास्त्र, धर्मशास्त्र प्रत्येक पद-पद में विश्वास देते हैं। इस ज्योतिष शास्त्र को जानकार त्रिकालदर्शी हर एक प्राणी का शुभाशुभ फल तीनों जन्मों का बतलाया करते हैं।

मनुष्य के समस्त कार्य ज्योतिष के द्वारा ही चलते हैं तथा संसार की प्रत्येक वस्तु तथा प्राणी ग्रह नक्षत्रों के प्रभाव से पूर्ण प्रभावित है। भिन्न-भिन्न वर्णों में जन्म, सुन्दर एवं असुन्दर स्वरूप, तीव्र बुद्धि एवं मन्द बुद्धि, शुभाशुभकृत्य, सुख-दुःख आदि सभी बातें मनुष्य के पूर्व कर्मों के अधीन होती हैं, तथा प्रत्येक जातक की जन्मकुण्डली में विभिन्न भावों में स्थित ग्रह उसके भूत, वर्तमान तथा भविष्य के जीवन को प्रभावित करते हैं। तथापि, जिस प्रकार औषधि के सेवन द्वार प्रयत्न पूर्वक रोग को दूर या कम किया जा सकता है, उसी प्रकार ज्योतिष शास्त्र की सहायता से भूत, भविष्य एवं वर्तमान का ज्ञान प्राप्त कर अपने प्रयत्नों द्वारा वर्तमान तथा भविष्य के जीवन को प्रभावित एवं परिर्वतत भी किया जा सकता है। साथ ही अरिष्ट निवारक आश्रय लेकर संकटों से छुटकारा भी पाया जा सकता है। अतः यह शास्त्र जो होना है वह तो होगा ही पर आश्रित केवल भाग्यवादी बने रहने के लिए नहीं कहता, अपितु भविष्य में घटने वाली घटनाओं का पूर्वाभास होने पर उनसे बचने उन्हें बदलने या मिटाने के लिए प्रयत्नशील होने की प्रेरणा भी देता है। इस प्रकार यह शास्त्र भाग्य और कर्म के समन्वय का सेतु है।

अप्रत्यक्ष रूप में यह शास्त्र मनुष्य को बुराईयों से बचाकर शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करता है कि इस दुःखमय संसार के आवागमन रूपी कष्टों से सदैव के लिए छुटकारा पाया जा सके। मानव के दैनिक जीवन में ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता किसी से छिपी नहीं है। विवाह, सन्तान, व्यापार, नौकरी, यात्रा, भवन निर्माण इत्यादि सभी महत्वपूर्ण प्रसंगों पर ज्योतिषशास्त्र के निर्देश पग-पग पर मार्गदर्शक एवं सहायक सिद्ध होते हैं। किस समय क्या करना उचित है, क्या अनुचित है, किस समय कौनसा काम करने से लाभ होगा अथवा हानि। इस सम्बन्ध में ज्योतिष शास्त्र के निर्देश बहुमूल्य माने जाते हैं।

किस वर्ष में अमुक तिथि को सूर्य ग्रहण अथवा चन्द्र ग्रहण होगा, इसकी ठीक-ठीक अवधि आरम्भ एवं अन्त का ठीक समय सैकड़ों वर्ष पूर्व ही बता देने की आश्चर्यजनक क्षमता केवल इसी शास्त्र में है।

ज्योतिष शास्त्र के भेद -

सामान्यतया ज्योतिषशास्त्र सिद्धान्तस्कन्ध, संहितास्कन्ध और होरास्कन्ध भेद से त्रिस्कन्ध कहलाता है। साथ ही केरली (प्रश्न) और शकुन नाम के दो और भेद जोड़कर पाँच स्कन्ध होते हैं।

१. सिद्धान्त - गणित के नियम तथा काल गणना, चन्द्रमा की गति और इसके अतिरिक्त ग्रहगतियों का सूक्ष्म रूप से निरूपण ग्रह नक्षत्र की स्थिति तथा अक्षांश, रेखांश के आधार पर उनकी ही स्थिति को ज्ञात करने को **"सिद्धान्त"** का नाम दिया गया है, अर्थात् जिस भाग से ग्रहों की गति,

उदय, अस्त, ग्रहण आदि का पता चलता है, उसे सिद्धान्त कहते हैं।

२. संहिता – ज्योतिष का यह भी एक प्रमुख अंग है।

"संहिताशास्त्ररूपं च ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्।
तिथिवासर नक्षत्रयोगतिथ्यर्द्ध संज्ञकः।।

अर्थात् इस में ग्रह चार (ग्रहों की गति), वर्षलक्षण, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त, उपग्रह सूर्य-संक्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रमा और तारा का बल, सम्पूर्ण लग्नों तथा ऋतुदर्शन का विचार, गर्भादान, पुंसवन आदि विषयों का विचार किया जाता है। प्राचीन समय में यही स्कन्ध मुख्य माना जाता था। इसलिए इस शाखा के लेखक आचार्यों की एक लम्बी परम्परा उपलब्ध होती है ऐसे आचार्यों में कश्यप, गर्ग, पराशर, वसिष्ठ आदि के नाममात्र ही उपलब्ध नहीं होते, अपितु भट्टोत्पल की व्याख्या के अनुसार इसके उद्धरण भी मिलते हैं। आचार्य वराहमिहिर की बृहत्संहिता इस स्कन्ध का सर्वप्रथम प्रमुख ग्रन्थ है।

३. होरा – "अहोरात्र" शब्द के आदिम वर्ण "अ" और अन्तिम वर्ण "त्र" का लोप हो जाने से होरा शब्द होता है, जिसका ज्ञान होने से जातक के शुभ-अशुभ फल का ज्ञान होता है। यह होरास्कन्ध, जातक शास्त्र और ताजिकशास्त्र के भेद से दो प्रकार का होता है। इसी को फलित ज्योतिष के नाम से व्यवहार में लाया जाता है। आचार्य वराहमिहिर का बृहज्जातक और आचार्य नीलकण्ठ की ताजिक नीलकण्ठी इस विषय के प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। मानवजीवन के सुख-दुःख, इष्ट, अनिष्ट, उन्नति, अवनति, भाग्योदय आदि समस्त शुभाशुभों का वर्णन इस शास्त्र में रहता है। इस प्रकार शास्त्रदृष्टि और व्यवहार दृष्टि से सर्वाधिक उपयोगी होने के कारण यह शास्त्र वेदांगों में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होता है।

जैसा कि लगध मुनि ने कहा भी है –

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद् वेदाङ्गशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्ध्निसंस्थितम्।।

४. प्रश्नशास्त्र – प्रश्नशास्त्र ज्योतिष विद्या का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। यह तत्काल फल बतलाने वाला शास्त्र है। इसमें हम तात्कालिक लग्न एवं ग्रह स्थिति के आधार पर व्यक्ति के मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले प्रश्न और उसके शुभाशुभ फल का विचार करते हैं। केरल, रमल एवं स्वरशास्त्र इसके अंग हैं। इन शाखाओं में प्रश्नाक्षर, अंक एवं स्वर के आधार पर प्रश्न के शुभ या अशुभ फल का निश्चय किया जाता है। इस शास्त्र में मुख्य रूप से तीन सिद्धान्तों का प्रचलन है – १. प्रश्नलग्न सिद्धान्त २. प्रश्नाक्षर सिद्धान्त३. स्वर सिद्धान्त। इसके अलावा अंक तथा चर्चा-चेष्टा या हाव-भाव के द्वारा भी मनोगत भावों का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है।

५. शकुन शास्त्र – इसको निमित्त शास्त्र भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत पशु-पक्षियों की भाषा का अध्ययन किया जाता है और यह देखा जाता है कि व्यक्ति के घर से निकलते समय बाहर कोई पशु या पक्षी किस दिशा की ओर है। किस प्रकार से बोलता है आदि का अध्ययन इसी शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। यदि उपरोक्त विराट् पंचस्कन्धात्मक परिभाषा का विश्लेषण किया जाये तो आज का मनोविज्ञान, जीवविज्ञान, पदार्थविज्ञान, रसायनविज्ञान, चिकित्साशास्त्र इत्यादि भी इसी के अन्तर्भूत हो जाते हैं। सिद्धान्त, संहिता एवं होरा के रूप में तीन भागों में विभाजित ज्योतिष शास्त्र के होरा शास्त्रीय भारतीय ज्योतिष के फलित विभाग के अन्तर्गत मानव की पूर्णायु में प्रत्येक नूतन वर्ष प्रवेश समय का ज्ञानकर तदनुसार कुण्डली द्वारा वर्षपर्यन्त प्रत्येक मास, दिन और दिनार्ध से भी सूक्ष्म समय के शुभाशुभ भविष्य-ज्ञान के प्रतिपादक फलित ज्योतिष के रूप में ताजिक एक मुख्य विभाग है।

जातकोदितदशाफलं च यत्स्थूलकालफलदंस्फुटंनृणाम्।
तत्र न स्फुरति दैवविन्मतिस्तद्ब्रुवेऽब्दफलमादिताजिकात्।।

बृहज्जातक आदि विविध जातक शास्त्र में मनुष्यों के लिए जो शुभाशुभ फल कहे गये हैं, उनमें फलित का एक स्थूल रूप है जो पूर्णतः सत्यता पर घटित नहीं होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जातकज्योतिष में स्थूल काल फल मिलता है बहुत विस्तार के साथ गणित करने पर दिनादि के फल निकलते हैं। उसका फल कहने में बड़े-बड़े पण्डितों की भी बुद्धि कुण्ठित हो जाती है। ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य मानव जीवन को सुखी बनाना है।

ताजिक एवं वर्षफल प्रणाली होरा शास्त्र का ही विकसित एवं अभिन्न अंग है। ताजिक शास्त्र में किसी व्यक्ति के नवीन वर्ष और मास में प्रवेश करने की ग्रहस्थिति पर से उसके समस्त वर्ष और मास का फल बताया जाता है। ताजिक पद्धति का श्री गणेश यवनों के कारण ही हुआ है। यवनाचार्यो ने फारसी भाषा में ज्योतिष शास्त्र के अंगभूत वर्ष, मास के फल को नाना प्रकार से व्यक्त करने वाले ताजिक शास्त्र की रचना की थी। मुसलिम संस्कृति के अतिनिकट सम्पर्क होने के कारण रमल और ताजिक इन दो अंगों का उत्तरमध्यकाल (ई० १००१ ई० १६०० तक) में तो नया जन्म हुआ। इस युग में इस विषय पर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ लिखे गये हैं। परन्तु ताजिक शास्त्र में प्रवेश पाने के लिए "ताजिक नीलकण्ठी" के सम्यक् अध्ययन से किसी दैवज्ञ को वर्षफलित ज्योतिष के ग्रन्थों का ज्ञान सरलता से हो जाता है। फलित ज्योतिष द्वारा आजीविका प्राप्ति हेतु उपजीव्य ग्रन्थ "ताजिकनीलकण्ठी" सम्प्रति प्रत्येक भारतीय ज्योर्तिवद के घर में उपलब्ध होती है। ताजिक ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर फारसी एवं अरबी के शब्द मिलते हैं। जिस कारण कुछ लोग अनुमान लगाते हैं कि वर्तमान वर्षफल प्रणाली यूनानी एवं फारसी ग्रन्थों का अनुसरण है। परन्तु ऐसा मानना युक्तिपूर्ण एवं उचित नहीं है। मात्र शब्दों की समानता के आधार पर किसी ग्रन्थ का विदेशी होना मान लेना तर्क संगत नहीं। ताजिक ग्रन्थ के रचयिता श्री नीलकण्ठ तत्कालीन मुगल बादशाहों की राज्यभाषा (अरबी-फारसी आदि) से अवश्य प्रभावित रहे होंगे। जिससे उनकी रचना में फारसी शब्दों का समावेश हो जाना स्वाभाविक था वास्तविकता यह है कि ताजिक शास्त्र यवन साहित्य से आंशिक रूप से अवश्य प्रभावित रहा होगा, परन्तु मूलतः यह एक स्वतन्त्र भारतीय ज्योतिष शास्त्र ही है अतः ताजिक शास्त्र के ग्रन्थों की गवेषणा करते हुए मैंने अपने शोध प्रबन्ध को छः अध्यायों में विभाजित किया है। जिसमें प्रथम अध्याय में आचार्य नीलकण्ठ का परिचय, ताजिकनीलकण्ठी का महत्त्व और उसका काल निर्धारण, भारतीय ज्योतिष की परिभाषा उसका क्रमिक विकास तथा वर्षकुण्डली की उपयोगिता आदि विषयों का वर्णन किया है। शोध-प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में ग्रहों का स्वरूप राशियों का परिचय तथा ग्रहों की दृष्टि पर विचार किया है। सामान्य नियमानुसार, हरेकग्रह अपने स्थान से दशम तृतीय पर १ चरण देखता है, ९, ५ पर २ चरण देखता है, ४, ८ पर ३ चरण देखता है और १, ७ पर उसकी पूर्ण दृष्टि रहती है। किन्तु ताजिक नीलकण्ठी तथा अन्य ताजिक शास्त्र में दृष्टि के चार भेद बताये गये हैं :-

१. प्रत्यक्ष स्नेह दृष्टि २. गुप्त स्नेह दृष्टि ३. गुप्त वैरादृष्टि और ४. प्रत्यक्ष वैरादृष्टि। दृष्टिविचार में किसी भी ग्रह की अपने से नवम-पञ्चम स्थान पर उसकी प्रत्यक्ष स्नेह देनेवाली दृष्टि होती है। तृतीय एवं एकादश स्थान पर गुप्त स्नेह दृष्टि होती है। इसे मित्र दृष्टि कहते हैं। इस प्रकार ताजिक शास्त्रों में दृष्टि का विचार करके फलादेश भी किया जाता है।

तृतीय अध्याय में वर्षकुण्डली निर्माण का सरल तरीका उदाहरण सहित समझाया गया है। ताजिक नीलकण्ठी तथा अन्य ताजिक ग्रन्थों की सहायता लेकर वर्षकुण्डली बनाने की जटिल प्रक्रिया को सरल बनाने की विधि बतलायी गयी है।

चतुर्थ अध्याय में षोडश योगों का विवेचन और फल का वर्णन किया है वर्षकुण्डली में इक्कबाल, इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ आदि षोडश योगों का विशेष महत्त्व है। केवल इन्हीं योगों के आधार पर वर्षफल सम्बन्धि सभी आवश्यक बातें बतायी जा सकती हैं। ऐसे ही वर्ष कुण्डली में सहमों का विशेष महत्त्व है। आचार्य नीलकण्ठ प्रणीत नीलकण्ठी में र्वणत ५० सहमों का शुभाशुभ उल्लेख किया है।

पञ्चम अध्याय में द्वादश भावों का विचार, केन्द्रादि संज्ञाएँ, भावों का शुभाशुभ फलादेश, वर्षेश का फल विचार करते समय विशेष ध्यान देने योग्य बिन्दुओं पर भी विचार किया गया है। सूर्यादि ग्रहों के समान मुन्था भी एक ग्रह है उसका द्वादश भावों में फल, वर्ष-अरिष्टयोग, अरिष्ट भंगयोग, त्रिप्ताकी चक्र अनुसार फल दर्शाया गया है।

कृति के अन्तिम षष्ठ अध्याय में प्रश्न पूछने के प्रकार आदि को पर्याप्त रूप से दिखाया गया है। इसमें ज्योतिष का लक्षण, विद्या, पात्रों का विचार, प्रश्न कर्ता का परिचय, उत्तर देने का प्रकार, भावफल विचार किस भाव से और क्या विचार करना चाहिए, इस क्रम में बारहों भावों के विचारणीय विषय दिये गये हैं। इसी प्रकार अनेक प्रकार से प्रश्नों का उत्तर देने का तरीका तथा प्रश्नों का शुभाशुभ भविष्य विचार का वर्णन किया है।

कृति का लेखन कार्य अपनी सीमाओं में रहकर किया जाने वाला एक विनम्र प्रयास है। किसी प्रकार की पूर्णता का दावा बालहठ हो सकता है। विश्वास है कि सुधीजन उदार दृष्टि से ही प्रस्तुत प्रयास को प्रोत्साहित करेंगे।

विषयानुक्रमणिका

। श्री गणेशाय नमः ।

भाग्य दर्पण

प्रथम अध्याय

ग्रन्थकार

ताजिक नीलकण्ठी के रचयिता श्री नीलकण्ठ इस युग के धुरन्धर ज्योर्तिवद हुए हैं इन्होंने ज्योतिष शास्त्र को अरबी और फारसी भाषा के आधार पर क्रमबद्ध नया रूप दिया तथा अपनी अप्रतिम प्रतिभा के द्वारा ज्योतिष की अनेक नवीन विशेषताओं का समावेश किया है। आचार्य नीलकण्ठ ने अरबी और फ़ारसी भाषा के ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर "ताजिक नीलकण्ठी" नामक ग्रन्थ की रचना की है। ताजिक नीलकण्ठी के रचयिता आचार्य नीलकण्ठ का जन्म समय १६वीं शताब्दी माना जाता है। ये अल्मोड़ा निवासी थे। आचार्य नीलकण्ठ जी के पिता का नाम अनन्त दैवज्ञ और माता का नाम पद्मादेवी था। ये आचार्य बादशाह अकबर के दरबारी थे इन्होंने सन् १५५७ ईस्वी में "ताजिकनीलकण्ठी" नामक ग्रन्थ की रचना की थी। इनके द्वारा रचित ताजिक नीलकण्ठी ग्रन्थ में इनके[1] पितामह आदि के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक कहा है कि विश्व विख्यात गर्ग वंश में "चिन्तामणि" नाम के प्रबल विद्वान् हुए उनमें सभी अच्छे गुण विद्यमान् थे और तात्कालिक पण्डितों में उनका नाम ऊँचा था। बड़े-बड़े विद्वानों को यह बात मान्य है कि शेष भगवान् के कहे हुए महाभाष्य की वे बड़ी सुन्दर व्याख्या करते थे। साहित्य शास्त्र के रस, ध्वनि तथा अलङ्कारों के भी वे पूर्ण विज्ञ और गणित ज्योतिष का भी उनको विशाल ज्ञान था। उनके पुत्र अगणित गुणशाली "अनन्त नामक दैवज्ञ" हुए वे अनन्त गुणों के भण्डार थे। उन्होंने अपने पिता द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का समर्थन करते हुए "कामधेनु सारिणी" पर सुन्दर टीका लिखी, जिसके लिखने का मुख्य उद्देश्य तात्कालीन विद्वानों को उक्त ग्रन्थ का वास्तविक तात्पर्य बतलाकर सन्तुष्ट करना था। उसके अतिरिक्त दूषित मतों का खण्डन करते हुए उन्होंने "जातक पद्धति" नाम के एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना की थी। "अनन्त दैवज्ञ और उनकी पत्नी पद्मा" द्वारा पाण्डित्य आदि सभी गुणों से सम्पन्न "नीलकण्ठ" नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। नीलकण्ठ के भाई का नाम राम दैवज्ञ था जिन्होंने "मुहूर्त्तचिन्तामणि" नामक ग्रन्थ की रचना की है। आचार्य नीलकण्ठ और राम दैवज्ञ के ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि उनके पितामह चिन्तामणि प्रतिष्ठित विद्वान् व्यक्ति थे। आचार्य नीलकण्ठ के वंशक्रम का निर्देश हमें "मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक" ग्रन्थ में भी मिलता है।[2]

---

1. आसीदसीमगुणमण्डितमण्डिताग्र्यो व्याख्याद्भुजङ्गपदवीः श्रुतिवित्सुवृत्तः।
साहित्यरीतिनिपुणो गणितागमज्ञश्चिन्तामणि र्विपुलगर्गकुलावतंसः।।
तदात्मजोऽनन्तगुणोऽस्त्यनन्तो योऽधोक्तदुक्तीः किल् कामधेनुमम्।
सन्तुष्टये जातकपद्धतिं च न्यरूपयद् दुष्टमतं निरस्य।।
पद्माम्बयाऽसावि ततो विपश्चिच्छ्रीनीलकण्ठःश्रुतिशास्त्र निष्ठः।
विद्वच्छिवप्रीतिकरं व्यधात्तं संज्ञाविवेकं सहमावतंसम्।। (ता॰ नी॰ संज्ञा तन्त्र॰ श्लो॰ ३-५)

2. आसीद्धर्मपुरे षडंगनिगमाध्येतृद्विजैर्मण्डिते ज्योर्तिवित्तिलकः फणीन्द्ररचितेभाष्ये कृतातिश्रमः।
तत्तज्जाकसंहितागणितकृन्मान्यो महाभूभुजां तर्कालंकृति वेद वाक्यविलसद्बुद्धिः स चिन्तामणिः।।
ज्योर्तिवद्गणवंदितांघ्रिकमलस्त्सूनुरासीत्कृती नाम्नाऽनन्त इतिप्रथमधिगतो भूमंडलाहस्करः।
यो रम्यां जनिपद्धतिं समकरोद्दुष्टाशयध्वंसिनीं टीकों चोत्तमकामधेनुगणितेऽकार्षीत्सतां प्रीतये।।
तदात्मज उदारधीविबुध नीलकंठानुजो गणेशपदपंकज हृदि निधाय रामाभिधः।
गिरीशनगरे वरे भुजभुजेषु चन्द्रै (१५२२) र्मते शके विनिरमादिमं खलु मुहूर्त्तचिन्तामणिम्।।
(मुहूर्त्तचिन्तामणि" पृ॰ १८८)

चिन्तामणि – (गर्ग गोत्रीय)
|
अनन्त (पत्नी पद्मा)

नीलकण्ठ (शक १४९१)
|
गोविन्द (शक १५०९) — रामदैवज्ञ (शक १५१२ – १५२२)
|
माधव (शक १५५५)

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन द्वारा पता चलता है कि आचार्य नीलकण्ठ" के पितामह "चिन्तामणि", माता "पद्मादेवी", पिता "अनन्तदेवज्ञ" और भाई का नाम "रामदैवज्ञ" है। नीलकण्ठ के पुत्र का नाम "गोविन्द" और पौत्र का नाम माधव है। यह गर्ग गोत्रीय श्री "नीलकण्ठ" जी प्रसिद्ध ज्योर्तिवद हुए हैं आचार्य नीलकण्ठ पितृ भक्ति के साथ-साथ भगवान् गणेश के भक्त थे। उन्होंने अपने ग्रन्थ के आरम्भ में गणपति जी तथा अपने पिता गुरु अनन्त नामक दैवज्ञ को प्रणाम किया है। इन्होंने ईश्वर तथा अपने पिता अनन्त दैवज्ञ के आशीर्वाद से ज्योतिष शास्त्र में महान् ख्याति प्राप्त की है। इन्होंने ज्योतिष शास्त्र को जो कुछ दिया है वह युग-युगों तक इनकी कींत को भासित करता रहेगा।

आचार्य नीलकण्ठ की प्रमुख रचनाएँ :-[1]

१. मिथिला में प्रचलित "जातक पद्धति"

२. "मध्यम संग्रह सिद्धि" ग्रन्थ भी इनकी कृति है।

३. "ताजिक नील कण्ठी"

ताजिक नीलकण्ठी :- आचार्य नीलकण्ठ ने अरबी और फ़ारसी के ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर ताजिक नीलकण्ठी नामक एक फलित ज्योतिष का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बनाया है। विदेशी भाषा के साहित्य से केवल शरीर-भर ग्रहण किया है, आत्मा भारतीय ज्योतिष की ही है। ताजिक शास्त्र का विकास स्वतन्त्र रूप से भारतीय ज्योतिष तत्वों के आधार पर ही किया है।

आचार्यनीलकण्ठ द्वारा रचित ताजिक नीलकण्ठी में प्रतिपादित विषयों पर गौर करने पर इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम सामने तीन विषय आते हैं। १. संज्ञातन्त्र २. वर्षतन्त्र और ३. प्रश्न तन्त्र।

संज्ञातन्त्र :- राशियों एवं ग्रहों का विवेचन तथा इक्कबाल, इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, नक्त, यमया, मणऊ, कब्बूल, गैरिक कब्बूल, खल्लासर, रद्द, दुफलिकुत्थ, दुत्थोत्थादिवीर, तम्बीर, कुत्थ, दुरफ्फ आदि योगों का वर्णन किया है।

२. वर्ष तन्त्र नीलकण्ठी ग्रन्थ में वर्षतन्त्र नामकं अध्याय में आचार्य नीलकण्ठ ने वर्षेश्वर आदि का वर्णन किया है।

प्रश्न तन्त्र :- अन्त में प्रश्न तन्त्र में प्रश्न पूछने के प्रकार आदि को पर्याप्त रूप से दिखाया गया है और प्रश्न द्वारा अनेकों प्रकार से पृच्छकों के फल कहे हैं। इस प्रकार आचार्य नीलकण्ठ का ज्योतिष शास्त्र के लिए बड़ा ही अनुपम योगदान है।

इन्होंने अपने ग्रन्थों में बहुत सरलतम भाषा का प्रयोग किया है। इनकी भाषा सरलमयी एवं प्रभावमयी है। इनकी भाषा को साधारण जन भी पढ़ सकते हैं। इनके ग्रन्थों का विषय सर्व सामान्य गम्भीर और मत-मतान्तरों के विचारों से परिपूर्ण है। वास्तविक बात यह है कि ताजिक एवं जातक ज्योतिष शास्त्र का इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नहीं है। आचार्य नीलकण्ठ द्वारा

1. ताजिक नीलकण्ठी शिवप्रसाद शर्मा हिन्दी व्याख्याकार प्रस्तावना पृ० १६

रचित ग्रन्थों के अध्ययन से आज स्त्री-पुरुष अपना भविष्य जान सकते हैं, इनके द्वारा लिखित "ताजिकनीलकण्ठी" नामक ग्रन्थ एक अनोखी देन है। जातक ज्योतिष ग्रन्थों में फलादेश का एक स्थूल रूपहोता है जो पूर्णतः सत्यता पर घटित नहीं होता है पर आचार्य नीलकण्ठ द्वारा रचित ताजिकनीलकण्ठी इसी समस्या का एक समाधान है। अतः इसके अध्ययन से सम्पूर्ण वर्ष में होने वाली सभी घटनाओं को सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रकार से जाना जा सकता है।

अतः इससे हमें विदित होता है कि ज्योतिष शास्त्र में "आचार्यनीलकण्ठ" जी का स्थान सर्वोत्कृष्ट, अद्वितीय सर्वप्रथम, प्रकाण्ड, विद्वान् और गुप्त रहस्यों को जानने वाले, नवरत्नों में सर्वश्रेष्ठ स्थान है।

ज्योतिष महत्त्व

मानव मात्र को अपना भविष्य जानने की उत्सुकता होती है। भविष्य ज्ञान करने के लिए वेद पुरुष के छः अंग हैं - शिक्षा, कल्प, निरूक्त, व्यकरण, छन्द और ज्योतिष। वेद पुरुष के छह अंगों में ज्योतिष शास्त्र वेद पुरुष का चक्षुस्थानीय नेत्र ही विशेष अंग है :-

वेदचक्षुः किलेदं स्मृतं ज्यौतिषं,
मुख्यता चाङ्गमध्येऽस्य तेनोच्यते।

भारतीय ज्योतिष दो भागों में विभाजित है।

१. फलित ज्योतिष और २. गणित ज्योतिष।

फलित ज्योतिष के विभाग में १. जातक २. ताजिक ३ मुहूर्त्त ४. प्रश्नस्वर ५ संहिता यह पाँच विभाग आते हैं। इन पाँच अंगों के ज्ञान का होना ज्योर्तिवद के लिए परमावश्यक है।

जातक ग्रन्थों में बृहज्जातक, मुहूर्त्त ग्रन्थों में मुहूर्त्त चिन्तामणि और ताजिक ग्रन्थों में ताजिक नीलकण्ठी इन तीन ग्रन्थों के सम्यक अध्ययन से किसी भी दैवज्ञ को फलित ज्योतिष के ग्रन्थों का ज्ञान सरलता से हो जाता है। ये तीनों ग्रन्थ भारतीय ब्राह्मण ज्योतिषियों के घर में सुलभ होते हैं और फलितज्ञों को कण्ठस्थ भी रहते हैं। जन्म से मृत्यु तक के भविष्य का इतिवृत "बृहज्जातक" ग्रन्थ से ज्ञात किया जाता है। आचार्य वराहमिहिर के अनुसार जन्म समय स्पष्ट न प्राप्त होने पर भी प्रश्न शास्त्र के आधार पर कुण्डली रचना द्वारा फलादेश किया जा सकता है। इतना ही नहीं, प्रश्न इष्ट के आधार पर स्पष्ट जातक कुण्डली बनाकर शुभाशुभ भविष्य ज्ञान का तरीका तक बता दिया है।

मुहूर्त्त ग्रन्थों में **"मुहूर्त्तचिन्ता मणि"** नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। जिसकी रचना शक्सम्वत् १५२२ में रामदैवज्ञ ने की थी। इसी के आधार पर विवाह, द्विरागमन, यात्रा, यज्ञोपवीत आदि संस्कारों के मुहूर्त्त निकाले जाते हैं।

ताजिक शब्द का अर्थ ही अरब देश से प्राप्त शास्त्र है। इस शास्त्र में मानव की पूर्ण आयु में प्रत्येक नवीन वर्ष प्रवेश समय का ज्ञानकर तदनुसार वर्ष कुण्डली द्वारा वर्ष पर्यन्त प्रत्येक मास का, प्रत्येक दिन, दिनार्ध से भी सूक्ष्म समय का शुभाशुभ भविष्य ज्ञान प्रतिपादक फलित ज्योतिष का नाम ताजिक ज्योतिष है।[1] यवनाचार्य कृत- जातक विषयक ग्रन्थ के फारसी और अरबी भाषा में लिखा हुआ था। राजा समरसिंह, नीलकण्ठ आदि ने इसे संस्कृत भाषा में अनुवादित किया था। ताजिक पद्धति का श्रीगणेश यवनों के कारण ही हुआ है; इसी को जातक शास्त्र भी कहते हैं।

आचार्य कल्याणवर्ग का कथन है- "जातकमिति प्रसिद्ध यल्लोके तदिह कीर्त्यते होरा"[2] मानव के आजन्म मृत्यु पर्यन्त समग्र जीवन का इदमित्थं भविष्य- ज्ञान प्रतिपादक फलित ज्योतिष का नाम

---

1. हिन्दी विश्वकोश, पृ॰ ३५५-३५६ अंक ९
2. ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ ११

ही जातक ज्योतिष है।

सिद्धान्त, संहिता, एवं होरा के रूप में तीन भागों में विभाजित ज्योतिष शास्त्र के होरा शास्त्रीय भारतीय ज्योतिष के फलित विभाग के अन्तर्गत मानव की पूर्ण आयु में प्रत्येक नूतन वर्ष प्रवेश समय का ज्ञान कर तदनुसार कुण्डली द्वारा वर्ष पर्यन्त प्रत्येक मास-दिन और दिनार्ध से भी सूक्ष्म समय के शुभाशुभ भविष्य-ज्ञान के रूप में ताजिक एक मुख्य विभाग है।[1] इसी विभाग का सर्वप्रमुख ग्रन्थ "दैवज्ञ नीलकण्ठ प्रणीत ताजिक नीलकण्ठी" है। जो आज भी वर्षफल का ज्ञान करने हेतु ज्योतिषियों के लिए परमोपयोगी है। ताजिक कहने से तात्कालिक प्रचलित वर्ष फल का बोध होता है। कहा भी गया है :-

जातकोदितदशाफलं च यत्स्थूलकालफलदंस्फुटं नृणाम्।
तत्र न स्फुरति दैवविन्मतिस्तद् ब्रुवेब्दफलमादिताजिकात्।।

ताजिक नीलकण्ठी का महत्त्व मानव के जीवन में सर्वोपरि है क्योंकि विविध जातक शास्त्र में मनुष्यों के लिए जो शुभाशुभ फल कहे हैं वे बहुत समय बाद फलदायक होते हैं।[2] अर्थात् जातक ग्रन्थों में फलित का एक स्थूल रूप है जैसे माहेश्वरी दशा में शुक्र के २० वर्ष, निसर्गदशा में शनि के ५० वर्ष और उच्चादि बल पूर्ण होने पर चन्द्रमा की १५ वर्ष दशा होती है। ऐसे ही अन्तर्दशा भी ५/६ वर्ष से कम न होगी। क्या समस्त अन्तर्दशा ५।६ वर्ष पर्यन्त एक सा ही फल होगा यह कहना चिंतन का विषय है; इसके समाधान के लिए ब्रह्मादि अष्टादश आचार्यों के उपदेष्टा श्री सूर्य ने ताजिक शास्त्र बनाया।[3] जिससे वर्ष प्रवेश, मास प्रवेश, दिन प्रवेश पर्यन्त गिनने से दिन-दिन पर्यन्त फल ज्योतिषी कह सकते हैं।

जातकादि ग्रन्थों में ग्रहों के वर्षादिसमूह की दशा गणित करने से आती है अर्थात् बहुत विस्तार के साथ गणित करने पर दिनादि के फल निकलते हैं। उसका फल कहने में बड़े-बड़े पण्डितों की भी बुद्धि कुण्ठित हो जाती है परन्तु ताजिक नीलकण्ठी इसी समस्या को हल करती है अर्थात् इसके अध्ययन से सम्पूर्ण वर्ष में होने वाली घटनाओं को सूख्मातिसूक्ष्म जानने के लिए "ताजिकनीलकण्ठी" एक दर्पन (शीशा) है। मानव को ज्योतिष की आवश्यकता कदम-कदम पर होती है। क्योंकि इसके द्वारा भविष्य में होने वाली घटनाओं से व्यक्ति सचेत हो जाता है। ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य मानव को सुखी बनाना है। "ताजिक नीलकण्ठी" के पूर्णज्ञान से मानव की सम्पूर्ण आयु के प्रत्येक नवीन वर्ष में होने वाले शुभाशुभ फल को जाना जाता है। आचार्य नीलकण्ठ ने अरबी और फारसी के ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर "ताजिक नीलकण्ठी" की रचना की है जिसमें तीन तन्त्र हैं :- १. संज्ञातन्त्र, २. वर्षतन्त्र ३. प्रश्न तन्त्र। इन तीनों तन्त्रों का मानव जीवन में विशेष महत्त्व है।

१. संज्ञातन्त्र :- ताजिक नीलकण्ठी में सर्वप्रथम संज्ञा तन्त्र में बारह राशियों का परिचय दिया है। जेसे मीन राशि का स्वरूप[4]- बारहवीं राशि का नाम मीन है। यह राशि चरण रहित, स्त्रीलिङ्गी, कफात्मक, प्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिबली, शब्द हीन है। इसका रंग नेवला के समान भूरा है। इसकी द्विस्वभाव संज्ञा है, जलचर एवं बहुसन्तति युक्त है, वर्ण में ब्राह्मण वर्ण वाली, विषमोदय तथा उत्तर दिशा की स्वामी है। राशियों के स्वरूप पश्चात् राशियों के मित्रामित्र आदि

---

1. ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ ८
2. ताजिक नीलकण्ठी, वर्ष तन्त्र, अ॰ १, श्लो॰ २
3. ता॰ नी॰ भूमिका पं॰ महाधीर शर्मा पृ॰ ७
4. मीनोऽपदःस्त्री कफवारिरात्रिनिः शब्दबभ्रुर्द्वतनुर्जलस्थः।
   स्निग्धोऽतिसङ्गप्रसवोऽपि विप्रः शुभोत्तराशेड् विषमोदयश्च।। (ता॰ नी संज्ञातन्त्र अ॰ १, श्लो॰ १३)

का वर्णन है। इन राशियों की आवश्यकता नष्टवस्तु, चोर आदि पकड़ने में, स्त्री पुरुष मेल में, गुरुशिष्य, स्वामी-सेवक आदि में विचारी जाती है।

वर्षफल निर्माण के लिए गणित (वर्षफल कुण्डली बनाने का तरीका) का विधि को बताया है। ताजिक ग्रन्थों के अनुसार वर्ष कुण्डली में ग्रहों की पारस्परिक दृष्टियों का महत्त्व सर्वोपरि है। प्रत्येक ग्रह की ३, ५, ९, ११वें स्थानों में दृष्टि शुभ होती है। इसे मित्र दृष्टि कहते हैं:- "त्रिपञ्चनवमायेषु स्थितो-मित्रग्रहः भवेत्"। इस प्रकार ये ताजिक शास्त्रों में मित्र-सम और शत्रु ग्रहों का विचार किया जाता है जिसके द्वारा फलादेश कथन में सुविधा होती है।

वर्षफलकुण्डली में षोडश योगों का विशेष महत्त्व है। ये योग क्रमशः- १. इक्कबाल २. इन्दुवार ३. इत्थशाल ४. ईसराफ ५. नक्त ६. यमया ७. मणऊ ८. कब्बूल ९. गैरिकब्बूल १०. खल्लासर ११. रद्द १२. दुफालिकुत्थ १३. दुत्थोत्थदिवीर १४. तम्बीर १५. कुत्थ और १६. दुरफ्फ।[1] इन १६ योगों के आधार पर वर्षफल सम्बन्धित से भी आवश्यक बातें बतायी जा सकती हैं।

वर्ष फल में सहस्रों का विशेष महत्त्व माना जाता है। आचार्य नीलकण्ठ ने ताजिक नीलकण्ठी में ५० सहमों पर विचार किया है। ये इस प्रकार हैं :-

सहम नामावली [2]

१ पुण्य	२ गुरु	३ ज्ञान	४ यश	५ मित्र	६ महात्म्य	७ आशा	८ समर्थता	९ भ्राता	१० गौरव
११ राज्य	१२ पिता	१३ माता	१४ सुत	१५ जीवित	१६ अम्बू	१७ कर्म	१८ मान्द्य	१९ मन्मथ	२० कलि
२१ क्षमा	२२ शास्त्र	२३ बन्धु	२४ बन्दक	२५ मृत्यु	२६ परदेश	२७ धन	२८ अन्यदारा	२९ अन्यकर्म	३० वणिक
३१ कार्यसिद्धि	३२ उद्वाह	३३ सूति	३४ सन्ताप	३५ श्रद्धा	३६ प्रीति	३७ बल	३८ तनु	३९ जाड्य	४० व्यापार
४१ पानीयपतन	४२ रिपु	४३ शौर्य	४४ उपाय	४५ दरिद्रत्व	४६ गौरव	४७ अम्बुपथ	४८ बन्धन	४९ दुहिता	५० अश्व

२. वर्षतन्त्र :- ताजिक नीलकण्ठी में वर्षतन्त्र नामक अध्याय का अत्यधिक महत्त्व है। वर्षफल में जातक के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं का वर्णन न होकर, किसी एक विशेष वर्ष की मुख्य एवं आकस्मिक घटनाओं, स्वास्थ्य, रोगादि का विचार, पदोन्नति; स्त्री एवं सन्तान सुख, परीक्षा में सफलता, व्यापार में उतार-चढ़ाव, स्थानान्तरणादि मुख्य विषयों का समावेश रहता है। इसमें वर्षेश्वर आदि का निर्णय दिया गया है। साथ ही दृष्टियोग के माध्यम से सूर्यादि शनिपर्यन्त ग्रहों का उत्तम, मध्यम और हीन बल के रूप से शुभाशुभ फल का निर्देश किया गया है।

वर्ष कुण्डली में मुन्था[3] एवं मुन्थेश का विशेष महत्त्व माना जाता है। यद्यपि नवग्रहों में इसकी गणना नहीं की जाती, तो भी वर्ष-कुण्डली में यह एक ऐसा मूर्धन्य बिन्दु है जिसके आधार पर वर्ष के

1. प्रागिक्कवालोऽपर इन्दुवारस्तथेत्थशालोऽपर ईसराफः। नक्तं ततः स्याद्यमया मणाऊ कब्बूलतो गैरिकबूलमुक्तम्।। खल्लासरं रद्दमथो दुफालिकुत्थं च दुत्थोत्थदिवीरनामा। तबीरकुत्थौ दुरफश्च योगाः स्युः षोडशैषां कथयामि लक्ष्य।। (ता॰ नी॰ षोडशयोगाध्यायः, श्लो॰ १-२)
2. ता॰ नी॰, संज्ञातन्त्र सहमाध्याय, श्लो॰ १-४
3. वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ५३

शुभाशुभ का निर्णय किया जाता है। अतः ताजिक नीलकण्ठी में वर्षतन्त्र का विशेष महत्त्व है।

३. प्रश्नतन्त्र :- ताजिक शास्त्र में प्रश्नतन्त्र का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि ठीक जन्म समय की जानकारी न होने के कारण प्रायः बहुत से जन्मपत्र अशुद्ध पाये जाते हैं। सामुद्रिक एवं शकुन शास्त्र पर आधारित फलादेश भी एक प्रकार का अनुमान जन्य ज्ञान है, किन्तु इसकी प्रक्रिया उतनी सरल एवं स्पष्ट नहीं है कि साधारण पढ़ा-लिखा मनुष्य इसके द्वारा भविष्य के विषय में निश्चित जानकारी प्राप्त कर सके। केवल प्रश्नशास्त्र ही वह सरलतम मार्ग है, जिसका अबलम्बन कर मनुष्य दैनिक जीवन में सामने आने वाले समस्त प्रश्नों का समाधान खोज सकता है। जिस[1] समय किसी भी कार्य के लाभालाभ, शुभाशुभ जानने की इच्छा हो उस समय का इष्टकाल बनाकर प्रश्न कुण्डली, ग्रहस्पष्ट, भाव स्पष्ट, नवमांश कुण्डली और चलित कुण्डली बनाकर विचार करना चहिए। तात्कालिक प्रश्नों का फल बतलाने में यह शास्त्र अपना विशेष महत्त्व रखता है। इस प्रकार "आचार्य नीलकण्ठ कृत ताजिक नीलकण्ठी" नामक ग्रन्थ का विशेष महत्त्व है। यह ग्रन्थ सर्वांग रूप से पूर्णफलादेश के लिए सर्वोपयोगी सिद्ध है।

ताजिक शास्त्र में प्रवेश पाने के लिए "ताजिक नीलकण्ठी" के सम्यक् अध्ययन से किसी दैवज्ञ को वर्षफलित ज्योतिष के ग्रन्थों का ज्ञान सरलता से हो जाता है। फलित ज्योतिष द्वारा अजीविका प्राप्ति हेतु उपजीव्य ग्रन्थ "ताजिक नीलकण्ठी" सम्प्रति प्रत्येक भारतीय ज्योर्तिवद के घर में उपलब्ध होती है। तदनुसार जीवन के प्रत्येक वर्ष का शुभाशुभ भविष्यफल बताया जाता है। इसमें तीन तन्त्र (संज्ञा, वर्ष एवं प्रश्न) हैं। इसमें विशेष रूप से वर्ष कुण्डली के शुभाशुभ फल को जानने के सरल तरीके तथा इक्बाल, इन्दुवार आदि सोलह योग अरबी ज्योतिष से लिए गये हैं। अतः संक्षेपतः "नीलकण्ठी" ही मात्र एक ऐसा महत्त्वपूर्ण ताजिक ग्रन्थ है जिसके द्वारा वर्ष कुण्डली बनाकर वर्ष में होने वाले फल को जाना जाता है।

ताजिक ज्योतिष और उसका काल

ताजिक से तात्कालिक प्रचलित वर्ष फल का बोध होता है।[2] जैसे :-

जातकोदितदशाफलं च यत्स्थूलकालफलदंस्फूटं नृणाम्।

तत्र न स्फूरति देवविन्मतिस्तद् ब्रुवेब्दफलमादिताजिकात्।।

सिद्धान्त, संहिता एवं होरा के रूप में तीन भागों में विभाजित ज्योतिष शास्त्र के होरा शास्त्रीय भारतीय ज्योतिष के विभाग के अन्तर्गत मानव की पूर्ण आयु में प्रत्येक नूतन वर्षप्रवेश समय का ज्ञानकर तदनुसार कुण्डली द्वारा वर्षपर्यन्त प्रत्येक मास, दिन, और दिनार्ध से भी सूक्ष्म समय के शुभाशुभ भविष्य-ज्ञान के प्रतिपादक फलित ज्योतिष के रूप में ताजिक एक मुख्य विभाग है। इस शास्त्र में किसी व्यक्ति के नवीन वर्ष और मास में प्रवेश करने की ग्रहस्थिति पर से उसके समस्त वर्ष और मास का फल बाताया जाता है। ग्रन्थान्तरों में यह भी लिखा मिलता है[3] कि :-

गर्गाद्यैर्यवनैश्च रोमकमुखैः सत्यादिभिः कीततम्।

शास्त्रं ताजिकसंज्ञकं ....॥

अर्थात्-गर्गाचार्य, यवनाचार्य, सत्याचार्य और रोमक ने जिस फलादेश-सम्बन्धि शास्त्र का

1. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ५, पृ॰ ४२६
2. ताजिक नीलकण्ठी, प्रस्तावना, पृ॰ ८
3. भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री अ॰ १, पृ॰ १०२

निरूपण किया था, वह ताजिक शास्त्र था। अतएव यह स्पष्ट है कि ताजिक शास्त्र का विकास स्वतन्त्र रूप से भारतीय ज्योतिष तत्वों के आधार पर हुआ है। हाँ, यवनों के सम्पर्क से उसमें संशोधन और परिवर्द्धन अवश्य किये गये हैं, पर तो भी उसकी भारतीयता अक्षुण्ण बनी हुई है। स्पष्ट है कि ताजिक एक ज्योतिष विषयक ग्रन्थ।[1] यवनाचार्य कृत जातक विषयक ग्रन्थ जो फारसी और अरबी भाषा में लिखा हुआ था। राजा समर सिंह, नीलकण्ठ आदि ने इसे संस्कृत भाषा में अनुवादित किया था। संस्कृत ताजिक ग्रन्थ में निम्न लिखित विषयों का वर्णन मिलता है :-

प्रधान बारह राशियों में मेष आदि चार राशियाँ यथाक्रम से पित्त, सम और कफ स्वभाव की हैं अर्थात् मेष, सिंह और धनुः इनका पित्त स्वभाव मकर, वृष और कन्या इन तीनों का वायुस्वभाव है, मिथुन, तुला और कुम्भ इन तीनों का समस्वभाव (वायु, पित्त और कफ समता) तथा कर्कट, वृश्चिक और मीन इन तीन राशियों का कफ स्वभाव है। मेष से लगाकर चार-चार राशि क्रम से क्षत्रियादि चार वर्ण हैं, अर्थात् मेष, सिंह और धनु ये तीन राशियाँ क्षत्रिय वर्णः, वृष, कन्या, मकर ये तीन शूद्रवर्ण तथा कर्कट, वृश्चिक और मीन इनका ब्राह्मण वर्ण है। इस प्रकार राशियों का स्वरूप और वर्ण जानकर ज्योतिष शास्त्र ककी गणना करनी चाहिए, इसलिए पहले राशियों का स्वरूप कहा गया है।

वर्ष का शुभाशुभ फल जानने के लिए वर्ष प्रवेश समय निर्णय जन्म समय में रवि राशि के जितने अंशादि में स्थित करता है, पुनः जिस राशि समय वह उसी राशि के उतने ही अंशादि में आगमन करता है, वही समय वर्ष प्रवेश समय है।[2]

रविस्फूट का स्थिर करके भी वर्ष प्रवेश समय का निर्णय किया जा सकता है। बाद में वर्ष प्रवेश, तिथ्यानयन, वर्ष प्रवेश में योगानयन, वर्ष प्रवेश ग्रहस्फूटायन, चन्द्रस्फूटनयन, प्राङ्नत और पश्चोन्नत नयन, तथा लग्नखण्ड, लग्न कुण्डली और भावकुण्डली, पञ्चवर्ग, द्रेष्काण चक्र, उच्च-नीच कथन, लग्नखण्डाचक्र, बलनिरूपण, द्वादशवर्गविवरण, क्षेत्रचक्र, होरा-चक्र, चतुर्थाश चक्र, पञ्चमांश चक्र, षष्ठांश चक्र, सप्तमांश चक्र, अष्टमांश चक्र, नवांश चक्र, दशमांश चक्र, एकादशांश चक्र, द्वादशांश चक्र, भावचिन्ता, वर्षाधिपानयन, ग्रहों का स्वरूप, दृष्टि प्रकरण, दृष्टिसाधन, मैत्रीभाव, नक्तयोग, वर्षप्रवेश, दशानिरूपण, मासप्रवेशनयन, अन्तर्दशानयन, वर्षारिष्ट, विचाररिष्ट भंग, भाव विचार, धनभाव, सहजभाव, चतुर्थभाव, पञ्चमभाव, षष्ठभाव, सप्तमभाव, अष्टमभाव, नवमभाव, दशमभाव, एकादशभाव, द्वादशभाव, और रवि आदि दशा का विषय विशेष रूप से र्वणत है और भी कई विषयों का वर्णन है, जिनके नाम संस्कृत में नहीं जान पड़तेः, अरबी वा फारसी से लिए गये हैं। वे इस प्रकार हैंः- हद्दाविवरण, मुन्थानयन, इक्कबाल, इन्दुवार, इत्थशाल, इशराफ, नक्त, यमय, मणऊ, कम्बूल, गैरकम्बूल, खल्लासर, रद्द, युफाली, दुत्थोत्थवीर, तुम्बीर, कुत्थ, और दुरफ्फ ये पोडश योग, सहम नाम, सहम ५० प्रकार, सहमसाधन, सहमदल, और मुन्था भाव फल। अतः उपरोक्त विवरण से ज्ञात होता है कि इस शास्त्र में किसी व्यक्ति के नवीन वर्ष और मास में प्रवेश करने की ग्रहस्थिति पर से उसके समस्त वर्ष और मास का फल बताया जाता है।

ताजिक ज्योतिष का काल - किसी भी शास्त्र या विज्ञान का सम्यक् अध्ययन करने के लिए उसका इतिहास जानना आवश्यक होता है; क्योंकि उस शास्त्र के इतिहास द्वारा तद्विषयक रहस्य समझ में आ जाता है। ताजिक ज्योतिष का काल जानने के लिये हमें पहले ज्योतिष शास्त्र के काल को छः भागों में विभाजित करना होगा।

---

1. हिन्दी विश्वकोश नगेन्द्र वसु, पृ॰ ३५५-३५६, अंक ९
2. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ १, पृ॰ ४२
   (ख) ताजिक नीलकण्ठी, प्रस्तावना, पृ॰ १३

ज्योतिष शास्त्र का काल विभाजन

१.	अज्ञात युग	—	आदिकाल से १०००० ईसा पूर्व तक युग का अनुमान है।
२.	उदयकाल	—	१०००१ ई॰पू॰ से ५०० ई॰ पूर्व तक।
३.	आदिकाल	—	५०१ ई॰ पू॰ से ५०० ई॰ तक।
४.	पूर्वमध्यकाल	—	५०१ से १००० ई॰ तक।
५.	उत्तर मध्यकाल	—	१००१ से १६०० ई॰ तक।
६.	आधुनिक काल	—	१६०१ ई॰ से अब तक का समय।

इस प्रकार ज्योतिषशास्त्र को छः भागों में विभाजित किया जाता है। आदिमानव की अनन्त जिज्ञासाओं में एक जिज्ञासा कालज्ञान, स्थितिज्ञान और दिशाज्ञान की भी थी, क्योंकि बिना इनका समाधान किये दूसरे कार्य पूर्ण नहीं हो सकते थे। इसी जिज्ञासा के समाधान हेतु मनुष्य ने जब एकनिष्ठ होकर प्रयत्न किया तभी से ज्योतिष का उदय हुआ। मानव जिज्ञासा के इसी सूत्ररूप की व्याख्या, भाष्य और वृत्ति में उत्तरोत्तर ज्योतिष का विकास होता गया और दिन, रात, पक्ष, मास, अयन, वर्ष आदि दैनिक जानकारी के विषयों का ज्ञान मनुष्य को बिना प्रयास ही उपलब्ध होता गया।

उदयकाल (ई॰ पू॰ १०००१ – ई॰ पू॰ ५०० तक) –

ज्योतिष शास्त्र के इस उदययुग की सीमा लगभग वैदिक संहिताओं के व्याख्यास्वरूप रचे गये वैदिक साहित्य के निर्माण के आस-पास बैठती है। पाराशर संहिता के अनुसार ज्योर्तिविद्या का ज्ञान शिष्यपरम्परा द्वारा आगे विश्रुत हुआ। इस ऋषि परम्परा द्वारा प्रर्वतत ज्योर्तिविद्या सम्बन्धी ज्ञान जिन कृतियों के माध्यम से सुरक्षित होकर आगे की पीढ़ियों तक पहुँचा, उन सभी कृतियों का आज अभाव है।

आदिकाल (ई॰ पू॰ ५०१ से – ई॰ ५०० तक) –

इस काल में पहुँचकर ज्योतिष शास्त्र पर्याप्त विकसित हुआ। सर्वप्रथम ज्योतिष की आवश्यकता वैदिक यज्ञों की सम्पन्नता तक ही सीमित थी। बाद में धार्मक, राजनीतिक, सामाजिक और व्यक्तिगत विषयों की व्यवस्थाओं के लिये भी ज्योतिष को एक उपयोगी शास्त्र माना जाने लगा। वेदाङ्ग के रूप में ज्योतिष को मान्य स्थान पहले ही प्राप्त था, किन्तु उसकी सर्वांगीण प्रगति इसी समय हुई। इसी काल में वेदाङ्ग ज्योतिष की रचना हुई। उसका मूर्तरूप ५०० ईसा पूर्व के आस-पास माना जाता है। ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेदसंहिता, अथर्ववेद संहिता- इन तीनों संहिताओं से संबद्ध ज्योतिष के ग्रन्थ हैं। ऋक् संहिता से सम्बन्धित ज्योतिष का ग्रन्थ लभग नाम के ऋषि का संग्रह माना जाता है। इस वेदाङ्ग ज्योतिष में ३६ कारिकायें हैं। यजुर्वेद ज्योतिष में ४९ कारिकायें है, जिनमें पूरी ३० कारिकाएँ ऋक् ज्योतिष की ही हैं, शेष कारिकायें नवीन हैं। अथर्वज्योतिष में १६२ श्लोक संकलित है, जो फलादेश की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण समझे जाते हैं।

पूर्वमध्यकाल (ई॰ ५०१ – १००० तक) –

इस युग में ज्योतिषशास्त्र उन्नति की चरम सीमा पर था। ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्त, संहिता, होरा जैसे ज्योतिष के विभिन्न भेदों का निर्माण और उनकी बारीकियों पर सूक्ष्म विचार होना इसी युग से आरम्भ हुआ था। अंकगणित, बीजगणित और रेखागणितविषयक आश्चर्यकारी सिद्धान्तों के निर्माण का एकमात्र समय यही था। फलित ज्योतिष इस युग की प्रमुख देन है। आचार्य वराहमिहिर इस युग के प्रतिष्ठित विद्वान् हुए हैं जिनका समय लगभग पाँचवीं शताब्दी के दो-चार वर्ष इधर-उधर माना जाता है। इस युग के प्रामाणिक ग्रन्थ- आचार्य ब्रह्मगुप्त (५९८ ई) का ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त, खण्डखाद्यक, आचार्य भुंजाल का लघुमानस। भट्टोत्पल (८८८ ई॰) का प्रश्नज्ञान और आचार्य

चन्द्रसेन का केवलज्ञान होरा तथा आचार्य श्रीपति (दशमी शताब्दी उत्तरार्द्ध) के पाटीगणित आदि इस युग के प्रतिष्ठित एवं प्रामाणिक ग्रन्थ हैं।

उत्तर मध्यकाल (ई॰ १००१ – ई॰ १६०० तक)-

यह युग ज्योतिषशास्त्र का व्याख्या काल कहा जा सकता है। इसी युग के ज्योर्तिवदों ने पृथ्वी को स्थिर और सूर्य को गतिशील सिद्ध किया। भास्कर ने बताया है कि जिस प्रकार अग्नि में उष्णता, जल में शीतलता, चन्द्र में मृदुता, स्वाभाविक है उसी प्रकार पृथ्वी में स्वभावतः स्थिरता है। फलित ज्योतिष में ताजिक ज्योतिष का श्री गणेश यवनों के कारण ही हुआ। मुस्लिम संस्कृति के अति निकट सम्पर्क के कारण रमल और ताजिक इन दो अंगों का नया जन्म माना जायेगा। ताजिक शब्द का अर्थ ही अरबदेश से प्राप्त शास्त्र है। इस युग में इस विषय पर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ लिखे गये हैं। इस शास्त्र में किसी व्यक्ति के नवीन वर्ष और मास में प्रवेश करने की ग्रहस्थिति पर से उसके समस्त वर्ष और मास का फल बताया जाता है। बलभद्रकृत ताजिक ग्रन्थ में कहा है :-

यवनाचार्येण पारसीकभाषायां प्रणीतं ज्योतिः शास्त्रैकदेशरूपं
र्वाषकादिनानाविधफलादेशफलकशास्त्रं ताजिक फलवाच्यं
तदनन्तरभूतैः समरसिंहादिभिः ब्राह्मणैः तदेव शास्त्रं संस्कृत
शब्दोपनिवद्धं ताजिकशब्दवाच्यम्। अत एव तैस्ता
एव इक्कबालादयो यावत्यः संज्ञा उपनिबद्धाः।"

अर्थात् यवनाचार्य ने फारसी भाषा में ज्योतिष शास्त्र के अंगभूत वर्ष, मास के फल को नाना प्रकार से व्यक्त करने वाले ताजिक शास्त्र की रचना की थी। इसके पश्चात् समरसिंह आदि विद्वानों ने संस्कृत भाषा में इस शास्त्र की रचना की और इक्कबाल, इन्दुवार, इशराफ आदि यवनाचार्यों द्वारा प्रतिपादित योगों की संज्ञाएँ ज्यों की त्यों रखीं।

सन् १३०० ई॰ में तेजसिंह नाम के एक प्रकाण्ड ज्योतिषी भारत में हुए थे, उन्होंने वर्ष-प्रवेश-कालीन लग्नकुण्डली द्वारा ग्रहों का फल निकालने की एक प्रणाली निकाली थी। कुछ समय के अनन्तर इस प्रणाली का नाम अविष्कर्ता के नाम पर ताजिक पड़ गया। अतः भारतीय ज्योतिष शास्त्र के इतिहास पर दृष्टिपात करने से अवगत होता है कि ताजिक ज्योतिष का काल १००१ ई॰ से १६०० ई॰ तक जिसे उत्तरमध्यकाल कहते हैं इसी युग में ताजिक ज्योतिष का प्रादुर्भाव हुआ।

ज्योतिष परिभाषा

वेद के छः अंग हैं :-

शिक्षाघ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
ज्योतिषामयनं चक्षुनिरूक्तं श्रौत्रमुच्यते।।
छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ प्रचक्षते।।

अन्यशास्त्रों में विवाद है परन्तु ज्योतिष शास्त्र प्रत्यक्ष शास्त्र है जिसके साक्षी सूर्य और चन्द्रमा हैं :-

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र केवलम्।
प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ।।

सूर्यादि ग्रह, नक्षत्र, काल का ज्ञान कराने वाले शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहते हैं :-

ज्योतिषां सूर्यादिग्रहाणां बोधकं शास्त्रम्।

ज्योतिष शास्त्र का एक नाम ज्योतिः शास्त्र भी है, जिसका अर्थ प्रकाश देने वाला या प्रकाश के सम्बन्ध में बताने वाला शास्त्र है, अर्थात् जिस शास्त्र से संसार का मर्म, जीवन-मरण का रहस्य

और जीवन के सुख-दुःख के सम्बन्ध में पूर्ण प्रकाश मिले वह ज्योतिष शास्त्र है।

वेद के छः अंगों में से सर्वोत्तम अंग नेत्र संज्ञक ज्योतिष है, जिसको प्राचीन ऋषियों ने सिद्धान्त, संहिता और होरा के भेद से तीन स्कन्धों में विभक्त किया है। इसेलिए यह त्रिस्कन्ध ज्योतिष शास्त्र के नाम से जाना जाता है। इनमें से पहला सिद्धान्तस्कन्ध गणित ज्योतिष के नाम से प्रसिद्ध है।

संहितास्कन्ध :- इस स्कन्ध में काल चक्र एवं मुहूर्त्त आदि की विवेचना की गई है।

होरा स्कन्ध :- जातक शास्त्र और ताजिक शास्त्र के भेद से दो प्रकार का होता है। इसी को फलित ज्योतिष कहते हैं। आचार्य वराहमिहिर का बृहज्जातक और आचार्य नीलकण्ठ की ताजिकनीलकण्ठी इस विषय के प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। वेद यज्ञकर्मात्मक हैं। यज्ञ करने के लिए कालज्ञान परमावश्यक है और काल के सम्बन्ध में ज्योतिष शास्त्र ही प्रधान उपाय है।

त्रिस्कन्ध ज्योतिष के बिना समस्त (श्रौत-स्मार्त) वैदिक एवं धर्मशास्त्रोक्त कर्म सिद्ध नहीं हो सकते। इसलिए संसार के उपकारार्थ ब्रह्मा जी ने इसे वेद नेत्र करके कहा इसी हेतु (यज्ञादिवैदिक कर्म करने वाले) द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को इसे यत्न से पढ़ने की आज्ञा है। ज्योतिष वह विद्या व शास्त्र जिससे आकाश में स्थित ग्रह, नक्षत्र आदि की गति, परिमाण, दूरी आदि का निश्चय किया जाता है। नभोमण्डल में स्थित ज्योतिः सम्बन्धी विविध विषयक विद्या को ज्योर्तिविद्या कहते हैं।

ज्योतिषकेतुलोकस्यसर्व्वास्योक्तं शुभाशुभम्।
ज्योतिर्ज्ञानन्तु यो वेद स याति परमां गतिम्।।[1]

अर्थात् ज्योतिष वह शास्त्र है जिस शास्त्र के द्वारा संसार के सम्पूर्ण शुभ एवं अशुभ का ज्ञान होता है एवं जिस शास्त्र के द्वारा परमगति प्राप्त होती है। आकाश में स्थित जितने भी ग्रह और नक्षत्र हैं वे सब ज्योतिष शब्द से व्यवहृत हैं इनके ज्ञान की पद्धति ज्योतिष कहलाता है। नक्षत्र और ग्रहों के योग से काल के अनेक भेद होते हैं। उन भेदों का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के द्वारा ही होता है। अतः ज्योतिष ही कालतन्त्र है। [2]इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र धूमकेतु आदि ज्योतिः पदार्थों का स्वरूप, संचार, परिभ्रमण काल, ग्रह और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओं का निरूपण एवं ग्रह, नक्षत्रों की गति, स्थिति और संचारानुसार शुभाशुभ फलों का कथन किया जाता है। कुछ मनीषियों का अभिमत है कि नभोमण्डल में स्थित ज्योतिः सम्बन्धि विविध विषयक विद्या को ज्योर्तिविद्या कहते हैं; जिस शास्त्र में इस विद्या का सांगोपांग वर्णन रहता है, वह ज्योतिष शास्त्र है। भारतवर्षीय प्राचीन विद्वानों ने ज्योतिष को साधारणतया दो भागों में विभक्त किया हैः- १. फलित ज्योतिष एवं २. सिद्धान्त ज्योतिष

१. फलित ज्योतिष – जिसके द्वारा ग्रहनक्षत्रादि का सञ्चारादि देखकर पृथ्वी के प्राणियों की भावी अवस्था और मंगलामंगल का निर्णय किया जाता है, उसका नाम फलित ज्योतिष है।

२. सिद्धान्त ज्योतिष – जिसके द्वारा स्पष्ट अभ्रान्तरूप से गणना करके ग्रहनक्षत्रादि की गति और संस्थानादि के नियम, उनकी प्रकृति और तज्जन्य फलाफलों का दृढ़ रूप से निरूपण किया जाता है, वह सिद्धान्त ज्योतिष कहलाता है। मालूम होता है कि इसी तरह अंग्रेजों का **Astrology** और **Astronomy** यथाक्रम से फलित और सिद्धान्त ज्योतिष है; सिद्धान्त ज्योतिष को भारतीय आर्यगण

1. बृहद्० ज्यो०, श्लो० १
2. आकाशस्थानिसर्वाणि नक्षत्राणि ग्रहास्तथा। ज्योतिःशब्देन कथ्यन्ते तज्ज्ञानं ज्योतिषं स्मृतम्।।
नक्षत्र गुहयोगेन भेदाः कालस्यनैकथा। तज्ज्ञानं ज्योतिषात् तस्मात् काल तन्त्रमपीरितम्।। बृहद्० ज्यो०, श्लो० १

गणित ज्योतिष भी कहते हैं। जैसे लिखा गया है "द्विविधंगणितमुक्तंव्यक्तरूपम्"[1] अर्थात् गणित वा सिद्धान्त ज्योतिष दो प्रकार का है व्यक्त और अव्यक्त। जिसमें गति की सहायता से ग्रहनक्षत्रादि का आकार, संस्थान, सञ्चार, वेग ग्रहान्तर के साथ परस्पर सम्बन्ध और तज्जन्य फलाफल विशेष रूप से व्यक्त होता है उसे व्यक्त और तदन्यत्र को अव्यक्त कहते हैं। सिद्धान्त शिरोमणि का मत है कि गणित शास्त्र का एक देश मातृ जातक संहिता है, सिद्धान्त जानकर भी जो व्यक्ति अनन्त युक्ति युक्त सिद्धान्त ज्योतिष नहीं जानते हैं, वे चित्रमय राजा अथवा काष्टमय सिंह के समान हैं। भारतीय ज्योतिष को "त्रिस्कन्ध"[2] कहा गया है। यह तीन स्कन्ध हैं :- १. सिद्धान्त २. होरा ३. संहिता। आदिकाल में ज्योतिष के दो ही भेद थे :- गणित सिद्धान्त और फलित होरा। सुदूर प्राचीन काल में केवल ज्योतिः पदार्थों- ग्रह, नक्षत्र तारां आदि के स्वरूप विज्ञान को ही ज्योतिष कहा जाता था। उस समय सैद्धान्तिक गणित का बोध इस शास्त्र से नहीं होता था क्योंकि उस काल में केवल दृष्टि पर्यवेक्षण द्वारा नक्षत्रों का ज्ञान प्राप्त करना ही अभीष्ट था।

आदिकाल[3] के अन्त में ज्योतिष के गणित, सिद्धान्त और फलित ये तीनों भेद स्वतन्त्र रूप में प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहों की गति, स्थिति, अयनांश, पात आदि गणित ज्योतिष के अन्तर्गत तथा शुभाशुभ समय का निर्णय, विधायक, यज्ञ-यागादि कार्यों के लिए समय और स्थान का निर्धारण फलित ज्योतिष का विषय माना जाता था। भारतीय महर्षयों के मतानुसार प्राणी जिस भी ग्रह नक्षत्र के तत्त्व प्रभाव में उत्पन्न होता है अथवा उसका पालन-पोषण होता है और उसमें उसी तत्त्व की प्रधानता होती है ग्रहों की रश्मियों का प्रभाव जगत की समस्त वस्तुओं पर पड़ता है और जो शास्त्र इस प्रभाव का विश्लेषण करता है उसी का नाम है ज्योतिष शास्त्र। ज्योतिषशास्त्र ग्रहों के शुभाशुभ फल और प्रभाव की सूचना देता रहता है। इस प्रकार महर्षयों ने ज्योतिष की उपादेयता सिद्ध कर दी कि मानव जीवन के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े कार्य के पीछे ग्रह, नक्षत्रों का पूरा-पूरा प्रभाव केन्द्रित है। ज्योतिष के बिना मानव जीवन अधूरा है। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार किया गया कार्य हमेशा सफल होता है। ज्योतिषशास्त्र के पाँच अंग हैं।[4] इन पाँच अंगों के आधार पर ही ज्योतिष हमेशा केन्द्रित रहता है। पाँच अंग इस प्रकार हैं:- १. होरा २. सिद्धान्त, ३. संहिता ४. प्रश्नशास्त्र और ५. शकुन शास्त्र। यदि विराट् पंचस्कन्धात्मक परिभाषा का विश्लेषण किया जाये तो आज का मनोविज्ञान, जीवविज्ञान, पदार्थविज्ञान, रसायनविज्ञान, चिकित्सा शास्त्र इत्यादि भी इसी के अन्तर्भूत हो जाते हैं।

ज्योतिष का विकास

शास्त्रों में "ज्योतिष" शब्द का अर्थ है- वह विद्या जिसके द्वारा सौरमण्डल में स्थित ग्रह, नक्षत्र आदि की गति, परिणाम, दूरी आदि का ज्ञान प्राप्त किया जाता है, इसे ज्योतिष कहते हैं। ज्योतिष उस विद्या का नाम भी हे जिसके द्वारा नभ में स्थित ग्रहों के माध्यम द्वारा नभ में स्थित ग्रहों के माध्यम से भूत, भविष्य तथा वर्तमान का सारा वृत्तांत जाना जा सकता है। ज्योतिष के द्वारा हम ग्रहों की दूरी का भी पता लगा सकते हैं।

अन्य शास्त्रों की भाँति ज्योतिष शास्त्र भी अनेकों अवस्थाओं को पार कर कालक्रम से इस अवस्था को प्राप्त हुआ है। यह निःसन्देह है कि, वैदिक-ज्योतिष तत्त्व का विकास ऋषि-मुनियों के

1. सिद्धान्त-शिरोमणि गोर्लाध्याय।
2. सिद्धान्त संहिता रूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
   वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिः शास्त्रं कल्पवम्।। "तिलक चन्द तिलक", पृ॰ १३
3. ई॰ पू॰ ५०० - ई॰ ५०० तक का समय।
4. (क) पञ्चस्कन्धमिदं शास्त्रं होरा गणित संहिता। केरलिः शकुनञ्चैव ...।। (शब्द कल्पद्रुम॰ पृ॰ ५५०)
   (ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १८

समय से लेकर कालक्रमानुसार बढ़ता गया है; और विभिन्न प्रकारों से इसकी उपयोगिता की परीक्षा करके वशिष्ठ, नारद, कश्यप, गर्ग आदि के संहिता ग्रन्थों की सृष्टि हुई। जिज्ञासा अर्थात् जानने की इच्छा मानव की मौलिक प्रवृत्तियों में से एक है। जैसे खाना चाहता हूँ, पीना चाहता हूँ, खेलना चाहता हूँ, अपने को प्रकट करना चाहता हूँ- ऐसा चाहता हुआ मानव अपने और दूसरों को भी समझना चाहता है। जिज्ञासा ही ज्ञान का अविष्कार करती है। इस तरह ग्रह- नक्षत्रविषयक जिज्ञासा ही ज्योतिष शास्त्र के अविष्कार का कारण है। अन्य व्यवहारों में तो पशु के समान मानव भी अनादिकाल से दिन-रात अयन के सम्बन्ध में कुछ न कुछ जानता ही था। मानव सूर्य, चन्द्रमा, तारा, ग्रह, नक्षत्र आदि को देखकर भले ही उनकी विशेषता न जानता रहा हो, फिर भी उनकी स्थिति को लेकर कुछ न कुछ चिन्तन अवश्य ही किया करता था। वही चिन्तन वैदिक संहिताओं में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। बाद में नवीन-नवीन अनुभव की समायोजना लौकिक ग्रन्थों में भी की गई है। इसलिए ज्योतिष शास्त्र का विकास पाँच अवस्थाओं में विभक्त दिखाई पड़ता है जैसे – अज्ञात काल, आदिकाल, पूर्वमध्य काल, उत्तरमध्य काल और आधुनिक काल।[1]

भारतीयों की जब दृष्टि सूर्य और चन्द्रमा पर पड़ी थी, उन्होंने इनसे भयभीत होकर इन्हें दैवत्व रूप में मान लिया था। वेदों में कई जगह नक्षत्र, सूर्य एवं चन्द्रमा के स्तुतिपरक मन्त्र आये हैं। निश्चय ही प्रागैतिहासिक भारतीय मानव ने इनके रहस्य से प्रभावित होकर ही इन्हें दैवत्व रूप माना है। ब्राह्मण और आरण्यकों के समय में यह परिभाषा और विकसित हुई तथा उस काल में नक्षत्रों की आकृति, स्वरूप गुण एवं प्रभाव का परिज्ञान प्राप्त करना ज्योतिष माना जाने लगा।[2]

आदिकाल (ई० पू० ५०० – ई० से ५०० तक का समय) में नक्षत्रों के शुभाशुभ फलानुसार कार्यों का विवेचन तथा ऋतु, अयन, दिनमान, लग्न आदि के शुभाशुभनुसार विधायक कार्यों को करने का ज्ञान प्राप्त करना भी इस शास्त्र की परिभाषा में परिगणित हो गया। वेदांग-ज्योतिष आदि ग्रन्थों के प्रणयन तक ज्योतिष के गणित और फलित ये दो भेद स्पष्ट नहीं हुए थे। यह परिभाषा यहीं सीमित नहीं रही, ज्ञानोन्नति के साथ-साथ विकसित हुई राशि और ग्रहों के स्वरूप, रंग, दिशा, तत्त्व, धातु इत्यादि के विवेचन भी इसके अन्तर्गत आ गये। आदिकाल के अन्त में ज्योतिष के गणित, सिद्धान्त और फलित ये तीनों भेद स्वतन्त्र रूप से प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहों की गति, स्थिति, अयनांश, पात आदि गणित ज्योतिष के अन्तर्गत तथा शुभाशुभ समय का निर्णय, विधायक, यज्ञ-यागादि कार्यों के करने के लिए समय और स्थान का निर्धारण फलित ज्योतिष को विषय माना जाता था। पूर्वमध्य काल[3] की अन्तिम शताब्दियों में सिद्धान्त ज्योतिष के स्वरूप में भी विकास हुआ, लेकिन खगोलिय निरीक्षण और ग्रहवेध की परिपाटी के कम हो जाने से गणित के कल्पनाजाल द्वारा ही ग्रहों के स्थानों का निश्चय करना सिद्धान्त ज्योतिष के अन्तर्गत आ गया तथा पूर्वकाल के प्रारम्भ में ज्योतिष का अर्थ स्कन्धत्रय-होरा, सिद्धान्त और संहिता के रूप में ग्रहण किया गया। परन्तु इस युग के मध्य में इस परिभाषा ने और भी संशोधन देखे और आगे जाकर यह पंचरूपात्मक होरा, गणित या सिद्धान्त, संहिता, प्रश्न और शकुन रूप हो गयी।

होरा –

अहोरात्र शब्द के आदिम वर्ण 'अ' और अन्तिम वर्ण 'त्र' का लोप हो जाने से होरा शब्द होता है, जिसका ज्ञान होने से जातक के शुभाशुभ फल का ज्ञान होता है **"अहोरात्र"** का अर्थ है रात-दिन,

---

1. ताजिक नीलकण्ठी, प्रस्तावना (डॉ. शिव प्रसाद शर्मा)
2. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ० १८
3. ई० ५०१ – ई० १००० तक का समय।

अतः रात-दिन को लघु शब्द में स्पष्ट करने को 'होरा' शब्द प्रचलित किया गया। इस शास्त्र के अन्तर्गत जन्म कुण्डली के द्वादश भाव, उसमें स्थित ग्रह तथा उन ग्रहों की परस्पर दृष्टि आदि का विवेचन इसी शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। होरा शास्त्र पर अनेक स्वतन्त्र रचनाएँ हैं। समय-समय पर इस शास्त्र में अनेक संशोधन और परिवर्तन हुए हैं। श्रीपति एवं श्रीधर आदि ९वीं, १०वीं और ११वीं शती के होरा शास्त्रकारों ने ग्रहबल, ग्रहवर्ग, विंशोत्तरी आदि दशाओं के फलों को इस शास्त्र की परिभाषा के अन्तर्गत मान लिया है।[1]

गणित या सिद्धान्त –

गणित के नियम तथा काल गणना, चन्द्रमा की गति और इसके अतिरिक्त ग्रहगतियों का सूक्ष्म रूप से निरूपण ग्रह नक्षत्र की स्थिति तथा अक्षांश, रेखांश के आधार उनकी ही स्थिति को ज्ञात करने को "सिद्धान्त" का नाम दिया गया है। इसके अन्तर्गत ग्रहों का सही प्रकार से अध्ययन करना और उनकी गति का सही प्रकार से अध्ययन करना और उनकी गति की स्थिति को स्पष्ट करना मुख्य रूप से रहा। धीरे-धीरे इसमें सूक्ष्मता आती गई ग्रहों की गति तथा उनकी विलोम गति का भली प्रकार से निरूपण करना संभव हो सका।

प्राचील काल में इसकी परिभाषा केवल सिद्धान्त गणित के रूप में मानी जाती थी। आदिकाल में अंकगणित द्वारा ही अहर्गण-मान साधकर ग्रहों का आनयन करना इस शास्त्र का प्रधान प्रतिपाद्य विषय था। पूर्वमध्यकाल में इसकी यह परिभाषा ज्यों की त्यों अवस्थित रही। उत्तरमध्यकाल[2] में इसने अनेक पहलुओं के पल्लों को पकड़ा और इस युग के आरम्भ से वासनात्मक होती हुई भी व्यक्तगणित को अपनाती रही, इसलिए इस काल में गणित के सिद्धान्त, तन्त्र व करण तीन भेद प्रकट हुए।

संहिता –

संहिता[3] स्कन्ध में ग्रहचार (ग्रहों की गति), वर्ष लक्षण, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त्त, उपग्रह, सूर्य-संक्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रमा और तारा का बल, सम्पूर्ण लग्नों तथा ऋतुदर्शन का विचार, गर्भाधान, पुंसवन आदि विषयों का विचार किया जाता है। ज्योतिष का यह भी एक प्रमुख अंग है इसके अन्तर्गत भूमि-शोधन, ग्रह-प्रारम्भ, गृह प्रवेश, जलाशय-निर्माण आदि मांगलिक कार्यों के मुहूर्त्त आदि का विवेचन किया जाता है। मध्ययुग में संहिता की परिभाषा होरा, गणित और शकुन के मिश्रित रूप में मानी गयी है। ९वीं शताब्दी में कर्मकाण्ड भी इसकी परिभाषा के अन्तर्गत आ गया। संहिताशास्त्र का जन्म आदिकाल में हुआ और इसकी परिभाषा का क्षेत्र उत्तरोत्तर बढ़ता चला गया। १२वीं और १३वीं शताब्दी में इस शास्त्र की परिभाषा इतनी विकसित हुई है कि जीवन से सम्बद्ध सभी उपयोगी लौकिक विषय इसके अन्तर्गत आ गये हैं।

प्रश्न शास्त्र :-

यह तत्काल फल बतलाने वाला शास्त्र है। यह ज्योतिष का मुख्य अंग है यह एक ऐसा विषय है जो जन्म पत्र या वर्ष-पत्र से अपना पृथक् अस्तित्व रखता है। इसमें प्रश्नकर्ता के उच्चारित अक्षरों पर से फल का प्रतिपादन किया जाता है। ईस्वी सन् पाँचवी और छठी शताब्दी में केवल पृच्छक के उच्चारित अक्षरों पर से फल बतलाना ही प्रश्न शास्त्र के अन्तर्गत था; लेकिन आगे जाकर इस शास्त्र

---

1. अहोरात्र्याद्यन्तलोपाद्धोरेति प्रोच्यते बुधैः।
   तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्म फलं वदेत।। (बृहद्॰ पा॰ हो॰, अ॰ २, पृ॰ २, श्लो॰ २)
2. ई॰ १००१ – ई॰ १६०० तक का समय।
3. संहिता शास्त्ररूपं च ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्। तिथिवासरनक्षत्रयोगतिथ्यर्द्धसंज्ञकाः।।
   मुहूर्त्तोपग्रहाः सूर्यसंक्रान्तिगोचरःक्रमात्। चन्द्रताराबलं चैव सर्वलग्नार्तवाह्वयः।।
   कल्याण (संक्षिप्त नारद पुराण श्लो॰ ८, ९ पृ॰ सं॰ २०५)

में तीन सिद्धान्तों का प्रवेश हुआ- **१. प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, २. प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और ३. स्वरविज्ञान-सिद्धान्त।** दिगम्बर जैन ग्रन्थों की अधिकतर रचनाएँ दक्षिण-भारत में होने के कारण प्रायः सभी प्रश्न ग्रन्थ प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त को लेकर निर्मित हुए हैं। अन्वेषण करने पर स्पष्ट मालूम होता है कि केवल ज्ञान प्रश्न चूड़ामणि, चन्द्रोन्मीलन-प्रश्न, आयज्ञानतिलक, अर्हच्चूड़ामणि आदि ग्रन्थों के आधार पर ही आधुनिक काल में केरल प्रश्नशास्त्र की रचना हुई है। वराहमिहिर के पुत्र पृथयशा ने इस शास्त्र को पूर्णता तक पहुँचाया और इसके अन्तर्गत उन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की तथा यह स्पष्ट किया कि प्रश्न शास्त्र के आधार पर भी व्यक्ति का भविष्यफल स्पष्ट किया जा सकता है, जो कि अपने आप में पूर्णतया प्रामाणिक होता है। ९वीं, १०वीं और ११वीं शती में इस सिद्धान्त को विकसित होने के लिये पूर्ण अवसर मिला है, जिससे अनेक स्वतन्त्र रचनाएँ भी इस विषय पर लिखी गयी हैं। इस शास्त्र की परिभाषा में उत्तर मध्यकाल तक अनेक संशोधन और परिवर्द्धन होते रहे हैं तथा मध्यकाल के बाद इस शास्त्र में काफी शोध हुआ और विद्वानों ने इस शास्त्र को पूर्णता तक पहुँचाया।[1]

शकुन :-

यह ज्योतिष का पाँचवा अंग है और इसे निमित्त शास्त्र भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत पशु-पक्षियों की भाषा का अध्ययन किया जाता है और यह देखा जाता है कि व्यक्ति के घर से निकलते समय बाहर कोई पशु या पक्षी किस दिशा की ओर है। किस प्रकार से बोलना है आदि का अध्ययन इसी शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। ईस्वी सन् की १०वीं, ११वीं और १२वीं शतियों में इस विषय पर स्वतन्त्र विचार होना लग गया था, जिससे इसने अलग शास्त्र का रूप प्राप्त कर लिया। वि॰सं॰ १०८९ में आचार्य दुर्गदेव ने अरिष्ट विषय को भी शकुनशास्त्र में मिला दिया था। आगे चलकर इस शास्त्र की परिभाषा और भी अधिक विकसित हुई और इसकी विषय सीमा में प्रत्येक कार्य के पूर्व में होने वाले शुभाशुभों का ज्ञान प्राप्त करना भी आ गया। संक्षेपतः हम कह सकते हैं कि जिज्ञासा के समाधान हेतु ज्योर्तिवदों ने जब एकनिष्ठ होकर प्रयत्न किया तभी से ज्योतिषशास्त्र का विकास होता गया और दिन, रात, पक्ष, मास, अयन, वर्ष आदि दैनिक जानकारी के विषयों का ज्ञान मनुष्य को बिना प्रयास ही उपलब्ध होता गया।

मानव जीवन और ज्योतिष[2]

मनुष्य स्वभाव से ही अन्वेषक प्राणी है। वह सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के साथ अपने जीवन का तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। उसकी इसी प्रवृत्ति ने ज्योतिम के साथ जीवन का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बाध्य किया है। फलतः वह अपने जीवन के भीतर भारतीय ज्योतिष तत्त्वों का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता है। इसी कारण वह शास्त्रीय एवं व्यवहारिक ज्ञान द्वारा प्राप्त अनुभव को, ज्योतिष की कसौटी पर कसकर देखना चाहता है कि ज्योतिष का जीवन में क्या स्थान है?

समस्त भारतीय ज्ञान की पृष्ठभूमि दर्शनशास्त्र है, यही कारण है कि भारत अन्य प्रकार के ज्ञान को दार्शनिक मापदण्ड द्वारा मापता है। इसी अटल सिद्धान्त के अनुसार वह ज्योतिष को भी इसी दृष्टिकोण से देखता है। भारतीय दर्शन के अनुसार आत्मा अमर है, इसका कभी नाश नहीं होता है, केवल यह कर्मों के अनादि प्रवाह के कारण पर्यायों को बदला सकता है। अध्यात्मशास्त्र का कथन है कि दृश्य सृष्टि केवल नाम रूप या कर्म ही नहीं है, किन्तु इस नामरूपात्मक आवरण के लिए

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ २, पृ॰ २०
   (ख) प्रश्न ज्योतिष विज्ञान।
2. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ २७
1. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३९

आधारभूत एक अरूपी, स्वतन्त्र और अविनाशी आत्मतत्त्व है तथा प्राणीमात्र के शरीर में रहने वाला यह तत्त्व नित्य एवं चैतन्य है, केवल कर्मबन्ध के कारण वह परतन्त्र और विनाशिक दिखलाई पड़ता है। वैदिक दर्शनों में कर्म के संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण ये तीन भेद माने गये हैं। किसी के द्वारा वर्तमान क्षण तक किया गया जो कर्म है – चाहे वह इस जन्म में किया गया हो या पूर्व जन्मों में, वह सब संचित कहलाता है। अनेक जन्म-जन्मान्तरों के संचित कर्मों को एक साथ भोगना सम्भव नहीं है; क्योंकि इनसे मिलने वाले परिणाम स्वरूप फल परस्पर-विरोधी होते हैं; उन्हें एक के बाद एक कर भोगना पड़ता है। संचित में से जितने कर्मों के फल को पहले भोगना शुरु होता है, उतने ही को प्रारब्ध कहते हैं। तात्पर्य यह है कि संचित अर्थात् समस्त जन्म-जन्मान्तर के कर्मों के संग्रह में से एक छोटे भेद को प्रारब्ध कहते हैं। यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि समस्त संचित का नाम प्रारब्ध नहीं, बल्कि जितने भाग का भोगना आरम्भ हो गया है, प्रारब्ध है। जो कर्म अभी हो रहा है या जो अभी किया जा रहा है, वह क्रियमान है। इस प्रकार इन तीन तरह के कर्मों के कारण आत्मा अनेक जन्मों-पर्यायों को धारण कर संस्कार अर्जन करता चला आ रहा है।

आत्मा के साथ अनादि कालीन कर्म-प्रवाह के कारण लिंगशरीर कार्मण शरीर और भौतिक स्थूल शरीर का सम्बन्ध करता है। जब एक स्थान से आत्मा इस भौतिक शरीर का त्याग करता है तो लिंग शरीर उसे अन्य स्थूल शरीर की प्राप्ति में सहायक होता है। इस स्थूल भौतिक शरीर में विशेषता यह है कि इसमें प्रवेश करते ही आत्मा जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों की निश्चित स्मृति को खो देता है। इसलिए ज्योर्तिविदों ने प्राकृतिक ज्योतिष के आधार पर कहा है कि यह आत्मा मनुष्य के वर्तमान स्थूल शरीर में रहते हुए भी एक से अधिक जगत के साथ सम्बन्ध रखता है। मनोवैज्ञानिकों ने आत्मा की इस क्रिया की विशेषता के कारण ही मनुष्य के व्यक्तितत्त्व को बाह्य और आन्तरिक दो भागों में विभक्त किया है।

बाह्य व्यक्तित्व :-

वह है जिसने इस भौतिक शरीर के रूप में अवतार लिया है। इस आत्मा की चैतन्य क्रिया की विशेषता के कारण अपने पूर्वजन्म के निश्चित प्रकार के विचार, भाव और क्रियाओं की ओर झुकाव प्राप्त करता है तथा इस जीवन के अनुभवों के द्वारा इस व्यक्तित्व के विकास में वृद्धि होती है और यह धीरे-धीरे विकसित होकर आन्तरिक व्यक्तित्व में मिलने का प्रयास करता है।

आन्तरिक व्यक्तित्व :-

वह है जो अनेक बाह्य व्यक्तित्वों की स्मृतियों, अनुभवों और प्रवृत्तियों का संश्लेषण अपने में रखता है।

बाह्य ओर आन्तरिक इन दोनों व्यक्तित्त्व सम्बन्धि चेतना के ज्योतिष में विचार, अनुभव और क्रिया ये तीन रूप माने गये हैं। बाह्य व्यक्तित्व के तीन रूप आन्तरिक व्यक्तित्व के इन तीनों रूपों से सम्बद्व हैं, पर आन्तरिक व्यक्तित्व के तीन रूप अपनी निजी विशेषता और शक्ति रखते हैं, जिससे मनुष्य के भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक इन तीनों जगतों का संचालन होता है। मनुष्य को अन्तःकरण इन तीनों व्यक्तित्व के उक्त तीनों रूपों को मिलाने का कार्य करता है।

मानव जीवन के बाह्य व्यक्तित्व के तीन रूप और आन्तरिक व्यक्तित्व के तीन रूप तथा एक अन्तःकरण इन सात के प्रतीक सौरजगत में रहने वाले ७ ग्रह माने जाते हैं। उपर्युक्त सात (७) रूप सब प्राणियों के एक से नहीं होते हैं, क्योंकि जन्म-जन्मान्तरों के संचित, प्रारब्ध कर्म विभिन्न प्रकार के हैं, अतः प्रतीक रूप ग्रह अपने-अपने प्रतिरूप्य के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार की बातें प्रकट करते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक प्रत्येक वस्तु की आन्तरिक रचना सौरमण्डल से मिलती-जुलती

बतलाते हैं। उन्होंने परमाणु के सम्बन्ध में अन्वेषण करते हुए बताया है कि प्रत्येक पदार्थ की सूक्ष्म रचना का आधार परमाणु हैं। तात्पर्य यह है कि वास्तविक सौर जगत् में सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहों के भ्रमण करने में जो नियम कार्य करते हैं; वे ही नियम प्राणीमात्र के शरीर में स्थित सौरजगत् के ग्रहों के भ्रमण करने में भी काम करते हैं। अतः आकाश स्थित ग्रह शरीर स्थित ग्रहों के प्रतीक हैं। इस प्रकार ब्राह्य के तीन रूप और आन्तरिक व्यक्तित्व के तीन रूप तथा एक अन्तःकरण इन सातों प्रतिरूप्यों के प्रतीक ग्रह निम्न प्रकार है :-

१. सर्वप्रथम बृहस्पति के विषम में बाह्य व्यक्तित्व के प्रथम रूप विचार का प्रतीक है। यह प्राणी मात्र के शरीर का प्रतिनिधित्व करता है और शरीर सञ्चालन के लिए रक्त प्रधान करता है। अनात्म दृष्टिकोण से बृहस्पति व्यापार, कार्य व स्थान और व्यक्ति जिनका सम्बन्ध धर्म और कानून से है- मन्दिर, पुजारी, मन्त्री, न्यायालय, न्यायाधीश, शिक्षासंस्थाएँ, विश्वविद्यालय, जनता के उत्सव, दान, सहानुभूति आदि का प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मा :-

इस दृष्टिकोण से यह ग्रह विचार मनोभाव और इन दोनों का मिश्रण, उदारता, अच्छा स्वभाव, सौन्दर्य प्रेम, शक्ति, भक्ति एवं ज्ञान-ज्योतिष-तन्त्र-मन्त्र-विचार शक्ति आदि का प्रतिनिधित्व करता है।

शरीर :-

इस दृष्टि से पैर, जंघा, जिगर, पाचनक्रिया, रक्त एवं नसों का प्रतिनिधित्व करता है।

२. बाह्य व्यक्तित्व के द्वितीय रूप का प्रतीक मंगल है। अनात्मिक दृष्टि से- यह सैनिक डॉक्टर, प्रोफेसर, इंजीनियर, रसायनिक, नाई, लुहार, मशीन का कार्य करने वाला, मकान बनाने वाला, खेल एवं खेल के सामान आदि का प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मिक दृष्टि से :-

यह साहस, बहादुरी, दृढ़ता, आत्मविश्वास, क्रोध लड़ाकू - प्रवृत्ति एवं प्रभुत्व प्रभृति भावों और विचारों का प्रतिनिधि है।

शारीरिक दृष्टि से :-

यह बाहरी सिर-खोपड़ी, नाक एवं गाल का प्रतीक है। इसके द्वारा संक्रामक रोग, घाव, खरोंच, ऑप्रेशन, रक्तदोष, दर्द आदि अभिव्यक्त होते हैं। बाह्य व्यक्तितत्व के तृतीय रूप का प्रतीक चन्द्रमा है यह स्थूल शरीर गत चेतना के ऊपर प्रभाव डालता है तथा मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले परिवर्तनशील भावों का प्रतिनिधि है।

अनात्मिक दृष्टि से :-

यह श्वेत रंग, जहाज, बन्दरगाह, मछली, जल, तरलपदार्थ, नर्स, दासी, भोजन रजत एवं बैंगनी रंग के पदार्थों पर प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टि से :-

यह संवेदन, आन्तरिक इच्छा, उतावलापन, भावना, विशेषतः घरेलू जीवन की भावना, कल्पना, सतर्कता एवं लाभेच्छा पर प्रभाव डालता है।

शारीरिक दृष्टि से :-

इसका पेट, पाचन शक्ति, आँतें, स्तन, गर्भाशय, योनिस्थान, आँख एवं नारी के समस्त गुप्तांगों पर प्रभाव पड़ता है।

४. आन्तरिक व्यक्तित्व के प्रथम रूप का प्रतीक शुक्र है, यह पूर्णबली हो तो निःस्वार्थ प्रेम

के साथ प्राणीमात्र के प्रति भ्रातृत्व-भावना का विकास करता है।
अनात्मिक दृष्टि से- इसका सुन्दर वस्तुएं, आभूषण, आनन्ददायक चीजें-नाच, गान, वाद्य, सजावट की चीज़ें, कलात्मक वस्तुएं एवं भोगोपभोग की सामग्री आदि पर प्रभाव पड़ता है।
आत्मिक दृष्टि से- स्नेह, सौन्दर्य-ज्ञान, आराम, आनन्द, विशेष प्रेम, स्वच्छता, परख-बुद्धि, कार्यक्षमता आदि पर इसका प्रभाव पड़ता है।
शारीरिक दृष्टि से- गला, गुरदा, आकृति, वर्ण, केश यहाँ तक सौन्दर्य से सम्बन्ध है, साधारणतः शरीर संचालित करने वाले अंग एवं लिंग आदि पर इसका प्रभाव पड़ता है।

५. आन्तरिक व्यक्तित्व के द्वितीय रूप का प्रतिनिधि बुध है। यह प्रधान रूप से आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है। इस प्रतीक में विशेषता यह रहती है कि गम्भीरतापूर्वक किये गये विचारों का विश्लेषण बड़ी खूबी से करता है।

आत्मिक दृष्टि से- स्कूल, कॉलेज का शिक्षण, विज्ञान, वैज्ञानिक और साहित्यिक स्थान, प्रकाशन स्थान, सम्पादक, लेखक, प्रकाशक, पोस्ट-मास्टर, व्यापारी एवं बुद्धिजीवियों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है।

आत्मिक दृष्टि से- यह समझ, स्मरण शक्ति, खण्डन-मण्डन शक्ति, सूक्ष्म कलाओं की उत्पादन शक्ति एवं तर्कणा आदि का प्रतिनिधि है।
शारीरिक दृष्टि से - यह मस्तिष्क जिह्वा, वाणी, हाथ तथा कलापूर्ण कार्योत्पादक अंगों पर प्रभाव डालता है।

६. आन्तरिक व्यक्तित्व के तृतीय रूप का प्रतिनिधि सूर्य है। यह पूर्ण दैवत्त्व की चेतना का प्रतीक है, मनुष्य के विकास में सहायक तीनों प्रकार की चेतनाओं के सन्तुलित रूप का यह प्रतीक है। यह पूर्ण इच्छा-शक्ति, ज्ञानशक्ति, सदाचार, विश्राम, शान्ति, जीवन की उन्नति एवं विकास का द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टि से- जो व्यक्ति दूसरों पर अपना प्रभाव रखते हों ऐसे राजा, मन्त्री, सेनापति, सरदार, आविष्कारक, पुरातत्त्ववेत्ता आदि पर अपना प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टि से- यह प्रभुता, ऐश्वर्य, प्रेम, उदारता, महत्त्वाकांक्षा, आत्मविश्वास, आत्मनियन्त्रण, विचार और भावनाओं का सन्तुलन एवं सहृदयता का प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टि से- हृदय रक्त-संचालन, नेत्र, रक्त-वाहक, छोटी नसें, दाँत, कान आदि अंगों का प्रतिनिधि है।

७. अन्तःकरण का प्रतीक शनि है। यह बाह्य चेतना और आन्तरिक चेतना को मिलाने में पुल का काम करता है। यह प्रधान रूप से 'अहं' भावना का प्रतीक होता हुआ भी व्यक्तिगत जीवन के विचार, इच्छा और कार्यों के सन्तुलन का भी प्रतीक है। उच्च स्थान अर्थात् तुला राशि का शनि विचार और भावों की समानता का द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टि से- कृषक, हलवाहक, पत्रवाहक, चरवाहा, कुम्हार, माली, मठाधीश, कृपण, पुलिस अफसर, उपवास करने वाले साधु-संन्यासी आदि तथा पहाड़ीस्थान, चट्टानी प्रदेश, बंजर भूमि, गुफा, श्मशानघाट, आदि का प्रतिनिधि है।

आत्मिक दृष्टि से- तात्त्विक ज्ञान, नायकत्व, मननशीलता, आत्मसंयम, धैर्य, दृढ़ता, गम्भीरता, चरित्रशुद्धि, सतर्कता, विचार शीलता एवं कार्यक्षमता का प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टि से- हड्डियाँ, नीचे दाँत, बड़ी आँते एवं मांसपेशियों पर प्रभाव डालता है।
उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सौर-जगत् के सातग्रह मानव जीवन के विभिन्न अवयवों के प्रतीक

हैं। इन सातों की क्रिया-फल द्वारा ही जीवन का संचालन होता है। इन सातों की क्रियाफल द्वारा ही जीवन का संचालन होता है। प्रधान सूर्य और चन्द्रमा बौद्धिक और शारीरिक उन्नति-अवनति के प्रतीक माने गये हैं। पूर्वोक्त जीवन के विभिन्न अवयवों के प्रतीक ग्रहों का क्रम दोनों व्यक्तित्वों के तृतीय, द्वितीय, प्रथम और अन्तःकरण के प्रतीकों के अनुसार है अर्थात् आन्तरिक व्यक्तित्व के तृतीय रूप का प्रतीक सूर्य, बाह्य व्यक्तित्व के तृतीय रूप का प्रतीक चन्द्रमा, बाह्य व्यक्तित्व द्वितीय रूप का प्रतीक मंगल, आन्तरिक व्यक्तित्व के द्वितीय रूप का प्रतीक बुध, बाह्य व्यक्तित्व के प्रथम रूप का प्रतीक बृहस्पति, आन्तरिक व्यक्तित्व के प्रथम का प्रतीक शुक्र एवं अन्तःकरण का प्रतीक शनि, इस प्रकार सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि इन सातों ग्रहों का क्रम सिद्ध होता है। अतः स्पष्ट है कि मानव जीवन के साथ ग्रहों का अभिन्न सम्बन्ध है।

वर्ष कुण्डली की उपयोगिता :-

मनुष्य के समस्त कार्य ज्योतिष के द्वारा ही चलते हैं। व्यवहार के लिए अत्यन्त उपयोगी दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, अयन, ऋतु, वर्ष एवं उत्सव तिथि आदि का ज्ञान इसी शास्त्र से होता है। सामान्य कृषक वर्ग से प्रारम्भकर अतिविशिष्ट मनीषियों तक को पग-पग पर इस शास्त्र की आवश्यकता पड़ती है।

हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा ज्योतिषशास्त्र को तीन भागों में विभाजित किया गया था। सिद्धान्त, संहिता और होरा। (स्कन्धत्रयात्मकंज्योतिःशास्त्रम्।) "होरा" के अन्तर्गत जातक के जन्म-कालीन ग्रह नक्षत्रों के योगवश उसके जीवन सम्बन्धी मुख्य घटनाओं, स्वभाव, स्वरूप, सुख-दुःख, आयुनिर्णय, भाग्य जीविका आदि का वर्णन रहता है। ताजिक एवं वर्षफल प्रणाली होरा शास्त्र का ही विकसित एवं अभिन्न अंग है।

विविध जातक शास्त्र में मनुष्यों के लिए जो शुभाशुभ फल कहे गये हैं, वे बहुत समय बाद फलदायक होते हैं। अर्थात् जातक ज्योतिष में फलित का एक स्थूल रूप है जो पूर्णतः सत्यता पर घटित नहीं होता है, परन्तु वर्ष कुण्डली के द्वारा मानव की पूर्ण आयु में प्रत्येक नूतन वर्षप्रवेश समय का ज्ञान कर तदनुसार कुण्डली द्वारा वर्षपर्यन्त प्रत्येक मास, दिन, और दिनार्ध से भी सूक्ष्म समय के शुभाशुभ भविष्य का ज्ञान वर्ष कुण्डली द्वारा होता है। वर्ष कुण्डली जन्म कुण्डली का ही एक हिस्सा है जिसमें जातक के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं का वर्णन न होकर, किसी एक विशेष वर्ष की मुख्य एवं आकस्मिक घटनाओं, स्वास्थ्य-रोगादि का विचार, पदोन्नति, स्त्री एवं सन्तान सुख, परीक्षा में सफलता, व्यापार में उतार-चढ़ाव, स्थानान्तरणादि बहुत से विषयों का समावेश इसमें रहता है। मानव के जीवन में वर्षकुण्डली की उपयोगिता सर्वोपरि है। सम्पूर्ण वर्ष में होने वाली घटनाओं से व्यक्ति सचेत हो जाता है। अतः आज के समय में इस विषय की अत्याधिक आवश्यकता है क्योंकि आज का मानव अल्प समय में ही बहुत कुछ करने का विचार करता है। उसे शीघ्रतिशीघ्र अपना मनेच्छित प्रश्नों का उत्तर चाहिए वह तभी सम्भव है जब वर्षकुण्डली का ज्ञान हो। यदि मनुष्य इस विद्या का ज्ञान प्राप्त कर ले तो निःसन्देह ही ज्योतिष मनुष्य का सबसे बड़ा हितकारी मित्र बन सकता है।

ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य मानव जीवन को सुखी बनाना है इसके लिए कदम-कदम पर इस शास्त्र की आवश्यकता पड़ती है। व्यक्ति के जन्मदिन पर वर्षकुण्डली का विशेष महत्त्व होता है। प्राचीन काल से ही किसी जातक के जन्मदिन पर वर्ष कुण्डली में पड़े ग्रहों के आधार पर ग्रहों के शुभाशुभ प्रभाव एवं उसकी पूजा-दानादि के विधान को विशेष महत्त्व दिया जाता रहा है। वर्ष कुण्डली में जातक के वर्ष-विशेष के सम्बन्ध में शुभाशुभ विशिष्ट विषयों या घटनाओं का सूक्ष्म निरूपण किया जा सकता है। जैसे- आगामी नव वर्ष की मुख्यं आकस्मिक घटनाएँ, धनलाभ/हानि, स्वास्थ्य

रोग, पदोन्नति, स्थानन्तरण, विद्या में सफलता/असफलता, कार्य सिद्धि, विवाह, सन्तानादि सुख, व्यापार या सर्वस योग, विदेशयात्रा आदि योगों का विशेषतया विचार किया जाता है। यदि वर्ष कुण्डली में ग्रहों की स्थिति एवं मुन्था या मुन्थेश ग्रह की स्थिति अशुभ हो, तो जन्मदिन पर अनिष्ट ग्रहों की पूजा, जप एवं दानादि करने से ग्रह–जनित दोषों की शान्ति हो जाती है तथा वर्ष में सम्भावित विघ्न/बाधाएँ दूर होकर अभीष्ट कार्यों में सफलता एवं सिद्धि प्राप्त होती है। वर्षकुण्डली की सबसे बड़ी उपयोगिता यही है कि समस्त मानव–जीवन के प्रत्येक और परोक्ष रहस्यों का विवेचन करती है और प्रतीकों द्वारा समस्त जीवन को प्रत्यक्ष रूप में उस प्रकार प्रकट करती है जिस प्रकार दीपक अन्धकार में रखी हुई वस्तु को दिखलाता है। यदि मनुष्य को इसका ज्ञान नहीं हो तो उसका अधिकांश श्रम निष्फल ही चला जाता है। मानव का व्यावहारिक कोई भी कार्य इस शास्त्र के ज्ञान बिना नहीं चल सकता है। इससे हमें ज्ञात होता है कि वर्षकुण्डली का ज्ञान हमारे लिए अध्याधिक उपयोगी है।

द्वितीय अध्याय

ग्रह एवं राशि स्वरूप

सूर्यादि नव ग्रहों का स्वरूप निम्नलिखित समझें —

सूर्य का स्वरूप :-

पुरुष जाति, क्षत्रिय वर्ण, चतुष्कोण आकार, मध्याह्न के समय बलवान, पूर्व दिशा का स्वामी, सुवर्ण धातु का स्वामी, गज आदि चौपाये जीवों का मालिक, क्रूर प्रकृति, सत्तोगुणी, स्थिर स्वभाव, तिक्तरसप्रिय, भूमिचारी, पित्त प्रकृति, वृद्ध पाटल वर्ण और वनचारी है।[1]

चन्द्रमा का स्वरूप :-

गौर वर्ण, स्त्रीजाति, वैश्य वर्ण, गीली भूमि में विचरने वाला, तपस्वी, अपराह्न में प्रबल, जलचारी, गैरिक धातु का स्वामी, सतोगुणी, वायव्य दिशा का अधिपति, कफ प्रकृति, सर्पों का अधिष्ठाता, चाँदी धातु का प्रिय, अतिशय पुष्ट शरीर, युवा, लवण रस प्रधान, शुभ ग्रह और शुभ्र वर्ण का होता है।[2]

मंगल का स्वरूप :-

तमो गुण युक्त, पित्त प्रकृति वाला, तरुण, उग्रस्वभाव, वनचारी, मध्याह्न समय प्रबल होने वाला, गैरिकादि धातु का स्वामी, चौपाये पशुओं का अधिपति, पुरुष जाति, दक्षिण दिशा का स्वामी, राजा, चतुष्कोणाकृति वाला, स्वर्णकारों का स्वामी, जली हुई भूमि पर विचरने वाला, कुछ अंगों से हीन, कटु रस का प्रिय, ताम्र अथवा रक्त वर्ण की वस्तुओं का स्वामी होता है।[3]

बुध का स्वरूप :-

स्त्री जाति, ग्रामचारी, शुभ ग्रह, नील वर्ण, द्रव्य का स्वामी, वर्तुलाकार, बालक,

---

1. (क) सूर्यो नृपो ना चतुरस्रमध्यं दिनेन्द्रदिकस्वर्णचतुष्पदोऽग्रः।
सत्त्वं स्थिरस्तिक्तपशुक्षितिस्तु पित्तं जरन्पाटलमूलवन्यः॥ (ता॰नी॰ अ॰ १, पृ॰ ५३)
(ख) मधुपिङ्खलदृक्चतुरस्रतनुः पित्तप्रकृतिः सविताल्पकचः। (बृहज्जातके पृ॰ ४४)
(ग) पिङ्गलनेत्रोरक्तश्यामवर्णः पित्तप्रकृतिः समगात्रपतापीअल्परोमवागर्कः॥ (जातकतत्त्व, पृ॰ २७)
(घ) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ २२९
(ङ) पूर्वः सत्त्वं नृपस्तातः क्षत्रं ग्रीष्मोऽरूणश्चलः।
मधुदृक् पैत्तिको धातुः शुक्रः सूक्ष्मकचोरविः॥ (ता॰नी॰ प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ २५)
2. (क) वैश्यः शशी स्त्री जलभूस्तपस्वी गौरोऽपराह्णम्बुगधातुसत्त्वम्।
वायव्यदिकश्लेष्मभुजङ्गरूप्यस्थूलो युवा क्षारशुभः तिताभः॥ (ता॰नी॰ अ॰ १, पृ॰ ५३)
(ख) शुक्लः कृशो वर्तुलाङ्गो मेधावीमृदुवाक् शुभदृग् विवेकीवातकफात्मा चन्द्रः। (जातकतत्त्व, पृ॰ २०)
(ग) तनुंवृत्ततनुर्बहुवातकफः प्राज्ञश्च शशी मृदुवाकशुभदृक। (बृहज्जातके॰ अ॰ २)
(घ) कफौ वर्षा मृदुर्माता पयो गौरश्च सात्त्विकः।
जीवो वैश्यश्चरो वृत्तो मारूतांशो विभुः सुदृक्॥ (ता॰नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ २६)
(ङ) भारतीय ज्योतिष प्रवेश (डॉ॰ पुरुषोत्तम शर्मा)
3. (क) भौमः स्तमः पित्तयुवोऽग्रवन्यो मध्याह्न धातुर्यमदिक्चतुष्पात्।
ना राट्चतुष्कोणसुवर्णकारो दग्धाऽववीव्यंगकटुश्चरक्तः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ५३)
(ख) दुष्टदृक् तरुणः कृशमध्यो रक्तसिताङ्गः।
पैत्तिकश्चलधीरूदारप्रताप्यारः॥ (जातक तत्त्व, पृ॰ २१)
(ग) क्रूरदक्तरुणर्मूतदारः पैत्तिकः सुचपलः कृशमध्यः। (बृह॰ अ॰ २)
(घ) ग्रीष्मः क्षत्रतमो रक्तो याम्यः सेनाग्रणीश्चरः।
युवा धातुश्च पिङ्गाक्षः कूरः पित्तं शिखीकुजः॥ (ता॰नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ २७)

इष्टकोच्चसंचारी, समधातु, श्मशानगामी, उत्तर दिशा का स्वामी, प्रातः प्रभात काल में प्रबल, शूद्र जाति का, पक्षी, कटु–तिक्त रसों का भोक्ता, रजोगुण प्रधान बुध ग्रह है।[1]

बृहस्पति का स्वरूप :–

प्रभात बेला में बली, पुरुष जाति का, शुभग्रह, ईशान दिशा का स्वामी, ब्राह्मण वर्ण, पीला रंग, मनुष्यों (दो पैर वालों) का स्वामी, ग्रामचारी, वर्तुलाकार, वाणिज्य कर्म करने वाला, मधुर रस प्रिय, मन्दिर का अधिपति, वृद्धग्रह, शोभन रत्न स्वामी, समधातु और सतोगुण प्रधान गुरु ग्रह होता है।[2]

शुक्र का स्वरूप :–

शुभ ग्रह, स्त्री जाति, जलचारी, अपराह्न काल में बलवान, शुभ्रवर्ण, कफ प्रकृति, रूप्यद्रव्य का स्वामी, ब्राह्मण वर्ण, आग्नेय दिशा का स्वामी, तरुण अवस्था, क्रीड़ा रस प्रधान, जलभूमिचारी, स्निग्ध रूचि और मनुष्यों का स्वामी होता है।[3]

शनि का स्वरूप :–

पक्षी जाति, वायु चारी, सायंकाल में बली, शूद्र जाति, स्त्रीग्रह, सम धातु, स्थिर स्वभाव वाला, पापग्रह, पश्चिम दिशा का स्वामी, कषाय रसप्रिय, अत्यन्त वृद्धग्रह, उत्कर भूमि का स्वामी, दीर्घ आकृति वाला, नील वर्ण का और लौह धातु का अधिपति शनि ग्रह होता है।[4]

राहु ग्रह का स्वरूप :–

राहु ग्रह की निषाद जाति, सर्प आकृति, अस्थि (हड्डी) का स्वामी, नैर्ऋत्य दिशा का मालिक

---

1. (क) ग्राम्यः शुभो नीलसुवर्णवृत्तः शिश्विष्टकोच्चः समधातु जीवः।
   श्मशानयोषोत्तरदिक्प्रभातं शूद्रः खगः सर्वरसो रजो ज्ञः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ५३)
   (ख) क्लिष्टवाक् सततहास्यरूचिर्ज्ञः पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च॥ (बृहज्जाके॰ पृ॰ ४५)
   (ग) भारतीय ज्योतिष प्रवेश डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा, पृ॰ ४८
   (घ) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, पृ॰ २३०
   (ङ) शरदीशो हरिदीर्घः षण्ढो मूलं कुमारकः।
   लिपिज्ञ उत्तरेशश्च शूद्रः सौम्यस्त्रिधातुकः॥ (ता॰नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ २८)
2. (क) गुरुः प्रभाते नृशुभेशदिग्द्विजः पीतो द्विपादग्राम्य सुवृत्तजीवः।
   वाणिज्यमाधुर्यसुरालयेशो वृद्धः सुरत्नं समधातुसत्त्वम्॥ (ता॰नी॰ अ॰ १, पृ॰ ५५)
   (ख) स्थूलो गौराङ्गः कफात्मा पिङ्गाक्षमूर्धन्यकचाभियुक्तो विद्वान् गुरुः। (जातकतत्त्वम्, पृ॰ २१)
   (ग) भारतीय ज्योतिष प्रवेश (डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा)
   (ङ) सत्त्वं पीतो हिमः श्लेष्मा दीर्घो मन्त्री द्विजो नरः।
   मध्यैशानी कफी जीवो मधुपिङ्गलदृक् तथा॥ (ता॰नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ २९)
3. (क) शुक्रः शुभः स्त्री जलगोऽपराह्नः श्वेतः कफी रूप्यरजोऽम्लमूलम्।
   विप्रोऽग्निदिङ् मध्यवयो रतीशो जलावनिस्निग्धरूर्चिद्विपाच्च॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ५५)
   (ख) भृगुः सुखी कान्तवपुः सुलोचनः कफानिलात्मासितक्रमूर्द्धजः। (बृहज्जातके, अ॰ २)
   (ग) भारतीय ज्योतिष प्रवेश (डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा)
   (घ) शुक्रः शान्तो द्विजो नारी वैश्यो मन्त्री चरः सितः।
   आग्नेयी दिक् कफश्चाम्लः कुटिलासितमूर्धजः॥ (ता॰ नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ ३०)
4. (क) शनिविहंगोऽनिलवन्यसन्ध्याशूद्रांगना धातुसमः स्थिरश्च।
   क्रूरः प्रतीची तुवरोऽतिवृद्धोत्करक्षितीट् दीर्घसुनीललोहम्॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ५६)
   (ख) क्रियाश्चपटुः कातराक्षः कृष्णः कृशदीर्घाङ्गोबृहद्दन्तो
   रूक्षनूरूहो वातात्मा कठिनावाक् निन्द्यो मन्दः॥ (जातकतत्त्व, पृ॰ २१)
   (ग) कृष्णस्तमः कृशो वृद्धः षण्ठो मूलान्त्यजोऽलसः।
   शिशिरः पवनः क्रूरः पश्चिमो वातुलः शनिः॥ (ता॰नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ ३१)

और शनि ग्रह के समान स्वरूप वाला होता है।[1]

केतु का स्वरूप :-

केतु का स्वरूप शनि और राहु के समान ही है। केतु ग्रह में थोड़ा सा अन्तर यह है कि केतु शिखावान् और अनेक रूपधारी है।[2]

अथ ग्रहाणां वर्णादिचक्र[3]

ग्रह	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	राहु	केतु
वर्ण	क्षत्रिय	वैश्य	क्षत्रिय	शूद्र	ब्राह्मण	ब्राह्मण	शूद्र निषाद	निषाद	निषाद
पु/स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	स्त्री	पुरुष	पुरुष
आकार	चतुरस्त्र	वर्तुल	चतुष्कोण	वृत्त	वृत्त	दीर्घ	दीर्घ	दीर्घ	पुच्छ
समय	मध्याह्न	अपराह्न	मध्याह्न	प्रभात	प्रभांत	अपराह्न	अपराह्न	अपराह्न	अपराह्न
दिशा	पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैत्र्रत्य	नैत्र्रत्य
धातु	सुवर्ण	रौप्य	सुवर्ण	कास्यादि	हरिसु वर्ण	रौप्य	लोह	लोह	लोह
पाद	चतुष्पाद	बहु,पाद	चतुष्पाद	द्विपाद	द्विवाद	द्विपाद	भुजंग	अपाद	अपाद
सौम्यादि	उग्र	सौम्य	उग्र	शुभ	शुभ	शुभ	पाप	पाप	पाप
गुण	सत्त्व	सत्त्व	तम	रज	सत्त्व	रज	तम	तम	तम
चरादि	स्थिर	चर	चर	द्विस्वभाव	स्थिर	चर	पक्षीस्थिर	चर	पक्षी
रस	तिक्त	क्षार	कटुक	सर्वरस	मधुर	अम्ल	कषाय	कषाय	कषाय
भूमि	पशु भूमिचारी	जलभू	दग्ध	श्मशान	वाणि सुराल	जलभू	उत्कर	ऊषर	ऊषर
अवस्था	वृद्ध	युवा	युवा	युवा	वृद्ध	युवा	अति वृद्ध	वृद्ध	वृद्ध
वर्ण	पाटल	गौर	रक्त	नील	पीत	श्वेत	नील	नील	धूम्र
धात्वादि	मूल	जीव	धातु	जीव	जीव	मूल	मूल	धातु	धातु
स्थान	वन	जल	वन	ग्राम	ग्राम	ग्राम	सन्धि	विवर	विवर

1. (क) राहुस्वरूपं शनिवन्निषादजातिर्भुजङ्गोऽस्थिपनैर्ऋतीशः। (ता॰नी॰, पृ॰ ५६)
   (ख) राहुर्धातुः शिखी मूलं शेषमन्यच्च मन्दवत्। (ता॰न॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ ३२)
2. (क) केतुः शिखी तद्वदनेकरूपः खगस्वरूपात्फलमूह्यमित्थम्॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ५६)
   (ख) राहुर्धातुः शिखी मूलं शेषमन्यच्च मन्दवत्।
   चिन्तनीयं विलग्नेशात्केन्द्रगाद्वा बलाधिकात्॥ (ता॰नी॰, प्रश्न तन्त्र, श्लो॰ ३२)
3. ताजिक नीलकण्ठी, पं. महीधर शर्मा, पृ॰ ३७

ग्रहों की उच्चनीच राशियाँ :-

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि ग्रहों की क्रमशः मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन एवं तुला राशियाँ उच्च स्थान हैं।

विशेष रूप से मेष राशि का सूर्य १० अंश पर उच्च, वृष राशि का चन्द्रमा ३ अंश पर उच्च, मकर राशि का मंगल २८ अंश तक उच्च, कन्या राशि का बुध १५ अंश पर उच्च, कर्क का गुरु ५ अंश, मीन का शुक्र २७ अंश और तुला राशि का शनि २० अंशों में उच्च होता है। इनसे सप्तम राशियाँ सूर्यादिग्रहों की नीच संज्ञक राशियाँ होती हैं। जैसे सूर्य मेष राशि के १० अंश तक उच्च होता है और उसकी सातवीं राशि तुला के १० अंश नीच होंगे।

चन्द्रमा वृश्चिक राशि के ३ अंश, मंगल कर्क राशि में २८ अंश, मीन राशि का बुध १५ अंश, मकर राशि का बृहस्पति ०५ अंश, कन्या राशि का शुक्र २७ अंश और मेष राशि पर शनि २० अंश का परम नीच होता है।[1]

ग्रहों की उच्चनीच राशियाँ							
ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उच्च	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला
नीच	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०

ग्रह दृष्टि विचार :-

ताजिक ग्रन्थों के अनुसार वर्ष कुण्डली में ग्रहों की पारस्परिक दृष्टियाँ ४ प्रकार की मानी गई हैं।

(१) पहली दृष्टि प्रत्यक्ष स्नेहकारिणी,

(२) दूसरी गुप्त-मित्र दृष्टि,

(३) तीसरी गुप्त शत्रु दृष्टि,

(४) प्रत्यक्ष-शत्रु दृष्टि।

ग्रहों की मित्र दृष्टि :-

(१) प्रत्यक्ष मित्र दृष्टि :- वर्ष कुण्डली में प्रत्येक ग्रह अपने भाव से पाँचवें-नौवें (५-९) स्थान को प्रत्यक्ष मित्र दृष्टि से देखता है। वह दृष्टि बलवती और प्रत्यक्ष प्रीतिदायिनी है। एक चरण से हीन दृष्टि अर्थात् ४५ कलात्मिका दृष्टि सब कार्य साधन कराने वाली मेलापक अर्थात् परस्पर प्रेम कराने वाली दृष्टि कही गई है। शुभ-दृष्टि प्राप्त ग्रह की मुद्दा दशा में अभीष्ट कार्य में सिद्धि होती है तथा उच्च लोगों के साथ सम्पर्क बनते हैं।

---

1. (क) सूर्यादितुङ्गर्क्षमजोक्षनक्र कन्या कुलीरान्त्यतुलालवैः स्युः।
दिग्भिर्गुणैरष्टयमैः शरैकैर्भूसङ्ख्यैर्नखसम्मितैश्च तत्सप्तमं नीचाः॥(ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ३१, ३२)

(ख) क्रमादजभगोमृगावलाकुलीरतिमितौलिराशयः।
हरेः स्युरथ तुङ्गसंज्ञितास्तदद्रिमित राशयो नताः॥ (ज्योर्तिवदाभरणम्-ग्रहगोचर प्रकरणे, श्लो॰ ३४)

(ग) मेषो वृषोऽथ मकरः कन्या कर्को झषस्तुला।
अर्कादुच्चं ततो नीचं सप्तमे परिकीर्तितम्॥ (भाव प्रकाश)

(घ) अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथिन्द्रियांशैस्त्रिनवक विंशतिभिश्च तेऽस्तनी चाः॥ (बृहत्जातके, अ॰ १, श्लो॰ १३)

(ङ) मेषगोमृगकन्याकर्कान्त्य तुलाः सूर्याद्युच्चभानितत्सप्तमानि नीचभानि दशमतृतीयाष्टाविंशपंच-
दशपंचमसप्तविंशविंशशांशा अर्कादीनां परमोच्च नीचभागाः॥ (जातकतत्त्वम्, श्लो॰ ३८)

(२) गुप्त-मित्र दृष्टि - किसी ग्रह का अपने स्थान से तीसरे तथा ग्यारहवे स्थान में स्थित ग्रह को देखता है, वह दृष्टि गुप्त स्नेह कराने वाली और कार्य साधने वाली होती है। तृतीय स्थान पर वह तीन अंशों से न्यून अर्थात् ४० कला की मानी गई है और एकादश स्थान पर यही दृष्टि केवल षष्ठांश पर अर्थात् १० कला मात्र रह जाती है। इस दृष्टि के प्रभाव से वर्ष में किसी मित्र, सहयोगी या बन्धु की सहायता से कार्य में सफलता प्राप्त होती है। प्रत्यक्ष की अपेक्षा इसका फल कुछ अल्प होता है।[1]

ग्रहों की शत्रु दृष्टि -

(३) गुप्त शत्रु दृष्टि - अपने स्थान पर बैठा हुआ ग्रह जब चौथे या दशमे (४-१०) स्थान पर दृष्टि करता है, तो उसे गुप्त शत्रु दृष्टि कहते हैं। यह दृष्टि केवल १५ कला की होती है। इस दृष्टि के प्रभाव स्वरूप बनते कार्यों में बार-बार विघ्न पड़ते हैं तथा बाहर से सज्जन दिखाई देने वाले लोग गुप्त रूप से शत्रु की भाँति हानि पहुँचाने की चेष्टा करेंगे। गुप्त मानसिक चिन्ताएँ अधिक होंगी।

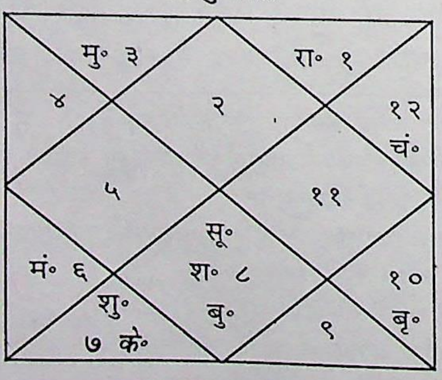
(४) प्रत्यक्ष शत्रु दृष्टि - सप्तम तथा प्रथम (७-१) स्थान में बैठे हुए ग्रह यदि एक दूसरे को देखते हों या एक ही स्थान में हों तो वह दृष्टि प्रत्यक्ष वैर कराने वाली अर्थात् प्रत्यक्ष शत्रु दृष्टि कहलाती है। ये तीनों ही प्रकार की दृष्टियाँ दुष्ट फल देने वाली क्षुत् नाम की सभी कार्यों का विनाश करने वाली और कलह-कारिणी मानी जाती हैं। ये तीनों ही प्रकार की दृष्टियाँ १२ अंश के अन्तर्गत मानी जाती हैं। तात्पर्य यह है कि जब दृश्य और द्रष्टा में केवल १२ अंश का अन्तर रह जाता यानी जब वह दीप्तांश से न्यून रहता है, तभी उपर्युक्त फल घटता है। अन्यथा नहीं घटता।[2]

वर्ष कुण्डली में दृष्टि चक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
प्रत्यक्ष मित्र	५-९	५-९	५-९	५-९	५-९	५-९	५-९
गुप्त मित्र	३-११	३-११	३-११	३-११	३-११	३-११	३-११
प्रत्यक्ष शत्रु	१-७	१-७	१-७	१-७	१-७	१-७	१-७
गुप्त शत्रु	४-१०	४-१०	४-१०	४-१०	४-१०	४-१०	४-१०

उदाहरण :-

वर्षकुण्डली



1. (ता०नी०, अ० १, श्लो० ७७), (वर्षफल विचार (डॉ. उमेशपुरी "ज्ञानेश्वर", पृ० ८१)
2. (क) (ता०नी०, अ० १, श्लो० ७८) (ख) वर्षफल चन्द्रिका (पं. पन्नालाल ज्योतिषी)

प्रस्तुत वर्ष कुण्डली में पाँचवें भाव स्थित मंगल लग्न भाव को नवम प्रत्यक्ष मित्र दृष्टि से देखता है तथा गुरु भी लग्न को ५-९ मित्र दृष्टि से देख रहा है। सूर्य व शनि दोनों लग्न भाव पर सातवीं अर्थात् प्रत्यक्ष शत्रु दृष्टि से देख रहे हैं। जिससे वर्ष में जातक का स्वास्थ्य कुछ खराब रहेगा।

सप्तम भाव में सूर्य-शनि परस्पर विरोधी ग्रह पड़े हैं। जिससे पत्नी के साथ कलह-क्लेश रहने के संकेत हैं। परन्तु मंगल व गुरु की ३-११ गुप्त मैत्री दृष्टि के प्रभाव स्वरूप कलह के बावजूद आपसी सम्बन्ध बने रहेंगे। भाग्य स्थान में लाभेश गुरु यद्यपि नीच राशि का है परन्तु उस पर मंगल की प्रत्यक्ष मैत्री तथा चन्द्र की ११वीं एवं सूर्य-शनि व बुध की गुप्त मैत्री दृष्टियाँ जातक के भाग्य में वृद्धि कारक एक लाभकारक रहेंगी। शुक्र व राहु की क्रमश ४ । १० दृष्टियाँ विघ्न कारक रहेंगी।[1]

ग्रहों के दीप्तांश

जन्म कुण्डली में दीप्तादि अवस्था को प्राप्त ग्रह प्रायः उत्तम फल प्रदान करता है। (जो ग्रह अपनी उच्च या मूल त्रिकोण के राश्यंश में हो वह दीप्तवस्था में प्राप्त कहलाता है)[2]

परन्तु वर्ष कुण्डली में सूर्यादि ग्रहों के पारस्परिक दीप्तांशों का विचार विशेष तय किया जाता है। ग्रहों के दीप्तांश इस प्रकार हैं- सूर्य के १५, चन्द्रमा के १२, मंगल के ८, बुध के ७, बृहस्पति के ९, शुक्र के ७ और शनि के ९ दीप्तांश होते हैं।[3]

ग्रहों का दीप्तांश चक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
दीप्तांश	१५	१२	८	७	९	७	९

ग्रह मैत्री –

जो ग्रह जिस ग्रह पर मित्र दृष्टि रखता हुआ नवमीं, पाँचवीं, तीसरी तथा ग्यारहवीं (९, ५, ३, ११) दृष्टि से देखता हो, वह ग्रह उस ग्रह का मित्र होता है। जो ग्रह जिस ग्रह पर शत्रु दृष्टि रखता हुआ चतुर्थ, दशम, प्रथम तथा सप्तम (४, १०, १, ७) दृष्टि से देखता हो वह ग्रह उस ग्रह का शत्रु होता है। यदि शत्रुता-मित्रता इन दोनों में से कोई भी दृष्टि न हो अर्थात् एक ग्रह दूसरे ग्रह से दूसरे, छठे, आठवें तथा बारहवें (२, ६, ८, १२) स्थान में हो तो परस्पर दोनों ग्रहों में समता होती है।[4]

---

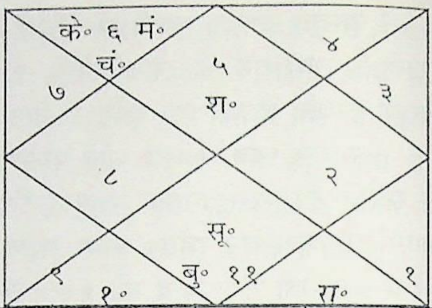
1. वर्षफल विचार, डॉ. उमेश पुरी "ज्ञानेश्वर", पृ॰ ८२
2. (क) स्वोच्चे भवति च दीप्तः स्वस्थः स्वगृहे सुहृद्गृहेमुदितः।
   शान्तर्शुभ वर्गस्थः शक्तः स्फुट किरण जालश्च॥ (सारावली, अ॰ ५, श्लो॰ ३)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका (पृ॰ १३०)
3. (क) तिथ्यर्काष्टनगाङ्कशैलखचराः सूर्यादिदीप्तांशकाः। (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ६१)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका (पं. पन्ना लाल ज्योतिषी)
   (ग) बाणेन्दुभिर्भानुभिरष्टभिश्च शैलैश्चनन्दैरचलैर्नभोगैः।
   दीप्तांशकैरेभिदिनादयोऽपि विलोकयंति क्रमतो न भोगाः॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ६६, श्लो॰ ४८)
4. (क) पश्यन्मित्रदृशा सुहृद्रिपुदृशा शत्रुः समस्त्वन्यथा। (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ ६१)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका (पं. पन्ना लाल ज्योतिषी)
   (ग) मित्रंतृतीयपंचमनवममेकादशगतोऽपियोयस्य।
   धनर्मृतरिपुरिष्फेषु च समो ग्रहः स्यादिति ज्ञेयम्॥
   शत्रुस्तथैकतुर्ये जायास्थाने तथा दशमे।
   ताजिकहिल्लाजमते नैतादृक्कथितमस्माभिः॥
   (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ६७, श्लो॰ ५०-५१, पं. नारायणप्रसाद सीताराम मिश्र)

जिस ग्रह से जो ग्रह

(१) ३, ५, ९, ११वें हो वह ग्रह उसका मित्र होता है।

(२) जो २, ६, ८, १२वें हो वह सम होता है।

(३) जो १, ४, ७, १०वें हो वह ग्रह शत्रु होता है।



ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
मित्र	—	बृ॰शु॰	बृ॰शु॰	—	मं॰चं॰	मं॰चं॰	—
सम	चं॰मं॰ वृ॰शु॰	सू॰बु॰ श॰	सू॰बु॰ श॰	चं॰मं॰ बृ॰शु॰	सू॰बु॰ श॰	सू॰बु॰ श॰	मं॰चं॰ बृ॰शु॰
शत्रु	बु॰श॰	मं॰रा॰	चं॰के॰	सू॰श॰	शु॰	बृ॰	सू॰बु॰

राशियों का परिचय

आकाश में स्थित भचक्र के ३६० अंश अथवा १०८ भाग होते हैं। समस्त भचक्र १२ राशियों में विभक्त है, अतः ३० अंश अथवा ९ भाग की एक राशि होती है। १२ राशियाँ निम्नलिखित हैं[1] :-

१. **मेष** (Aries)
२. **वृषभ** (Taurus)
३. **मिथुन** (Gemini)
४. **कर्क** (Cancer)
५. **सिंह** (Leo)
६. **कन्या** (Virgo)
७. **तुला** (Libra)
८. **वृश्चिक** (Scorpio)
९. **धनु** (Sagitterius)
१०. **मकर** (Capricorn)
११. **कुम्भ** (Aquarius)
१२. **मीन** (Pisces)

मेष राशि का स्वरूप –

यह राशि पुरुष जाति की है, चर संज्ञक स्वभाव है। अग्नि तत्त्व प्रधान है। दृढ़, इसके चार चरण हैं। लाल-पीला (पाटल) रंग वाली है। रक्तोष्ण प्रकृति की है। इसका शब्द बड़ा उग्र होता है। यह पर्वत चारी है। स्वभाव इसका क्रूर है। दिन में यह विशेष बलवान है।

पूर्व दिशा की मालिक, इसका उदय विषम तिरछा है। यह स्त्री का संग बहुत कम करती है और इसकी अल्प सन्तानें होती हैं। कांतिहीन, क्षत्रिय वर्ण की है। इसके सभी अंग समान हैं। यह पित्त प्रकृतिकारक है, इसका प्राकृतिक स्वभाव साहसी, अभिमानी और मित्रों पर कृपा रखने वाला है।[2]

1. (क) मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाथ वृश्चिककः।
धन्वी मकरः कुम्भो मीनस्त्विति राशिनामानि॥ (सारावली, अ॰ ३, श्लो॰ ३)
(ख) भारतीय ज्योतिष प्रवेश, डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा, पृ॰ ३४
(ग) होड़ाचक्रम्
(घ) ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्रे, अ॰ १

2. (क) पुमांश्चरोऽग्निः सुदृढश्चतुष्पाद्रक्तोष्णपित्तोऽतिरवोऽद्रिरुग्रः।
पीतो दिनं प्राग्विषमोदयोऽल्पसङ्गप्रजो रुक्षनृपः समोऽजः॥ (ता॰ नी॰, संज्ञा॰, श्लो॰ २)
(ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १२५
(ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७

वृष राशि का स्वरूप :-

यह राशि स्त्री जाति, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, स्थिर संज्ञक, भूमितत्व, शीतल स्वभाव, कान्ति रहित, अच्छी ज़मीन पर विचरने वाली, वात प्रकृति, रात्रि समय विशेष बली, चार चरण वाली, श्वेत वर्ण, महाशब्दकारी, विषमोदयशील, मध्यम प्रजा और मध्यम स्त्री संग करने वाली, शुभ कारक, वैश्य वर्ण और शिथिल शरीर है। यह अर्द्धजल राशि कहलाती है। इसका प्राकृतिक स्वभाव स्वार्थी, समझ-बूझकर काम करने वाली और सांसारिक कार्यों में दक्ष होती है। इससे कण्ठ, मुख और कपोलों का विचार किया जाता है।[1]

मिथुन राशि का स्वरूप :-

पश्चिम दिशा की स्वामिनी, वायु तत्त्व, तोते के सदृश हरित वर्ण वाली, दो चरणों वाली पुरुष राशि, द्विस्वभाव (अर्थात् चर और स्थिर दो स्वभाव वाली) विषमोदयी उष्ण स्वभाव, मध्यम प्रजा और मध्यम स्त्री संग वाली, वनचारी, शूद्र वर्ण, महाशब्दकारी, चिकना, दिवा बली और क्रूर प्रकृति है। इसका शरीर शिथिल है। इससे हाथ, शरीर के कन्धों और बाहुओं का विचार किया जाता है।[2]

विशेष : इसके शरीर का पूर्वार्ध भाग स्थिर और उत्तरार्ध चर स्वभाव है।

कर्क राशि का स्वरूप :-

बहुत सन्तान वाली, बहुत स्त्री संग और बहुत चरणों वाली, चर स्वभाव, स्त्री जाति, कुछ-कुछ लाल (रक्त-धवल मिश्रित) वर्ण, शब्द शून्य, शुभ कारक, कफ प्रकृति वाली, चिकना, जलराशि, जलचारी, समोदयी, ब्राह्मण वर्ण, रात्रि बली, उत्तर दिशा की स्वामिनी और शिथिल शरीर वाली होती है। इससे पेट, वक्षस्थल और गुर्दे का विचार किया जाता है।[3]

सिंह राशि का स्वरूप :-

पुरुष जाति, स्थिर संज्ञक, अग्नितत्त्व, दिवा बली, पीत वर्ण, कान्तिहीन, पित्त प्रकृति, उष्ण स्वभाव, पूर्व दिशा की मालिक, पुष्ट शरीर, चार चरणों वाली, समोदयी, महाशब्दकारी, अल्प सन्तान और अल्प स्त्री संगयुक्त, पर्वतचारी, क्षत्रिय वर्ण, क्रूर स्वभाव, भ्रमणप्रिय और निर्जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वरूप मेष राशि जैसा है, इस राशि के भी पीत और धूम्र ये दो वर्ण हैं। इससे हृदय का विचार किया जाता है।[4]

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ 2, पृ॰ १२५
   (ख) वृषः स्थिरः स्त्रीक्षितिशीतरुक्षो याम्येट् सुभूर्वायुनिशाचतुष्पात्।
   श्वेतोऽतिशब्दो विषमोदयश्च मध्य प्रजासङ्गशुभोऽपि वैश्यः॥ (ता॰नी, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ३)
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
2. (क) प्रत्यक्समीरः शुकभा द्विपान्ना द्वन्द्वोद्विर्मूर्तषमोदयोष्णः।
   मध्य प्रजासङ्ग वनस्थशूद्रो दीर्घस्वनः स्निग्धदिनेट तथोग्रः॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ४)
   (ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ग) भारतीय ज्योतिष प्रवेश, डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा, पृ॰ ३७
   (घ) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
3. (क) बहुप्रजासङ्गपदः कुलीरश्चरोऽङ्गना पाटलहीन शब्दः।
   शुभः कफी स्निग्धजलाम्बुचारी समोदयीविप्रनिशोत्तरेशः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ५)
   (ख) नेमिचन्द्रशास्त्री भारतीय ज्योतिष, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
4. (क) पुमान्स्थिरोऽग्निर्दिनपीतरुक्षः पित्तोष्णपूर्वेशदृढश्चतुष्पात्।
   समोदयो दीर्घरवोऽल्पसङ्गप्रजो हरिः शैलनृपोग्रधूम्रः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ६)
   (ख) नेमिचन्द्रशास्त्री भारतीय ज्योतिष, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७

कन्या राशि का स्वरूप :-

पिंगल वर्ण, दो चरण वाली, स्त्री राशि, चर और स्थिर दो स्वभाव वाली, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, रात्रि बली, वायु और शीत प्रकृति, समोदयी, भूमिचारी, अखण्ड शब्द करने वाली, शुभ भूमि में विचरने वाली, वैश्य वर्ण, कान्तिहीन, अल्प सन्तान और अल्प संग करने वाली और शुभ राशि मानी जाती है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मिथुन- जैसा है। इससे पेट का विचार किया जाता है।[1]

तुला राशि का स्वरूप :-

पुरुष राशि, चर संज्ञक, बहुरंगा वर्ण, समोदयी, उष्ण प्रकृति, पश्चिम दिशा की स्वामिनी, वायु प्रकृति, चिकना, शब्द रहित, वन चारी, अल्प सन्तान वाली, अल्प संग वाली, शूद्र वर्ण, क्रूर स्वभाव, दिवा बली, दो चरणों वाली, सम अंगों से युक्त और स्थिल शरीर की होती है।[2]

वृश्चिक राशि का स्वरूप :-

स्थिर संज्ञक, शुभ्र वर्ण, स्त्री जाति, जल तत्त्व प्रधान, उत्तर दिशा की स्वामिनी, रात्री समय बली, शब्द रहित, बहुत चरणों से युक्त, कफ प्रकृति, समोदयी, जल चारी, बहुत सन्तान और बहु स्त्री संग वाली, शुभ, ब्राह्मण वर्ण और चिकने स्वभाव की राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव दम्भी, हठी, दृढ़ प्रतिज्ञ, स्पष्टवादी और निर्मल है।[3]

धनु राशि का स्वरूप :-

पुरुष राशि, कांचन (स्वर्ण) वर्ण, पर्वत चारी, समोदयी, अतिघोर शब्दकारी, दिवा बली, पूर्व दिशा की मालिक, दृढ़ शरीर, कान्तिरहित, पीत वर्ण, क्षत्रिय वर्ण, उष्ण स्वभाव, पित्त प्रकृति, अल्प सन्तान और अल्प संग वाली, चरस्थिर द्विस्वभावात्मक, दो चरणों वाली, अग्नि तत्त्व और क्रूर स्वभाव राशि है।[4]

विशेष – इस राशि के भी सुवर्ण और पीत ये दो वर्ण हैं।

मकर राशि का स्वरूप :-

स्त्री जाति, चरसंज्ञक, भूमि राशि, अर्धशब्दकारी, दक्षिण दिशा की स्वामिनी है। पिंगल वर्ण, कान्तिरहित, सौम्य, भूमिचारी, शीतल स्वभाव, स्वल्प सन्तान और स्वल्प संग वाली, वात प्रकृति, रात्री समय विशेष बलवान, चार चरणों वाली, विषमोदयी, वैश्य वर्ण और शिथिल शरीर वाली मकर राशि है।[5]

विशेष :- इस राशि का पूर्वार्द्ध भाग चतुष्पद तथा उत्तरार्द्ध भाग जलचर है।

---

1. (क) पाण्डुर्द्विपात्स्त्री द्वितनुर्यमाशा निशा मरुच्छीतसमोदयाक्ष्मा।
   कन्यार्द्धशब्दा शुभभूमिवैश्या रुक्षाऽल्पसङ्गप्रसवा शुभा च॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ७)
   (ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १२६
2. (क) पुमांश्चरश्चित्रसमोदयोष्णः प्रत्यङ्मरुत्स्निग्धरवोनवन्यः।
   स्वल्पप्रजासङ्गमशूद्र उग्रस्तुतो द्युवीर्यो द्विपदः समानः॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ८)
   (ख) नेमिचन्द्रशास्त्री भारतीय ज्योतिष, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
3. (क) नेमिचन्द्रशास्त्री भारतीय ज्योतिष, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ख) स्थिरः सितः स्त्री जलमुत्तरेशो निशारवोनो बहुपात्कफी च।
   समोदयो वारिचरोऽतिसङ्गप्रजः शुभः स्निग्धतर्नुद्विजोऽलिः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ९)
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
4. (क) ना स्वर्णभाः शैलसमोदयोऽतिशब्दो दिनं प्राग्दृढरूक्षपीतः।
   राजोष्णवित्तो धनुरल्पसूतिसङ्गो द्विमूर्तद्विपदोऽग्निरुग्रः॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ १०)
   (ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १२५
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
5. (क) मृगश्चरः क्ष्मार्धरवो यमाशास्त्रीपिङ्गरुक्षः शुभभूमिशीतः।
   स्वल्प प्रजासङ्गसमीररात्रिरादौ चतुष्पाद्विषमोदयो विट्॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ११)

कुम्भ राशि का स्वरूप :-

पुरुष जाति, चरणहीन, दिवाबली, मध्यम स्त्री संग और मध्यम सन्तति वाली, स्थिर संज्ञक, बहुरंगा (विचित्र) वर्ण, वन चारी, वायु तत्त्व, चिकना, उष्ण स्वभाव, अर्धस्वर, सम-वात-पित्त-कफ प्रकृति, शूद्र वर्ण, पश्चिम दिशा की स्वामी, विषमोदयी, क्रूर और शिथिल शरीर वाली कुम्भ राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव, विचारशील, शान्त चित्त, धर्मवीर और नवीन बातों का आविष्कारक है।[1]

मीन राशि का स्वरूप :-

मीन राशि चरणहीन (अपद) है। स्त्री राशि, कफ प्रकृति, जल तत्त्व वाली, रात्री बली, शब्दरहित, पिंगल भूरा रंग, द्विस्वभाव, जलचारी, चिकना शरीर, बहु सन्तति, अति स्त्री संग, ब्राह्मण जाति, सौम्य राशि, उत्तर दिशा पति, विषमोदयी तथा शिथिल अंग ये मीन राशि के लक्षण हैं।[2]

नोट - उपर्युक्त बारह राशियों का जैसा स्वरूप बतलाया है, इन राशियों में उत्पन्न पुरुष और स्त्रियों का स्वभाव भी प्रायः वैसा ही होता है। राशियों का स्वरूप जन्म कुण्डली, वर्ष कुण्डली तथा प्रश्न समय या दो व्यक्तियों की या वर-कन्या की शत्रुता और मित्रता अथवा पारस्परिक स्वभाव मेल के लिये भी राशि स्वरूप उपयोगी है। स्पष्टता के लिये आगे राशि स्वरूप चक्र देखें :-

राशियों के मित्रामित्र :-

राशियों के परस्पर शत्रु-मित्र इस प्रकार हैं- पृथ्वी तत्त्व और जल तत्त्व वाली राशियों में परस्पर मित्रता रहती है और अग्नि तत्त्व और वायु तत्त्व वाली राशियों के व्यक्तियों में परस्पर मित्रता रहती है। इसके विपरीत जैसे- पृथ्वी तत्त्व तथा अग्नि तत्त्व वाली राशियों के व्यक्तियों में शत्रुता रहती है और जल तत्त्व तथा अग्नि तत्त्व वाली राशियों में एवं जल तथा वायु तत्त्व वाली राशियों में परस्पर शत्रुता रहती है। यह राशि सम्बन्धी शत्रुता तथा मित्रता का विचार पिता-पुत्र, स्वामी सेवक, गुरु-शिष्य, स्त्री-पुरुष, अथवा जिस किसी भी दो राशि के लोगों में किया जाता है। यदि दो व्यक्तियों की एक ही तत्त्व की राशियाँ हों तो दोनों में अतिशय प्रीति मानी जायेगी। इसके विपरीत यदि परस्पर शत्रु भाव तत्त्वों वाली राशियों से सम्बन्धित लोगों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध चिर स्थायी नहीं रहते हैं।[3]

राशि तत्त्व बोधक कोष्ठक

१. अग्नि तत्त्व की राशियाँ	मेष, सिंह, धनु
२. पृथ्वी तत्त्व की राशियाँ	वृष, कन्या, मकर
३. वायु तत्त्व की राशियाँ	मिथुन, तुला, कुम्भ
४. जल तत्त्व की राशियाँ	कर्क, वृश्चिक, मीन।

राशियों का फलादेश :-

बारह राशियों का जैसा स्वरूप बताया है, इन राशियों में उत्पन्न पुरुष और स्त्रियों का स्वभाव भी प्रायः वैसा ही होता है जन्म कुण्डली एवं वर्ष कुण्डली में राशि और ग्रहों के स्वरूप के समन्वय पर से

1. (क) भारतीय ज्योतिष संस्करण-२००५, अ॰ २, पृ॰ १२६
   (ख) कुम्भोऽपदो ना दिनमध्यसङ्गप्रसूः स्थिरः कर्बुरवन्यवायुः।
   स्निग्धोष्णखण्डस्वरतुल्यधातुः शूद्रः प्रतीची विषमोदयोग्रः॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ १२)
2. (क) मीनोऽपदः स्त्री कफवारिरात्रिनिः शब्दबर्भुर्द्वतनुर्जलस्थः।
   स्निग्धोऽतिसङ्गप्रसवोऽपि विप्रः शुभोत्तराशेडविषमोदयश्च॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ १३)
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री ज्योतिषाचार्य, अ॰ २, पृ॰ १२६
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १६-१७
3. (क) धराम्बुनोरग्निसमीरयोश्च वर्गे सुहत्त्वं परतोऽरिभावः।
   चापान्त्यभागस्य चतुष्पदत्वं ज्ञेयं मृगान्त्यस्य जलेचरत्वम्॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ १४)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं. पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ २२ (ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, पृ॰ १२७

ही फलाफल का विचार किया जाता है। जैसे- मेष राशि पित्त प्रकृति, वृष वात प्रकृति, मिथुन सम-वात-पित्त प्रकृति, कर्क कफ प्रकृति, सिंह पित्त प्रकृति, कन्या वात प्रकृति, तुला सम-वात-पित्त प्रकृति, वृश्चिक कफ प्रकृति, धनु पित्त प्रकृति, मकर वात प्रकृति, कुम्भ सम-वात-पित्त प्रकृति ओर मीन कफ प्रकृति है। इसी तरह मेष की क्षत्रिय, वृष की वैश्य, मिथुन की शूद्र और कर्क की ब्राह्मण जाति है। इसी प्रकार चार-चार राशियों की आवृत्ति करके अन्य राशियों की भी जाति समझें। मेष, कर्क, तुला और मकर- चर राशियाँ हैं। वृष, सिंह, वृश्चिक एवं कुम्भ स्थिर संज्ञक तथा कन्या, धनु और मीन द्विस्वभाव राशियाँ कहलाती हैं। वर्ष कुण्डली या प्रश्न कुण्डली में केन्द्रस्थ चर राशियों में शुभ ग्रह स्थित हों तो कार्यों में शीघ्र सफलता होती है। स्थिर राशियों में ग्रह विलम्ब से सफलता देते हैं। यह तथ्य जन्म एवं वर्ष दोनों में विचारणीय हैं। चर राशि में कार्य जल्दी हो (यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो), यात्रा करें तो शीघ्र वापस लौटे। स्थिर राशि में कार्य करने से स्थायी प्रभाव होता है। मकान, दुकान, व्यवसाय आदि आरम्भ करें तो बहुत वर्षों तक रहे। द्विस्वभाव राशि में मिश्रित प्रभाव होता है। पहले जो बारह राशियों का स्वरूप गुण, जाति, दिशा, काल तथा स्थान आदि बताया गया है, उसी के अनुसार वे फल भी देती हैं।[1]

राशियों के स्वामी :-

मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल, वृष और तुला का शुक्र, कन्या और मिथुन का बुध, कर्क का चन्द्रमा, सिंह का सूर्य, मीन और धनु का बृहस्पति, मकर और कुम्भ का शनि, कन्या का राहु और मिथुन का केतु है।

राशि स्वामी बोधक चक्र

राशि	स्वामी ग्रह	राशि	स्वामी ग्रह
१. मेष	मंगल	७. तुला	शुक्र
२. वृष	शुक्र	८. वृश्चिक	मंगल
३. मिथुन	बुध/केतु	९. धनु	गुरु
४. कर्क	चन्द्रमा	१०. मकर	शनि
५. सिंह	सूर्य	११. कुम्भ	शनि
६. कन्या	बुध/राहु	१२. मीन	गुरु

'मंगल' दो राशियों का स्वामी है — मेष एवं वृश्चिक।

'शुक्र' दो राशियों का स्वामी है — वृष एवं तुला।

'बुध' दो राशियों का स्वामी है — कन्या एवं मिथुन।

'चन्द्रमा' केवल मात्र एक राशि का स्वामी है — कर्क।

'सूर्य' केवल एक राशि का स्वामी है — सिंह।

'शनि' दो राशियों का स्वामी है — मकर एवं कुम्भ।

'बृहस्पति' दो राशियों का स्वामी है — मीन, धनु।

'राहु' एवं 'केतु' छाया ग्रह होने के कारण किसी राशि के स्वामी नहीं माने जाते, किन्तु कई विद्वान 'मिथुन' का 'केतु' तथा 'कन्या' का स्वामी राहु को स्वीकार करते।[2]

1. (क) (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ १५) (ख) बृहज्जतके राशिप्रभेदाध्यायः - १
2. (क) मंशुबुचरबुशुमंगुशगवोमेषादीशाः॥ (जातक तत्त्वम्, डॉ. सुरेश चन्द्र मिश्रा, पृ॰ १२)
   (ख) मेष वृश्चिकयोभौमः शुक्रोवृषतुलाधिपः। बुध कन्यामिथुनयोः कर्काधिपतिः चन्द्रमा॥ सिंहस्याधिपतिः सूर्यः शनि मकर कुम्भयोः। गुरुः मीन धनुः स्वामी, कथितो गणकोतमैः॥ (बृहदवकहड़ाचक्रम्, काशीनाथ)
   (ग) कुजभृगुबुधेन्दुरविशशिसुतसितरुधिरार्यमन्दशनिजीवाः गृहण। (सारावली, पृ॰ ६, श्लो॰ ११)
   (घ) भौमोशनः सौम्यशशीनवित्सितारेज्याकिमन्दाङ्गिरसो गृहेश्वराः। (ता॰नी॰, अ॰ १, पृ॰ २६, श्लो॰ ३०)

राशि स्वरूपचक्रम्[१]

संज्ञा	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
पु॰/स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
चरादि	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
तत्त्व	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल
पुष्ट–कृश	दृढ़	दृढ़	मृदु	मृदु	दृढ़	कृश	दृढ़	कृश	दृढ़	दृढ़	दृढ़	दृढ़
पाद संज्ञा	चतुष्पद	चतुष्पद	द्विपद	वक्रपद	चतुष्पद	द्विपद	द्विपद	वक्रपद	द्विपद	चतुष्पद	द्विपद	अपद
वर्ण	पाटल रक्त	श्वेत	हरित	पाटल	धूम्र	पांडर	विचित्र	श्वेत	वर्ण २	पीत	कर्बुर	धूम्र
गुण	तप्तदेह	शीत	तप्त	शीत	उष्ण	वायु	उष्ण	वायु	उष्ण	शीत	उष्ण	शीत
धातु	पित्त	वायु	वायु	कफ	पित्त	जल	पित्त	कफ	पित्त	वायु	वायु	कफ
शब्द	अतिरव	अतिरव	दीर्घ	हनश॰	दीर्घ	अर्द्ध	शब्द रहित	शब्द॰ २	अति–शब्द	अति–शब्द	खंडरहित	शब्दहीन
चर स्थान	पर्वत	सम भूमि	वन चर	जल चर	पर्वत चर	शुभ भूमि	वन चारी	जल चर	पर्वत चर	वन चर	भूमि	जल चर
क्रूरादि	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य
दि॰/रा॰	दिवा बली	रात्रि	दिवा	संध्या	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि
सम वि॰	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम
दिशा	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
स्त्री॰ संगमत	अल्प	मध्य	मध्य	ब॰ह॰	अल्प	अल्प	अल्प	अति	अल्प	अल्प	मध्य	अति
कांति	रुक्ष	रुक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध	रुक्ष	रुक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध	रुक्ष	रुक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध
जाति	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण
समादि	सम	विषम	विषम	सम	सम	सम	सम	सम	सम	विषम	विषम	विषम

१. ताजिक नीलकण्ठी, पं. महीधर शर्मा, पृ॰ ७

तृतीय अध्याय

वर्षकुण्डली निर्माण

अथ वर्ष प्रवेश गणित :-

जातक के जन्म समय में सूर्य जिस राशि अंश कलादि पर होगा उसी राशि अंश कलादि पर पुनः जब सूर्य आता है तब जन्म से एक सौर वर्ष पूरा होता है। उस समय के लग्न तथा ग्रह पर से निमित कुण्डली द्वारा मनुष्य के वर्तमान वर्ष का शुभाशुभ देखा जाता है। वर्षकुण्डली बनाने से पूर्व, वर्ष का इष्ट ज्ञात करना आवश्यक है, जिसका शास्त्रीय अर्थ समय ज्ञान है। ताजिक ग्रन्थों में बताया गया है कि अभिष्ट संवत् में से जन्म सम्वत् घटाने पर गताव्द या गत वर्ष आते हैं।वबस यहीं से वर्ष कुण्डली का निर्माण आरम्भ होता है।

वर्ष प्रवेश :-

वर्ष फल बनाने के लिए वर्ष प्रवृत्ति का समय बताते हुए कहते हैं- गत वर्ष जो भी हो उसमें उसका चौथाई भाग एक स्थान पर जोड़ दें और दूसरी जगह गत वर्ष संख्या को २१ से गुणा कर गुणनफल में ४० का भाग देने से जो घट्यात्मक लब्धि आवे, उसमें जन्म समय का वार, इष्ट आदि जोड़कर, वार में ७ का भाग देकर जो लब्धि हो वही वर्ष का वार, इष्ट आदि होगा।

उदाहरणार्थ निम्न कुण्डली के जातक का जन्म सम्वत् १९९२ वैशाख कृष्ण ३ रविवार को इष्ट १०/३६ पर हुआ। इस समय सम्वत् २०२८ चल रहा है —

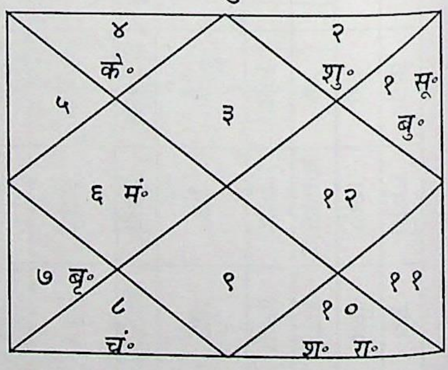
२०२८ वर्तमान वर्ष
\- १९९२ जन्म संवत्
३६ गत वर्ष

उपरोक्त उदाहरण घटित करें तो ३६ वर्ष में ३६ ÷ ४ = ९ गत वर्ष का चतुर्थांश जोड़ा (३६ + ९) तो ४५ आया। दूसरे स्थान पर — ३६ गतवर्ष

२१ गुणा

४०) ७५६ (१८
७२०
३६
६०
४०) २१६० (५४
२००
१६० = १८ । ५४
१६०

जन्म कुण्डली



४५ (गताब्द + चतुर्थांश)
\+ १८ । ५४
४५ । १८ । ५४
\+ १ । १० । ३६ (वार, इष्ट)
४६ । २९ । ३०

ऊपर ४५ । १८ । ५४ में जन्मवार १ (रवि १, सोम २, इसी प्रकार शनि ७) तथा इष्ट जोड़ा। कुल योग ४६ । २९ । ३० हुआ। ४६ में ७ का भाग दिया तो ४ रहे।

अतः बुधवार (४) को २९ । ३० इष्ट पर नया वर्ष प्रारम्भ होगा।[1]

1\. (क) गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्नसमागणात्। खवेदा ४०प्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः।
अब्दप्रवेशे वारादि सप्ततष्टेऽत्र निंदशेत॥ ता॰नी॰ पृ॰ १०, श्लो॰ १६

वर्ष प्रवेश (दूसरा मत) –

ताजिक ग्रन्थों में वर्षफल निर्माण का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है– जिस सम्वत् या वर्ष का वर्ष लग्न निकालना हो, उस सम्वत् में से जातक के जन्म का सम्वत् घटाने से जो वर्ष शेष बचेंगे वह गत वर्ष होंगे। उसे तीन जगह रखें, पहले स्थान में सवाया, दूसरे स्थान में आधा, तीसरे स्थान में ड्योढ़ा। सवाये से दिन आदि, आधे से घटी और ड्योढ़े से पलादिक निकलते हैं। जब ये सब संख्यायें जोड़ दी जाती हैं, तब गत वर्ष की ध्रुवा बनती है और जब इसी संख्या में जन्म और वार आदि की संख्या जोड़कर सात (७) का भाग दे दिया जाता है तब वर्ष-प्रवेश के वार आदि निकल आते हैं।[1]

वर्ष प्रवेश सारिणी –

यवन आचार्यों ने वर्षफल बनाने की सारिणी द्वारा वर्ष प्रवेश की सरल विधि बताई है। एक (१), पन्द्रह (१५), इक्कतीस (३१), तीस (३०), यह प्रति वर्ष के वारादि धन संज्ञा वाले चालनांक हैं अर्थात् १, १५, ३१, ३० यह वारादि अंक संयुक्त करता जावे सैकड़ों वर्ष की सारिणी बन जाती है प्रायः सौ वर्ष पर्यन्त की आयु मनुष्यों की होती है इस कारण यहाँ सौ वर्ष की सारिणी लिखते हैं।[2]

वर्ष सारिणी

नीचे वाली वर्ष प्रवेश सारिणी में से गत वर्ष के नीचे लिखे गये वारादि को लेकर उसमें जन्म समय के वारादि को जोड़ देना चाहिए। यदि वार स्थान में ७ से अधिक आवे तो उसमें सात (७) का भाग देकर शेष का वार स्थान में ग्रहण करना चाहिए।[3]

वर्षफल प्रवेश सारिणी

गतवर्ष	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
वार	१	२	३	५	६	०	०१	३	४	०	६	१	२	३	४
घटी	१५	३१	४६	२	१७	३३	०८	४	१९	३५	५०	६	२१	३७	५२
पल	३१	३	३४	६	३७	०९	४०	१२	४३	१४	४६	२८	४९	२१	५२
विपल	३०	०	३०	०	३०	०	०३	०	३०	०	२७	०	३०	०	३०
गतवर्ष	**१६**	**१७**	**१८**	**१९**	**२०**	**२१**	**२२**	**२३**	**२४**	**२५**	**२६**	**२७**	**२८**	**२९**	**३०**
वार	६	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	०	०	१	२
घटी	८	२३	३९	५४	१०	२६	४१	५७	१२	२८	४३	५९	१४	३०	४५
पल	२४	५५	२७	५८	३०	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५
विपल	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

1. (क) वर्षफल दर्पण, डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ३०
   (ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३६२
2. (क) सुरेन्द्र प्रमुखैर्नतं तमसमाजनिर्मूलनं सरोजवनमोददं हृदि निधाय सूर्यं विभुम्। करौमि शुभदं सतां श्रमहरं समासाधनं गुणेगुणगणीकृतं हरसमान हारेहरम्॥ १ ॥ इष्टः श्को जन्म शकेन हीनस्त्रिधासपादोदलितश्चसार्धम्। समन्वितो जन्मगवारपूर्वैः स्फूटाभवेदब्दनिवेश वेला॥ (वर्ष पत्री दीपक, श्लो॰ १, २)
   (ख) व्ययस्थापितो जन्मगताब्दवृन्दकैः क्रमात्सपादार्धकसार्धकीकृते। समन्वितो जन्मदिनादिकेन वर्ष प्रवेशस्य घटीमितिः स्यात्॥ (ता॰नी॰, पृ॰ ११)
3. (क) भूमि १ पञ्चेन्दु १५ भूराम ३१ शून्यराम ३० तथैव च। प्रत्त्यब्दचालनांकोयं वारादि धनसंज्ञकम्॥
   (ख) पंचांगदिवाकर, पं. देवीदयालु ज्योतिषी (ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री

गतवर्ष	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५
वार	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०
घटी	१	१६	३२	४७	३	१८	३४	४९	५	२१	३६	५२	७	२३	३८
पल	१६	४८	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०	३१	३	३४	६	३७
विपल	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०
गतवर्ष	**४६**	**४७**	**४८**	**४९**	**५०**	**५१**	**५२**	**५३**	**५४**	**५५**	**५६**	**५७**	**५८**	**५९**	**६०**
वार	१	३	४	५	६	१	२	३	४	६	०	१	३	४	५
घटी	५४	९	२५	४०	५६	२१	२७	४२	५८	१३	२९	४४	०	१५	३१
पल	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०
विपल	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
वर्ष	**६१**	**६२**	**६३**	**६४**	**६५**	**६६**	**६७**	**६८**	**६९**	**७०**	**७१**	**७२**	**७३**	**७४**	**७५**
वार	६	१	२	३	४	६	०	१	२	४	५	६	०	२	३
घटी	४७	२	१८	३३	४९	४	२०	३५	५१	६	२२	३७	५३	८	२४
पल	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८	१९	५१	२२
विपल	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०
वर्ष	**७६**	**७७**	**७८**	**७९**	**८०**	**८१**	**८२**	**८३**	**८४**	**८५**	**८६**	**८७**	**८८**	**८९**	**९०**
वार	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१	३	४	५	०	१
घटी	३९	५५	१०	२६	४२	५७	१३	२८	४४	५९	१५	३०	४६	१	१७
पल	५४	२५	५७	२८	०	३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५
विपल	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
वर्ष	**९१**	**९२**	**९३**	**९४**	**९५**	**९६**	**९७**	**९८**	**९९**	**१००**	**१०१**	**१०२**	**१०३**	**१०४**	**१०५**
वार	२	३	५	६	०	१	३	४	५	०	०	०	०	७	०
घटी	३२	४८	३	१९	३४	५०	५	२१	३६	०	०	०	०	०	०
पल	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	०	०	०	०	०	०
विपल	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०

वर्ष प्रवेश सारिणी देखना :-

इस सारिणी में से गत वर्ष के नीचे लिखे गये वारादि को लेकर उसमें जन्म समय के वारादि को जोड़ देना चाहिए। यदि वार स्थान में सात (७) से अधिक अंक आवे तो उसमें सात (७) का भाग देकर शेष का वार स्थान में ग्रहण करना चाहिए।[1]

2. (क) गताऽब्दकोष्ट कांकेषु जन्मवारादियोजनात्।
वर्तमानाऽब्दवेशे च वारादिः स्यात्सुखान्वितम्॥ (वर्ष पत्री दीपक, श्लो॰ ४, पृ॰ १४)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३६३

उदाहरण :- २००३ वर्तमान सम्वत् में से
- १९७२ जन्म सम्वत् को घटाया
३१ गत वर्ष संख्या हुई

इसके नीचे वर्ष प्रवेश सारिणी में ४ । १ । १६ । ३० लिखा है, इसमें जन्म समय की वारादि संख्या जो जोड़ दिया तो ४ । १ । १६ । ३० सारिणी के वारादि + ५ । १० । १२ । ० जन्म के वारादि = ९ । ११ । २८ । ३० । यहाँ वार स्थान में ७ से अधिक होने के कारण ७ का भाग दिया तो शेष २ । ११ । २८ । ३० । वर्ष प्रवेश कालीन वारादि इष्ट हुआ अर्थात् सोमवार को ११ घटी २८ पल, ३० विपल पर वर्ष प्रवेश माना जायेगा।

वर्ष प्रवेश की तिथि का साधन :-

वर्ष प्रवेश वारादि जानने के उपरान्त यह वर्ष प्रवेश किस तिथि को होगा इस निमित्त तिथ्यानयन प्रकार यह है कि- गत वर्ष की संख्या को ग्यारह (११) से गुणा करके दो स्थानों में रखें प्रथम स्थान की राशि में एक सौ सहत्तर (१७०) का भाग देने से जो लब्धि आवे उसे द्वितीय स्थान की राशि में जोड़ दें। इस योगफल में जन्मकालिक तिथि को शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से गिनने पर जो संख्या हो उसे भी जोड़कर तीस (३०) का भाग दें। जो शेष बचे, शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिनने पर उस संख्यक तिथि में वर्ष प्रवेश जानना चाहिए। पहले निकाले गये वार में यह तिथि प्रायः मिल जाती है, लेकिन कभी-कभी एक तिथि का अन्तर भी पड़ जाता है। जब-जब अन्तर आये, उस समय वार को ही प्रधान मानकर उस वार की तिथि को ग्रहण करना चाहिए तो वर्ष प्रवेश तिथि ज्ञात होगी।[1]

उदाहरण :- "गताब्द संख्या ३६ पर तिथि साधन"

गताब्द = ३६

३६ ´ ११ = ३९६ ÷ १७० = लब्धि २, शेष ५६,

दूसरे स्थान पर रखी संख्या :- ३९६ (३६ ´ ११) में यह लब्धि जोड़ दी ३९६ + २ = ३९८

जन्म तिथि कृष्ण पक्ष की तृतीया (३) है। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से गिनने पर संख्या १८ (अठारह) ३९८ + १८ = ४१६ ÷ ३० = १३ लब्धि, शेष २६ ।

अब शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से गिनने पर २६वीं तिथि वैशाख (जन्म मास) कृष्ण पक्ष ११ होगी। मिलान करने पर ज्ञात हुआ कि सम्वत् २०२८ के वैशाख कृष्ण पक्ष ११ (एकादशी) को बुधवार है। अतः जातक का नया वर्ष सम्वत् २०२८ वैशाख कृष्ण ११ (एकादशी) बुधवार इष्ट २४ । २२ । ११ पर प्रारम्भ होगा।

इष्टकाल साधन :-

जन्म कुण्डली बनाने के लिए सर्वप्रथम इष्टकाल की ज़रूरत होती है इष्टकाल से तात्पर्य है वह शास्त्रीय समय जब बच्चे का जन्म हुआ। इसमें निम्न बिन्दु स्मरणीय हैं :-

६० विपल	=	१ पल	१ घटी =		२४ मिन्ट
६० पल	=	१ घटी	२ऋ घटी	=	१ घण्टा
६० घटी	=	१ दिन-रात	१ पल =		२४ सैकण्ट

1. (क) शिवघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढयः खाग्निशेषितः।
जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथाबब्द प्रवेशनम्॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ १७, पृ॰ ११)
(ख) वर्ष फल दर्पण, डॉ॰ नारायण दत्त श्रीमाली, पृ॰ ३०
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३६३
(घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषि, पृ॰ ३७
(ङ) भारतीय कुण्डली विज्ञान, वर्ष॰कु॰ विधान प्रकरण, पृ॰ १८

१. दिन में घं॰ १२ । ५९ मि॰ तक में जन्म हो तो जन्म समय में सूर्योदय का समय घटायें।

२. दिन के १ बजे से रात के घं॰ १२ । ५९ मि॰ तक जन्म हो तो जन्म समय में १२ घण्टे और रात के १ बजे से दूसरे दिन के सूर्योदय के पहले जन्म हो तो २४ घण्टे जोड़कर योग में सूर्योदय घटाकर शेष घण्टे मिन्ट को २॥ (अढ़ाई) से गुणने पर इष्टकाल होगा। यहाँ सूर्योदय तथा जन्म समय दोनों स्ट्रे॰टा॰ में हों अथवा स्थानीय (लोकल) समय के होने चाहिये।[1]

उदाहरण :- यदि जन्म समय प्रातः ११ । २० माना जाए तब (१) नियमानुसार —

११ । २०	जन्म समय	४ । ५०	शेष
− ६ । ३०	सूर्योदय	२॥	
४ । ५०	**शेष**	१२ । ०५	इष्टकाल

यदि जन्म समय रात्रि में ९ । ४५ माना जाए तब (२) नियमानुसार —

९ । ४५	जन्म समय रात्रि
+ १२ । ००	
२१ । ४५	
− ६ । ३०	सू॰उ॰
१५ । १५	**शेष' २॥**
२॥	
३८ । ०७ । ३०	**इष्टकाल**

यदि जन्म समय रात्रि में ०१ । २५ मि॰ माना जाए तो (२) नियमानुसार —

१ । २५	रात्रि
+ २४ । ००	
२५ । २५	**जन्म समय**
− ६ । ३०	सूर्य उदय
१८ । ८५	**शेष' २॥**
२॥	
४७ । १७ । ३०	**इष्टकाल**

भयात और भभोग साधन –

गत नक्षत्र के घटी, पलों को ६० में से घटाने पर जो शेष आए, उसे दो जगह रखें। एक स्थान पर इष्टकाल को जोड़ देने से भयात और दूसरे स्थान पर जन्म नक्षत्र जोड़ देने पर भभोग होता है। यदि इष्टकाल से पहले ही नक्षत्र समाप्त हो जाए तो इष्टकाल घटियों में नक्षत्र घटी पल घटा देने से भयात होता है और गत नक्षत्र की घटियों की ६० में घटाकर उसी में दूसरे दिन वाले नक्षत्र घटियों के जोड़ देने से भभोग हो जाता है।[2]

---

1. (क) भारतीय कुण्डली विज्ञान, कुण्डली विधान प्रकरण, मीठा लाल हिंमतराम ओझा, पृ॰ १६
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १३९
2. (क) गतर्क्षनाड्यः खरसेषु शुद्धा सूर्यो दयादिष्टघटीषु युक्ता। भयात संज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाड्या सहिता भभोगः॥ चेत्स्वेष्ट कालात्प्रागेव ॠक्षं यदि समाप्यते। तदेष्टकाल तोॠक्षनाडयः शोध्या गतर्क्षकम्। भभोगः पूर्व वत्कार्यः ततः साध्यस्तु चन्द्रमाः॥ (वर्ष पत्री दीपक, श्लो॰ १५, १६)
   (ख) गतर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धधा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता।
   भयातसंज्ञा भवतीह तस्य निजर्खनाड्या सहितो भभोगः॥ (भा॰ कुण्डली विज्ञान, पृ॰ २४)
   (ग) गतर्क्षघट्यो गगनाङ्गशुद्धा द्विष्ठाः क्रमादिष्टघटीप्रयुक्ताः।
   इष्टर्क्षनाडीसहिताश्च कार्या भयात भोगौ भवतः क्रमेण। (दशामञ्जरी, नि॰ब॰ १९२२ ई॰)

उदाहरण :- जन्म नक्षत्र

मृगशिरा - ४८ । २५ घटी

गत नक्षत्र रोहिणी ५२ । ०५ घ॰

६० । ००	
- ५२ । ०५	ग॰प॰
०७ । ५५	शेष
+ १७ । ५०	इष्ट
२५ । ४५	भयात हुआ
०७ । ५५	शेष
+ ४८ । २५	(मृगशिरा ज॰न॰)
५६ । २०	भभोग हुआ

चन्द्र स्पष्ट :-

वर्ष प्रवेश के समय भयात की घटियों को ६० से गुणा कर पल जोड़ने से पलात्मक भयात और भभोग की घटियों को ६० से गुणा कर पल जोड़ देने से पलात्मक भभोग होता है। पलात्मक भयात को ६० से गुणा कर पलात्मक भभोग का भाग दें, शेष को पुनः ६० से गुणा कर उसी पलात्मक भभोग का भाग दें, तीसरी बार शेष को फिर ६० से गुणा कर पलात्मक भभोग का भाग दें तो लब्ध वर्तमान नक्षत्र के भुक्त घटी, पल होंगे। अश्विनी नक्षत्र से गत नक्षत्र तक गिनकर ६० से गुणा कर भुक्त घटी, पलादि में जोड़ दें और इस योगफल को २ से गुणा कर गुणनफल में ९ से भाग देने पर लब्ध अंश, कला, विकल फल होगा। यदि अंश संख्या ३० से अधिक आए तो ३० का भाग देकर राशि बना लेना चाहिए। चन्द्र की गति साधन के लिए ४८००० को ६० से गुणा करें और पलात्मक भभोग से भाग देने पर लब्ध चन्द्रमा की गति की कलाएँ आयेंगी; शेष में ६० का गुणा कर पलात्मक भभोग का भाग देने पर लब्ध गति की विकलाएँ आयेंगी।[1]

उदाहरण :- भयात :- १६ । ३९ जन्म नक्षत्र कृत्तिका है।

भभोग :- ५८ । ४४

१६ । ३९ ' ६० = ९६० + ३९ = ९९९ पलात्मक भयात

५८ । ४४ ' ६० = ३४८० + ४४ = ३५२४ पलात्मक भभोग

९९९ (प॰ भयात) ' ६० = ५९९४० ÷ ३५२४ (प॰ भभोग)

= १७ । ० । ३२ अर्थात् १७ घटी, ० पल और ३२ विपल लब्धि हुई। यहाँ जन्म नक्षत्र कृत्तिका है, अतः उसके पहले का नक्षत्र भरणी हुआ।

अश्विनी से गणना करने पर भरणी तक दो (२) संख्या हुई। अतः २ (ग॰न॰) ' ६० = १२० + १७ । ० । ३२ (लब्धि) = १३७ । ० । ३२ ' २

= २७४ । १ । ४ ÷ ९ = ३० । २६ । ४७ अंशात्मक लब्धि हुई।

---

1. (क) खषड्घ्नं भयातं भभोगोधृतं तत्खतर्कघ्नधिष्ण्येषुयुक्तं द्विनिघ्नम्।
नवाप्तं शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः खखाभ्राष्टवेदाभभोगेन भक्ताः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ १९)

(ख) गताभघटिका खतर्कगुणिता भभोगद्धृता युता च भगतेनषष्टिगुणितेनद्विघ्नीकृता। नवाप्तलवपूर्वके शशिभवेत्तुतत्पूर्वकैर्नभांबरवियद्गजाब्धि ४८००० षु भजेज्ज्वार्कीतता॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ३४, श्लो॰ १७)

(ग) गताभघटिका खतर्कगुणिता भभोगोद्धृता, युता च भगतेनषष्टि ६० गुणितेन द्विघ्नी कृता।
नवाप्तलवपूर्वके शशि भवेतु तत्पूर्वकैर्नभोऽम्बरवियद्गजाब्धि ४८००० युग्मवेज्जवा कीतत्ता॥

(भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १५६)

अतः अंशों में ३० का भाग दिया तो १ । ० । २६ । ४७ राश्यादि चन्द्र स्पष्ट हुआ।

चन्द्रमा की गति – पलात्मक भभोग = ३५२४ है

४८००० ' ६० = २८८००० ÷ ३५२४

= ८१७ लब्धि, शेष ८९२ ' ६०

= ५३५२० ÷ ३५२४

= १५ लब्धि, शेष ६६०,

अतएव चन्द्र स्पष्ट गति ८१७ । १५ हुई।

अथ ग्रह साधनार्थ चालन :-

वर्ष प्रवेश समय सूर्यादि ग्रह स्पष्ट करने के लिए चालन बनाने की विधि यह है कि पञ्चांग (पत्री) में आठ-आठ, चार-चार या दो-दो दिन के सूर्यादि ग्रह स्पष्ट बने रहते हैं — उसी को प्रस्तार, पंक्ति तथा पञ्चांग कहते हैं। वह पंक्ति इष्टकाल (जन्म दिन अथवा वर्ष प्रवेश के दिन) के आगे हो और इष्टकाल पीछे हो तो पंक्ति के वार, घटी और पल में इष्टकाल का वार घटी और पल घटा दें। ऐसा करने पर जो अंक शेष बचे वही वार, घटी, पल ऋण चालन होता है। यदि इष्टकाल आगे हो और पंक्ति पीछे हो तो इष्टकाल के वार-घटी-पल में पंक्ति के वार-घटी-पल को घटा दें। ऐसा करने से जो अंक शेष बचे वही वार-घटी-पल धन चालन माना जाता है।[1] सूर्य-चन्द्र सदा मार्गी रहते हैं।

भौम-बुध, बृहस्पति-शुक्र और शनि ये पाँचों ग्रह मार्गी और वक्री दोनों हुआ करते हैं। राहु-केतु सदा वक्री रहते हैं। यह कभी मार्गी होते ही नहीं।

ग्रह स्पष्टीकरण :-

ऋण (गत) अथवा धन (ऐष्य) दिवसादि से पञ्चांग में लिखे स्पष्ट ग्रह की गति को गोमूत्रिका गणित द्वारा करके ६० का भाग देने से जो लब्ध अंश, कला, विकलादि मिले उसको क्रमशः पञ्चांग स्थित स्पष्ट ग्रह की राश्यादि में घटाने तथा जोड़ने अर्थात् (१) अगर ऋण चालन (यात दिवस) हो तो लब्ध अंशादि को पञ्चांगस्थ स्पष्ट ग्रह की राश्यादि में घटाने तथा (२) धन चालन (ऐष्य दिवस) हो तो लब्ध अंशादि को पञ्चांगस्थ स्पष्ट ग्रह के राश्यादि में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह बन जाते हैं। राहु, केतु और अन्य वक्री ग्रहों में विपरीत (उल्टा) संस्कार करना चाहिये अर्थात् धन चालन में घटाने से और ऋण चालन में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह होते हैं।[2]

---

1. (क) प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्टं संशोधयेदृणम्। इष्टकालो यदाग्रे स्यात्प्रस्तारं शोधयेद्धनम्॥
(वर्ष पत्री दीपक, पं॰ नारायण प्रसाद सीताराम मिश्र, पृ॰ ३०, श्लो॰ १२)
(ख) ता॰नी॰, पृ॰ १६, श्लो॰ १८
(ग) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, पृ॰ १५३
(घ) पंक्ति स्वेष्टाद् भवेदग्रे पंक्त्यामिष्टं विशोधयेत्। तच्चालन मृणं ज्ञेयं व्यत्यये व्यत्ययं विदुः॥
पृष्ठपंक्तीष्ट कालयोः तु धनाख्यं स्यात्।
धनर्ण चालने नैवं गर्तिनिघ्नी सषड्हता। लब्धाशाद्यं क्रमाद्योज्यं शोध्यमिष्ट ग्रहो भवेत॥
विलोम गग नादत्रराहो कुर्याद्विपर्ययम्। तथा वक्रगतौ खेटे चालनस्य निधिस्त्वयम्॥ (भा0 ज्यो0, पृ॰ ११३)

2. (क) गतावधि दिनादिनाविगत मिष्टकालं धनं ऋणं तु खलु गम्यपंक्तिषु त्यजेत्स्ववारादिकम्।
अनेनगुणिता गतिश्चखरसैर्हृदंशादिक विपर्यय विलोमगेऽवधिग्रहैः स्फूटासंस्कृता॥
(वर्ष पत्री दीपक, पं॰ नारायण प्रसाद सीताराम मिश्र, पृ॰ १३, श्लो॰ १४)
(ख) गतैष्यदिवसाद्येन गर्तिनघ्नी खषड् ६० हता।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद ग्रहः॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ १८)
(ग) भारतीय ज्योतिष प्रवेश, डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा, पृ॰ ११३
(घ) भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग-१, पृ॰ १७

विशेष — ग्रह स्पष्टीकरण के लिए इष्टकाल पञ्चांग जिस स्थान का है उसी स्थान (नगर) का लेना चाहिये। अगर पञ्चांग जन्म स्थान का ही है तब इष्टकाल में कोई संस्कार नहीं करना पड़ता। अगर पञ्चांग एवं जन्मस्थान भिन्न-भिन्न स्थानों के हों तो जन्म स्थान के इष्टकाल को पञ्चांग के स्थान (नगर) का संस्कार द्वारा बना लेना चाहिये।

उदाहरण :- वि॰सं॰ २००१ वैशाख शुक्ल द्वितीय को २३/२२ इष्टकाल के ग्रह स्पष्ट करने हैं।

ग्रह पंक्ति शुक्रवार के ५/५१ इष्टकाल की है; अतः इष्टकाल से ग्रह पंक्ति आगे की हुई तथा ग्रह पंक्ति में से इष्टकाल को घटाना है, इसलिए यहाँ ऋण संस्कार हुआ :-

६ । ५ । ५१ पंक्ति के वारादि, २ । २३ । २२ इष्टकाल के वारादि [1]

ग्रह पंक्ति वै॰ शुक्ल ५ शुक्रवार इष्ट ५ । ५१

ग्रह	सूर्य	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
राशि	०	२	०	३	११	२	३	९
अंश	१३	२३	२२	२४	२७	०	८	८
कला	४३	०	१६	१६	२०	२३	५४	५४
विकला	२२	३३	५	४४	१०	४६	५०	५०
गति, क॰	५८	३४	१७	३	७४	५	३	३
वि॰	१२	२८	३९	४	१२	४८	११	११
मा/व॰	मा॰	मा॰	वक्री	मा॰	मा॰	मा॰	व॰	व॰

 ६ । ५ । ५१ पंक्ति के वारादि
− २ । २३ । २२ इष्टकाल के वारादि
 ३ । ४२ । २९ **ऋण चालन आया**

अब उपरोक्त नियमानुसार प्रक्रिया यह है—

सूर्य साधन :- चालन ५८ । १२ सूर्यगति

३ | १७४ । ३६ (५८ । १२ ३)
४२ | २४३६ । (५८ । १२ ४२)
 | ५०४
२९ | १६८२ । ३४८ (५८ । १२ २९)

१७४ । २४७२ । २१८६ । ३४८ ÷ ६०
लब्ध ५, शेष ४८

[६० से भाग देकर लब्ध को आगे की राशियों से जोड़ा]

१७४ । २४७२ । २१९१ ÷ ६०
लब्ध ३६, शेष ३१

१७४ । २५८ ÷ ६०
लब्ध ५१, शेष ४८

२२५ ÷ ६० = लब्ध - ३, शेष ३५

1. वार गणना रविवार से ली गयी है अर्थात् रविवार की १ संख्या, सोमवार की २, मंगलवार की ३ आदि जानें।

अतः ३° । ३५' । ४८" । ३१"' । ४८"

० । १३ । ४३ । २२ पंक्ति का सूर्य

\- ३ । ३५ । ४८ आगत फल घटाया

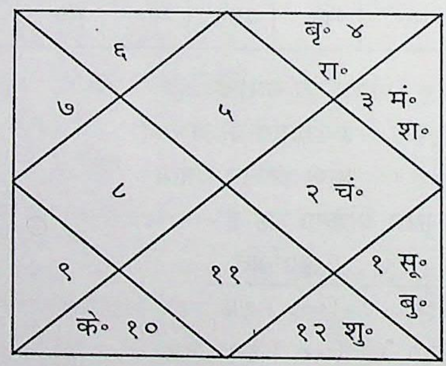
० । १० । ०७ । ३४ स्पष्ट सूर्य

इस तरह चन्द्रमा के सिवा भौमादि अन्य सभी ग्रहों का स्पष्टीकरण किया जाता है और इन्हें एकत्रित करके वर्ष कुण्डली में स्थापित करें –

वर्ष प्रवेश कालीन स्पष्ट ग्रह चक्र

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
राशि	०	१	२	०	३	११	२	३	९
अंश	१०	०	२१	२३	२४	२३	७	९	९
कला	७	२६	५२	२१	७	२०	७	५	५
विकला	३४	४७	४५	३१	३२	१०	४५	१५	१५
दैनिक	५८	८१७	३४	१७	३	७४	५	३	३
गति	१२	१५	२८	३९	४	१२	४८	११	११
मा॰/व॰ उ॰/अ॰	मा॰	मा॰	मा॰	व॰ उ॰	मा॰ उ॰	मा॰ उ॰	मा॰ उ॰	व॰ उ॰	व॰

वर्ष लग्न कुण्डली



अयनांश साधन :-

अयनांश निकालने की कई विधियाँ प्रचलित हैं। ग्रहलाघव और वर्ष पत्री दीपक की विधि निम्नलिखित हैं- शालि वाहन शाके में से ४४४ घटाकर शेष में से ६० का भाग (÷) देने से अयनांश निकल जाता है।[1]

उदाहरण :- शक सम्वत् १८६६

\- ४४४

६०) १४२२ (२३

१३८०

४२

1\. (क) शाके वेदाब्धि वेदो ४४४ नः षष्टिभक्तोऽयनांशकाः। (वर्ष फल पत्री, पृ॰ ३८, श्लो॰ १८)

(ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १४४, (ग) ग्रह लाघव रविचन्द्र, श्लो॰ ७

अतः अयनांश = २३ । ४२

दूसरी विधि :-

वर्तमान शक सम्वत् में १८०० घटाकर शेष में एक स्थान पर ७० से तथा द्वितीय स्थान में ५० से भाग देकर अंशादि तथा कलादि क्रमशः दो फलों के अन्तर में २२ । ८ । ३३ जमा करने से वर्षारम्भकालिक स्पष्ट अयनांश होंगे।[1]

उदाहरण :- शक सम्वत् १८४१
− १८००
४१ शेष

शेष में ४१ ÷ ७० (सत्तर का भाग दिया)
= लब्ध अंशादिफल - ० । ३५ । ८

४१ ÷ ५० लब्ध कलादिफल ० । ४९

० । ३५ । ० - ० । ० । ४९ = ० । ३४ । १९
+ २२ । ८ । ३३
= २२ । ४२ । ५२

वर्षारम्भकालिक अयनांश - २२ । ४२ । ५२

लङ्कोदय लग्न प्रमाण :-

मेषादि १२ राशियों के लङ्कोदयमान २७८ । २९९ । ३२३ । ३२३ । २९९ २७८ । २७८ । २९९ । ३२३ । २९९ २७८ ये हैं।[2]

लङ्कोदय लग्न प्रमाण

मेष	२७८	मीन
वृष	२९९	कुम्भ
मिथुन	३२३	मकर
कर्क	२२३	धन
सिंह	२९९	वृश्चिक
कन्या	२७८	तुला

लग्न साधन :-

जन्म पत्री एवं वर्षफल आदि की गणित में शुद्ध लग्न का साधन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है इसके लिए स्थानीय काल का ज्ञान होना चाहिए। सूर्य स्पष्ट प्रायः पञ्चांगों में प्रतिदिन होता है। यद्यपि यह सूर्य स्पष्ट जन्म समय के इष्टकाल का नहीं होता अतः इष्टकालिक सूर्य स्पष्ट में आयनांश जोड़ देने से तात्कालिक सायन सूर्य होता है। इस तात्कालिक सायन सूर्य के भुक्त या भोग्य अंशादि को

1. (क) वेदाब्ध्यब्ध्यूनः स्वरसहृतः शकोऽयनांशाः।
(भारतीय कुण्डली विज्ञान, कुण्डली प्रकरण, पृ॰ २६)
(ख) भारतीय ज्योतिष प्रवेश, डॉ. पुरुषोत्तम शर्मा
(ग) ग्रह लाघव रविचन्द्र
2. (क) लङ्कोदयादिघटिका गजभानि २७८ गोङ्कदस्रा २९९ स्त्रिपक्षदहनाः ३२३ क्रमगोत्क्रमस्थाः।
हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थैमेषादितोघटत उत्क्रमगास्तिवमे स्युः॥ (ग्रह लाघव, त्रि॰पु॰, श्लो॰ १)
(ख) लंङ्कोदयाविघटिका .... उत्क्रमतस्त्विमेस्युः। (भारतीय कुण्डली विज्ञान, पृ॰ २९)
(ग) ताजिक नीलकण्ठी, वाराणसी, सं॰ १९८८ ई॰, पृ॰ २४

स्वदेशीय उदयमान से गुणा करके ३० का भाग (÷) देने पर लब्ध पलादि भुक्त या भोग्य काल होता है- भुक्तांश को स्वोदय से गुणा करके ३० का भाग देने पर भुक्तकाल और भोग्यांश को स्वोदय से गुणा कर ३० का भाग देने पर भोग्यकाल आता है। इस भुक्त या भोग्यकाल को इष्ट घटी-पलों में घटाने से जो शेष रहे उसमें भुक्त या भोग्य राशियों के उदयमानों को यहाँ तक घटा सकें, घटाना चाहिए। शेष को ३० से गुणा कर अशुद्धोदयमान (जो राशि घटी नहीं है उसके उदयमान) से भाग देने पर जो अंशादि लब्ध आयें उनको क्रम में अशुद्ध राशि में घटाने और शुद्धि राशि में जोड़ने से सायन स्पष्ट लग्न होता है। इसमें अयनांश घटाने पर स्पष्ट लग्न आता है।[1]

उदाहरण :- इष्टकाल समय सूर्य स्पष्ट जन्म स्थान - आरा, इष्टकाल - २३ । २२ है।

० । १० । २८ । ५७	सूर्य स्पष्ट में
+ २३ । ४६ । ०	अयनांश जोड़ा
१ । ०४ । १४ । ५७	**सायन सूर्य**

यहाँ वृष राशि के सूर्य का भुक्तांश ४ । १४ । ५७ है और

भोग्यांश :-		
	१ । ० । ० । ०	एक राशि में से
	० । ४ । १४ । ५७	भुक्तांश घटाया
	२५ । ४५ । ०३	**भोग्यांश**

वृष राशि का भोग्यांश होने से, आरा के वृष राशि के उदयमान से गुणा किया :-

२५ । ४५ । ३ ´ २५४ = ६५४० । ४२ । ४२ इस संख्या के प्रथम अंक राशि में ३० से भाग दिया तो २१८ भोग्य पल आये। यहाँ पहली अंक राशि पल है, आगे वाली राशियाँ विपलादि हैं। गणित क्रिया में केवल पलों का उपयोग होता है इसलिए और राशियों का त्याग कर दिया तो २१८ ही राशि ली गयी।

इष्टकाल = २३ । २२ ´ ६० =

१४०२	पलात्मक इष्ट में
- २१८	भोग्य पल घटाये
११८४	**फल**

११८४	
३०४	मिथुन
८८०	

वृष राशि के उदयमान से गुणा करके फल निकाला गया था, अतः उसमें आगे वाली राशियों के उदयमान घटाये हैं।

---

1. (क) तत्काले सायनार्कस्य भुक्त भोग्यांशशङ्गुणात्। स्वोदयात्खाग्नि ३० लब्धं यद् भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत्॥
इष्टनाडी पलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयान्। शेषं खत्र्या ३० हतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्॥
अशुद्धशुद्धे भे हीनयुक्तनुर्व्ययनांशकम्। एवं लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, श्लो॰ २१, २२, २३)

(ख) तत्कालाऽर्कः सायनस्तस्य भोग्यैर्भागैर्निघ्नः स्वोदयः खाग्निभक्तः।
भोग्यं जह्यादिष्टनाडीपलेभ्यः शेषादम्या त्स्वोदयांश्चावशेषम्॥
त्रिंशनिघ्नमशुद्धाप्तभागाद्यं मेषपूर्वकैः। अशुद्धा आग्रहैर्युक्तं लग्नं स्याद्वययनांशकम्॥
(वर्ष पत्री दीपक, श्लो॰ २०, २१)

(ग) तत्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्ना भोग्यांशाः खत्र्यु ३० दधृता भोग्य कालः।
एवं यातांशैर्भवेद्यातकालो भोग्यः शोध्योऽभीष्टनाडीपलेभ्यः॥
तदनु जहीहि ग्रहोदयांश्च शेषं गगन गुणघ्नमनुशुद्ध दृल्लवाद्यम।
सहितमजादिग्रहैरशुद्धपूर्वैर्भवति विलग्नमदोऽयनांशहीनम्॥
(भारतीय कुण्डली विज्ञान, कुण्डली विधान प्रकरण, पृ॰ ३०)

३४२ कर्क
५३८
३४५ सिंह
१९३
१९३ ´ ३० = ५७९०

[यहाँ सिंह तक राशियों के उदयमान इष्टकाल के पलों में से घट गये हैं; अतः सिंह शुद्ध और कन्या अशुद्ध कहलायेगी।]

३३५)५७९०(७
३३५
२४४०
२३४५
९५ ´ ६०

[इसमें अशुद्ध राशि के उदयमान से भाग दिया।]

३३५)५७००(१७
३३५
२३५० = १७ अंश, १७ कला,
२३४५

राशि ५ शेष

५ । १७ । १७ । ०	सायन लग्न में से
– २३ । ४६ । ०	अयनांश घटाया
४ । २३ । ३१ । ०	**यह स्पष्ट लग्न है**

यहाँ सिंह राशि घट गई थी, अतएव लग्न के राशि स्थान में ५ माना जायेगा।

लग्न साधन में विशेषता :-

पूर्वोक्त रीति से साधित किया हुआ सूर्य का भुक्त अंश व भोग्यकाल यदि इष्टकाल की घटी या पल में न घट सके यानि इष्टकाल से न्यून या अधिक हो तो इष्ट-घटी-पलों को ३० से गुणा करें और सायन सूर्य (सूर्य जिस राशि में हो उसके उदयमान) से भाग दें। ऐसा करने पर जो अंशादिक लब्धि हो उनको यदि भुक्त काल हो तो घटा दें और यदि भोग्य काल हो तो उसी में जोड़ दें। इसी रीति से लग्न बन जाता है। यदि रात्रि में लग्न साधन कर रहें हों तो सूर्य में ६ राशिं और जोड़कर लग्न साधन कर लें। रात्रि के ही समय में यदि दशम लग्न साधनी हो तो उसमें भी ६ राशि और जोड़ देने से सूर्य का भुक्त और भोग्य काल सध जाता है। इसको भुक्त प्रकार कहते हैं।[1]

लग्न सारिणी द्वारा लग्न साधन :-

लग्न निकालने की सुगम विधि :- स्थानीय इष्टकाल बना लेने के पश्चात् अपने अभीष्ट काल का सूर्य स्पष्ट ग्रहण करें। सूर्य स्पष्ट जिस राशि के जितने अंश पर हो, लग्न सारिणी में उसी के सामने तथा सूर्य स्पष्ट के अंशों के कोष्ठक के नीचे जितने घड़ी-पल हों, उनमें अपने इष्ट के

---

1. (क) भोग्याऽल्पकालात्खत्रिघ्नात्स्वोदयाप्त लवादियुक्। रविरेवभवेल्लग्नं सषड्भार्कान्निशातनुः॥
(वर्ष पत्री दीपक, पं॰ नारायण प्रसाद सीताराम मिश्र, पृ॰ ४१, श्लो॰ २२)
(ख) भुक्तं भोग्यं स्वेष्टकालान्न शुद्ध्येत् त्रिंश ३० न्निघ्नात्स्वोदयाप्तं लवाद्यम्।
हीनं युक्तं भास्करे तत्तनुः स्यात् रात्रौ लग्नं भार्द्धयुक्ताद्रवेस्तु॥ (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ २७)
(ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान, कुण्डली विधान प्रकरण, पृ॰ ३२

घड़ी पल जमा कर देने से लग्न स्पष्ट जानने के लिए घड़ी पल लग्न सारिणी में जिसके सामने और जितने अंश के नीचे होगा, वही राश्यादि पल लग्न स्पष्ट होगा।[1]

उदाहरण :– वि॰सं॰ २००१ वर्षेष्टम् = २ । २३ घ॰ २२ प॰

सूर्य स्पष्ट ० । १० । २८ । ५७

लग्न-सारिणी में मेष राशि के सामने १० अंश के नीचे ०४ । ६ संख्या लिखी है, इसे इष्टकाल में जोड़ा।

२३ । २२	इष्टकाल में
+ ०४ । ०६	फल को जोड़ा
२७ । २८	**योगफल**

पुनः २७ । २८ को लग्न सारिणी में देखा तो २७ । २८ का निकटतम अंक २७ । २५ सिंह (४) राशि के २३ अंश के कोष्ठक में प्राप्त हुआ बस यही वर्ष प्रवेश के समय लग्न हुआ। लग्न मान – ०४ । २३°

पूर्वनत और पश्चिमनत साधन :–

भाव स्पष्ट करने के लिए प्रथम दशम भाव का साधन किया जाता है। इस भाव का गणित करने के लिए नतकाल जानने की आवश्यकता होती है, क्योंकि दशम भाव की साधनिका के लिए नतकाल ही इष्टकाल होता है। नतकाल ज्ञात करने के निम्न चार प्रकार हैं :–

१. दिनार्ध से पहले का इष्टकाल हो तो इष्टकाल को दिनार्ध में से घटाने से पूर्व नत होता है।

२. दिनार्ध के बाद का इष्टकाल हो तो दिनमान में से इष्टकाल घटाकर जो शेष बचे, उसको दिनार्ध में घटाने से पश्चिमनत होता है।

३. रात्रि अर्थ से पहले का इष्टकाल हो तो दिनमान को इष्टकाल में घटाने से जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोड़ने से पश्चिमनत होता है।

४. रात्रि अर्ध के बाद इष्टकाल हो तो ६० घटी में से इष्टकाल को घटाने से जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोड़ने से पूर्वनत होता है। इस नत को ३० में हीन करें तो वैसा ही उन्नत होता है अर्थात् पूर्वनत कम करें तो पूर्वोन्नत और पश्चिमनत कम करें तो पश्चिम उन्नत होता है।[2]

१. पूर्वनत का उदाहरण :–

इष्टकाल ६ । ४५, दिनमान ३२ । ६, रात्रिमान २७ । ५४, दिनार्ध १६ । ०३ (३२ । ६ ÷ २) है। इस उदाहरण में इष्टकाल दिनार्ध से पहले का है, अतः १६ । ०३ दिनार्ध में से ६ । ४५ इष्टकाल को घटाया तो ९ । १८ (१६ । ३ – ६ । ४५) पूर्वनत हुआ।

पूर्वनत ९ । १८ को ३० घटी में घटाया तो २० । ४२ यह पूर्वोन्नत हुआ।

---

1. (क) इष्टाऽर्क राश्यंशतले घटीपले स्वाभीष्टनाडी पल संयुतं तथा।
यद्राशिभागस्य तलेस्थितं भवेत्तदेव लग्नं च कलाऽनुमानतः॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ २४, श्लो॰ १०)
(ख) पंचांगदिवाकर, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी

2. (क) पूर्व नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवानिशोऽरिष्टघटीविहिनम्।
दिवानिशोऽरिष्टघटोषु शुद्ध द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, बनारस सं॰ १९९६, संज्ञा तन्त्र, अ॰ १, श्लो॰ २०)
(ख) रात्रेः शेषमितं युतं दिनदलेनाह्नोगतं शेषकं विश्लेष्यं खलुपूर्वपश्चिमनतं त्रिंशच्युतं नोन्नतम्।
(वर्ष पत्री दीपक, पं॰ नारायण प्रसाद सीताराम मिश्रा, श्लो॰ २४, पृ॰ ४४)
(ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान, कुण्डली विधान प्रकरण, पृ॰ ३४
(घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १६०

२. पश्चिमनत का उदाहरण :-

इष्टकाल २३ । २२, दिनमान ३२ । ६, रात्रिमान २७ । ५४ है। दिनमान ३२ । ६ का आधा किया तो दिनार्ध = ३२ । ६ ÷ २ = १६ । ३। यहाँ इष्टकाल दिनार्ध के बाद का है अतः नतकाल साधन के नियमानुसार ३२ । ६ दिनमान से २३ । २२ इष्टकाल को घटाया = ३२ । ६ - २३ । २२ = ८ । ४४ शेष, इसे दिनार्ध में घटाया तो (१६ । ३) - (८ । ४४) = ७ । १९ पश्चिमनत हुआ। इस पश्चिमनत ७ । १९ को ३० घटी में घटाया = ३० । ०० - ७ । १९ = २२ । ४१ यह पश्चिमोन्नत हुआ।

दशमलग्न साधन :-

दशम लग्न साधन में यदि पश्चिमनत हो तो भोग्य प्रकार से और पूर्वनत हो तो भुक्त प्रकार से लंकोदयमान द्वारा लग्न साधन के समान दशम भाव साधन होता है अर्थात् लंकोदय से भुक्त और भोग्य पलों का साधन करके लंकोदय राशि के प्रमाण से गुणा करें। फिर उस गुणित संख्या में ३० का भाग देकर पलादिकों को ग्रहण करें। फिर उन अंकों को पूर्वनत या परनत में घटावें फिर पहले लग्न साधन का जो क्रम बता आये हैं उसी के अनुसार साधन करने से दशम लग्न बन जाता है। भावार्थ यह है कि जब पूर्वनत हो तो पूर्वनत को ही इष्टकाल मानकर और परनत हो तो परनत को इष्टकाल मानकर लंकोदय राशि के सूर्य का भुक्त-भोग्य काल बनाकर शोधन करने से दशम लग्न सिद्ध होता है।'

उदाहरण :-

पश्चिमनत होने से भोग्य प्रकार से दशम साधन -

० । १० । ७ । ३४	सूर्य
+ ० । २३ । ४६ । ००	अयनांश
१ । ०३ । ५३ । ३४	**सायन सूर्य**
३०° । ००$^{क.}$ । ००$^{वि.}$	अंशों से
- ३ । ५३$^{क.}$ । ३४$^{वि.}$	सू॰ के भुक्तांश
भोग्यांश = २६ । ०६ । २६	

लंकोदय १		
मेष	२७८	मीन
वृष	२९९	कुम्भ
मिथुन	३२३	मकर
कर्क	३२३	धनु
सिंह	२९९	वृश्चिक
कन्या	२७८	तुला

अतः सूर्य वृष राशि का है, तो वृष राशि के लंकोदयमान (२९९) से भोग्यांशों को गुणा किया - २६° । ६' । २६" ´ २९९ = २६०° । ६' । ३४" भोग्य पल

नतकाल - ७ । १९ ´ ६० = ४३९ नतपल

४३९ । ०	नतपल में से
२६० । ६	भोग्यपल घटाये
१७८ । ५४	

यहाँ मिथुन राशि के पल नहीं घटते हैं, अतः मिथुन राशि ही अशुद्ध कहलायेगी :

१७८ । ५४ ´ ३० = ५३६७ । ० उसमें अशुद्ध राशिमान का भाग दिया ५३६७ ÷ ३२३ = १६ । ३६ । ५७ अंशादि हुआ।

---

1. (क) पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत्। (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, श्लो॰ २४)
   (ख) एवं लंकोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात्।
   पूर्व पश्चान्नतादन्यत् प्राग्वत्तद्दशमं भवेत्॥ (भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग-१, पृ॰ ३४)
   (ग) यत्पूर्वौन्नतषड्भयुक्तरवितः पश्चान्नतादित्यतो यल्लंकोदय-
   कैश्चलग्नामिव तन्माध्यंसषड् भं सुखम्॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ४५, श्लो॰ २४)
   (घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ १, पृ॰ १६१
   (ख) लङ्कोदयादिघटिका गजभानि २७८ गोङ्कदस्रा २९९ स्त्रिपक्षदहनाः ३२३ क्रमगोत्क्रमस्थाः।
   हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थैमेषादितोघटत उत्क्रमगास्त्विमेस्युः॥ (ग्रहलाघव॰)
   (ग) भारतीय ज्योतिष, पृ॰ १६२ नेमिचन्द्र शास्त्री

अतः वृष राशि का मान घट गया था, अतः अंशादि में दो राशि और जोड़ीः-

```
       १६ । ३६ । ५७
+ २ । ० । ०० । ०
─────────────────────
२ । १६ । ३६ । ५७      सायन दशम हुआ
- ० । २३ । ४६ । ०      अयनांश घटाया
─────────────────────
१ । २२ । ५० । ५७      दशम स्पष्ट हुआ।
```

यह दशम भोग्य प्रकार से हुआ।

भुक्तांश द्वारा दशम साधन का उदाहरण :-

सायन सूर्य १ । ३ । ५३ । ३४ पूर्वनत १७ । ९ है। सायन सूर्य वृष राशि का होने से भुक्तांशों को वृष के लंकोदयमान से गुणा किया। भुक्तांश ३ । ५३ । ३४ × २९९ = ३८ । २३ । ५६ । २६ भुक्तपल।

```
  १७ । ९       नतकाल
      ६०
─────────────
१०२९ । ०       नतपल
- ३८ । २३      भुक्तपल
─────────────
 ९९० । ३७
- २७८ । ००     मेष का मान घटाया
─────────────
 ७१२ । ३७
- २७८ । ००     मीन का मान घटाया
 ४३४ । ३७
- २९९ । ००     कुम्भ का मान घटाया
─────────────
 १३५ । ३७      यहाँ मकर राशि अशुद्ध हुई
```

[भुक्तांश पर से दशम का साधन करते समय उलटा घटाया जाता है।]

१३५ । ३७ × ३० = ४०६८ । ३० इसे अशुद्ध राशि मानसे भाग दिया।

४०६८ । ३० ÷ ३२३ = १२ । ३५ । ३९ अंशादि;

अशुद्ध राशि की संख्या में से इस अंशादि को घटाया -

```
     १० । ० । ० । ०
   - १२ । ३५ । ३९
─────────────────────
०९ । १७ । २४ । २१     सायन दशम में अयनांश घटाया
- ० । २३ । ४६ । ०      अयनांश
─────────────────────
 ८ । २३ । ३८ । २१     दशम स्पष्ट हुआ
```

अन्य भाव साधन की विधि :-

दशम भाव की राशि में छह जोड़ने से चतुर्थ भाव आता है। चतुर्थभाव में से लग्न को घटाने से जो शेष आये उसमें छह का भाग देकर लब्ध को लग्न में जोड़ने से लग्न की सन्धि; लग्न की सन्धि में इस षष्ठांश को जोड़ने से द्वितीय भाव; द्वितीय भाव में इस षष्ठांश को जोड़ने से धनभाव की सन्धि; इस सन्धि में षष्ठांश को जोड़ने से तृतीय भाव; तृतीय भाव में षष्ठांश जोड़ने से तृतीय भाव की सन्धि और इस सन्धि में षष्ठांश जोड़ने से चतुर्थ भाव होता है। एक राशि (३० अंश) में से इस षष्ठांश को घटाकर शेष को चतुर्थ भाव में जोड़ने से चतुर्थ की सन्धि; इस सन्धि में उसी शेष को जोड़ने से पंचम भाव और

पंचम भाव में इसी शेष को जोड़ने से षष्ठ भाव; षष्ठ भाव में इसी शेष को जोड़ने से रिपु भाव की सन्धि होती है।

लग्न में छह (६) राशि जोड़ने से सप्तम भाव, लग्न सन्धि में छह राशि जोड़ने से सप्तम भाव की सन्धि, द्वितीय भाव में छह राशि जोड़ने से अष्टम भाव, द्वितीय भाव की सन्धि में छह राशि जोड़ने से अष्टम भाव की सन्धि; तृतीय भाव में छह राशि जोड़ने से नवम भाव; तृतीय भाव की सन्धि में छह राशि जोड़ने से नवम भाव की सन्धि, चतुर्थ भाव में छह राशि जोड़ने से दशम भाव; चतुर्थ भाव की सन्धि में छह राशि जोड़ने से दशम भाव की सन्धि; पंचम भाव में छह राशि जोड़ने से एकादश भाव, पंचम भाव की सन्धि में छह राशि जोड़ने से एकादश भाव की सन्धि; षष्ठ भाव में छह राशि जोड़ने से द्वादश भाव और षष्ठ भाव की सन्धि में छह राशि जोड़ने से द्वादश भाव की सन्धि होती है।[1]

भाव साधन उदाहरण :-

१ । २२ । ५० । ५८ दशमभाव + ६ । ० । ० । ० = ७ । २२ । ५० । ५८ चतुर्थभाव, चतुर्थभाव ७ । २२ । ५० । ५८ – ४ । २३ । २५ । २७ लग्न = २ । २९ । २५ । ३१ ÷ ६ = ० । १४ । ५४ । १५ षष्ठांश।

४ । २३ । २५ । २७	लग्न में
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा
५ । ०८ । १९ । ४२	**लग्न की सन्धि**
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा
५ । २३ । १३ । ५७	**द्वितीय भाव**
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा
६ । ०८ । ०८ । १२	**द्वितीय भाव की सन्धि**
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा
६ । २३ । ०२ । २७	**तृतीय भाव**
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा
७ । ०७ । ५६ । ४२	**तृतीय भाव की सन्धि**
+ ० । १४ । ५४ । १५	षष्ठांश जोड़ा

---

1. (क) लग्नं चतुर्थात्संशोध्य शेषषड्भि ६ 'वभाजितम्। राश्यादि योजयेल्लग्ने सन्धिः स्याल्लग्नवित्तयोः॥
सन्धिः षडंशयुक्तो धनभावो भवेत्स्फुटः। धनभावः षडंशाढयः सन्धिर्धनतृतीययोः॥
षडंशः संयुतः सन्धिमस्तृतीयोभाव उच्यते। षडंशाढ्यस्तृतीयः स्यात्सन्धिर्भ्रातृचतुर्थयोः॥
तृतीयसन्धिरेकाढ्यस्तुर्यम सन्धिर्भवेदिह। द्वयाढ्यस्तृतीयभावोऽपि पुत्रभावभवेत्स्फूटः॥
त्र्याढ्यो द्वितीयसन्धिः स्यात्सन्धिः पञ्चमभावजः। धनभावो वेदयुतो रिपुभावः प्रजायते॥
लग्नसन्धिः पञ्चयुतः सन्धिः स्याद्रिपुभावजः। लग्नाद्याः सन्धिसहिता भावाः षड्राशिसंयुताः।
सप्तमाद्या भवन्तीह भावाः सर्वे ससन्धयः॥ (वर्ष पत्रीदीपक, पृ॰ ५३, श्लो॰ २६-३१)

(ख) सषड्भे लग्नखे जायातुर्यौ लग्नोनतुर्यतः। षष्ठांशयुक्तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात्।
त्रयः ससन्धयो भावाः षष्टांशोनैकयुक्सुखात् अग्रे त्रयः षड षडेवं ते भार्द्धयुक्ताः परेऽपिषट।
खेटे भावसमे पूर्ण फलं सन्धिमें तु खम॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, श्लो॰ २४-२६)

(ग) वर्ष फल विचार डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', अ॰ ७, पृ॰ ६५, ६६

(घ) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ २, पृ॰ १६८

(ङ) भारतीय कुण्डली विज्ञान-१, पृ॰ ३६

(च) पंचांग दिवाकर, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, सं॰ २०६१, पृ॰ १७७

(छ) वर्ष फल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, संस्करण २००.., पृ॰ ५५

७ । २२ । ५० । ५७	**चतुर्थभाव**
+ ० । १५ । ५ । ४५	शेष को जोड़ा
८ । ०७ । ५६ । ४२	**चतुर्थभाव की सन्धि**
+ ० । १५ । ०५ । ४५	शेष को जोड़ा
८ । २३ । ०२ । २७	**पंचम भाव**
+ ० । १५ । ०५ । ४५	शेष जोड़ा
०९ । ०८ । ०८ । १२	**पंच भाव की सन्धि**
+ ० । १५ । ५ । ४५	शेष जोड़ा
९ । २३ । १३ । ५७	**षष्ठभाव**
+ ० । १५ । ०५ । ४५	शेष को जोड़ा
१० । ०८ । १९ । ४२	**षष्ठभाव की सन्धि**
+ ० । १५ । ५ । ४५	शेष को जोड़ा
१० । २३ । २५ । २७	**सप्तम भाव**

[एक राशि (३० अंश) में षष्ठांश घटाया - ३० । ० । ०
- १४ । ५४ । १५
० । १५ । ०५ । १५]

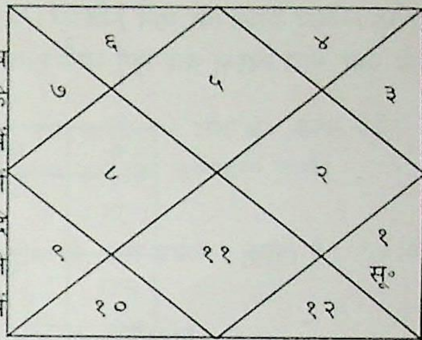
लग्न सन्धि ५ । ८ । १९ । ४२ + ६ राशि = ११ । ८ । १९ । ४२ सप्तम भाव सन्धि
द्वितीय भाव ५ । २३ । १३ । ५७ + ६ राशि = ११ । २३ । १३ । ५७ अष्टम भाव
द्वितीय भाव सन्धि ६ । ८ । ८ । १२ + ६ = ० । ८ । ८ । १२ अष्टम भाव सन्धि
तृतीय भाव ६ । २३ । २ । २७ + ६ = ० । २३ । २ । २७ नवम भाव
तृतीय भाव सन्धि ७ । ७ । ५६ । ४२ + ६ = १ । ७ । ५६ । ४२ नवम भाव की सन्धि
चतुर्थ भाव ७ । २२ । ५० । ५७ + ६ = १ । २२ । ५० । ५७ दशम भाव
चतुर्थ भाव की सन्धि ८ । ७ । ५६ । ४२ + ६ = २ । ७ । ५६ । ४२ दशम सन्धि
पंचम भाव ८ । २३ । २ । २७ + ६ = २ । २३ । २ । २७ एकादश भाव
पंच भाव सन्धि ९ । ८ । ८ । १२ + ६ = ३ । ८ । ८ । १२ एकादश भाव सन्धि
षष्ठ भाव ९ । २३ । १३ । ५७ + ६ = ३ । २३ । १३ । ५७ द्वादश भाव
षष्ठ भाव की सन्धि १० । ८ । १९ । ४२ + ६ = ४ । ८ । १९ । ४२ द्वादश सन्धि
स्पष्टता के लिए चक्र निम्न है

तन्वादिद्वादशभावाः ससन्धयःस्यः [1]

	तनु॰	स॰	धन	स॰	भ्रातृ	सं॰	सुख	सं॰	पुत्र॰	सं॰	शत्रु	सं॰
रा॰	४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	१०
अं॰	२३	८	२३	८	२३	७	२२	७	२३	८	२३	८
कां	२५	१९	१३	८	२	५६	५०	५६	२	८	१३	१९
वि॰	२७	४२	५७	१२	२७	४२	५७	४२	२७	१२	५७	४२
	स्त्री॰	**स॰**	**आयु**	**स॰**	**धर्म**	**स॰**	**कर्म**	**सं॰**	**आय**	**सं॰**	**व्यय**	**सं॰**
रा॰	१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३	४
अं॰	२३	८	२३	८	२३	७	२२	७	२३	८	२३	८
क॰	२५	१९	१३	८	२	५६	५०	५६	२	८	१३	१९
वि॰	२७	४२	५७	१२	२७	४२	५७	४२	२७	१२	५७	४२

1. (क) पूर्व गणित को संग्रह करके लिखा है। (ख) ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, द्वादश भाव साधन
(ग) वर्ष फल दर्पण, डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली, संस्करण २००५, पृ॰ ५६

चलित चक्र और ग्रह भाव फल :-



चलित चक्र ज्ञात करने के लिए ग्रह स्पष्ट और भाव स्पष्ट के साथ तुलनात्मक विचार किया जाता है। यदि ग्रह के राश्यादि भाव राश्यादि के तुल्य हों तो वह ग्रह उस भाव में और उसके राश्यादि भाव सन्धि के राश्यादि के समान हों अथवा भाव के राश्यादि से आगे और भाव सन्धि के राश्यादि से पीछे हों तो भाव सन्धि में एवं आगे वाले या पीछे वाले भाव के राश्यादि के समान हों तो आगे या पीछे के भाव में ग्रह को समझना चाहिए। ग्रह यहाँ स्थित हो वहाँ का न्यूनाधिक फल देता है।[1]

उदाहरण :- सर्वप्रथम सूर्य के साथ विचार किया है- सूर्य स्पष्ट ० । १० । ७ । ३४ है और भाव स्पष्ट में अष्टम, आयु भाव की सन्धि १२ । ८ । ८ । १२ है, सूर्य के अंश सन्धि के अंशों से आगे हैं अतः सूर्य नवम भाव में माना जायेगा। इस प्रकार अन्य ग्रहों का भी विचार करना चाहिए।

विंशापक बल साधन :-

सभी ग्रहों का भाव विंशोपक बल साधन अर्थात् कौन ग्रह किस भाव में कितने विश्वा फल देगा इसके लिए जिस भाव तथा सन्धि में ग्रह विद्यमान हो, उस ग्रह और सन्धि का अन्तर करें, इसके पश्चात् उस अन्तर का बीस (२०) से गुणा करें। ऐसा करने पर भाव और सन्धि में जो अन्तर हो उसको उसी से भाग दे दें। भाग देने पर जो अंशादिक लब्ध हों वे ही विंशोपक कहे जाते हैं। विंशोपक का अभिप्राय है कि अमुक ग्रह इतने विश्वा फलदायक होगा।[2]

जैसे :- सू॰ २ । १० । ४२ । ३५ इसके समीप सन्धि २ । २८ । १४ । ४१ दोनों का अन्तर (२ । २८ । १४ । ४१ - २ । १० । ४२ । ३५) ० । १७ । ३२ । ०६। यह शेष अंशादि रहे, इनको २० से गुणा किया तो २५० । ४२ । ०० भाज्य हुआ और अब चतुर्थ भाव २ । १२ । ४५ । २६ की सन्धि २ । २८ । १४ । ४१ का अन्तर ० । १५ । ३९ । १५ शेष रहे। यह भाजक हुआ। इसमें भाग देने के लिए भाज्य-भाजक दोनों का एक जातीय करके ६० से गुणा किया तो १२६२५२० संख्या हुई और भाजक को एक जातीय किया तो ५७३५५ हुए। इनसे भाग दिया तो २२ । ०१ यह सूर्य का विंशोपक बल हुआ। इसी प्रकार चन्द्र-मंगल आदि ग्रहों का भी विंशोपक फल होता है।

पंचवर्ग बल विचार :-

जो ग्रह अपनी राशि में हो तो उसका बल ३० जानना, जो ग्रह अपने उच्च में हो उसका २० बल होता है तथा अपनी हद्दा में विद्यमान ग्रह का बल १५ होता है। अपने द्रेष्काण में १० का बल अपने नवांश में स्थित ग्रह का ०५ बल होता है। अपने-अपने अधिकार में जो बल कहा गया। उसी के अनुसार जानना और जो अपने मित्र सम शत्रु के अधिकार में हो उसका विभाग इस प्रकार है कि जो ग्रह अपने मित्र के अधिकार में हो उसका उक्त बल से चौथाई हीन बल होता है। जो ग्रह अपने सम के अधिकार में हो उसका आधा बल जानना और जो ग्रह अपने शत्रु के अधिकार में हो उसका चौथाई बल जानना। जैसे जो ग्रह अपनी राशि में हो उसका बल ३० का और मित्र राशि में हो तो चौथाई कम अर्थात् २२ । ३० का और समराशि में आधा १५ बल तथा शत्रु की राशि में चौथाई ७ । ३० का बल

---

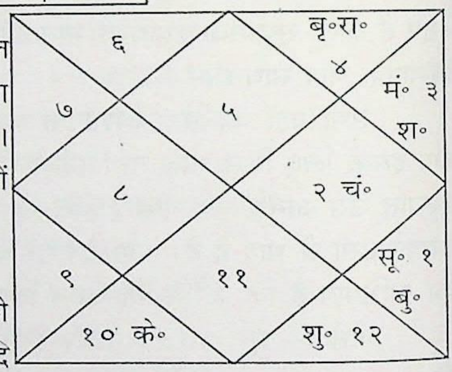
1. (क) भारतीय कुण्डली विज्ञान, भाग-१, पृ॰ ३८, (ख) वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ५५
   (ग) (भा॰ज्यो॰, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १७०) (घ) (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ २८)
2. (क) (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, पृ॰ २५, श्लो॰ २९) (ख) भारतीय कुण्डली विज्ञान, भाग-१, पृ॰ ३८,

जानना, इस प्रकार गृह, हद्दा, द्रेष्काण, नवांश को ही केवल ग्रहण करें इस बल को एकत्रित करके चार का भाग देकर विंशोपक बल निकालें। पाँच विस्वा से कम बलवान ग्रह हीनबली, १० विस्वा तक मध्य बली और बीस विस्वा कर पूर्ण बली होता है।[1] सुगम रीति से जानने के लिए आगे चक्र देखें–

स्वगृहादिबलविभागचक्र

०	स्व०	मित्र०	सम०	शत्रु०
गृह	३०	२२	१५	७
	०	३०	०	३०
हद्दा	१५	११	७	३
	०	१५	३०	४५
द्रे०	१०	७	५	२
	०	३०	०	३०
नवां०	५	३	२	१
	०	४५	३०	१५

वर्ष कुण्डली



उदाहरण :– यहाँ सूर्य मंगल के गृह हैं और मंगल उसका शत्रु है; अतः सूर्य का गृह बल ७ । ३० हुआ, चन्द्रमा वर्ष कुण्डली में शुक्र के गृह है, अतः शुक्र चन्द्रमा का शत्रु है। अतः चन्द्रमा का गृह बल ७ । ३० हुआ इसी प्रकार सभी ग्रहों का बल जानें।

उच्च बल साधन :–

जिस किसी ग्रह का उच्च बल जानना हो उस ग्रह को नीच राशि के अंश से घटाना चाहिए। इस प्रकार घटाने पर यदि राशि ६ से अधिक बचे तो; उसको १२ में घटा दें जो शेष बचे उसे अंश बना लें। फिर उस अंश में ९ का भाग दें। ऐसा करने पर जो कलादि लब्ध होगी, वही उच्च बल होगा।[1]

उदाहरण :– सूर्य स्पष्ट १० । २१ । १६ । ०० है। इसमें सूर्य का नीच ६ राशि १० अंश कम किया तो ४ । ११ । ०६ । ०० शेष रहा

---

१. (क) त्रिंश ३० न्मितस्स्वीयगृहे निजोच्चे नख २० स्वहद्दासु तिथि १५ प्रमाणम्।
द्रेष्काणके स्वस्य दिङ्मित १० स्वमुशल्लहे बाण ५ मितं बलं स्यात्॥
स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्धे पादोनमर्द्ध समभेऽरिभेंघ्रिः।
यथाबलं तुङ्गबलत्तु तेन समन्वितं वर्गबलम्बलं स्यात्॥
वीयकतावेदहताप्तवीर्ये दशाधिको पूर्ण बलो ग्रहः स्यात्।
अधोस्य पञ्चाऽवधिमध्यवीर्यस्तन्न्यूनतायामिहहीनवीर्यः॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ० ७६, श्लो० ६७-६९)

(ख) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ० ४, पृ० ३७२

(ग) त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे हद्देऽक्षचन्द्रा दशकं दृकाणे।
मुसल्लहे पञ्चालवाः प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्याः॥
स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्धे पादोनमद्धं समभेरिभेऽङ्घ्रिः।
एवं समानीय बलं तदैक्ये वेदोद्धृते हीनबलः शरोनः॥ (ता. नील., अ० १, पृ० ३१, श्लो० ३९, ४०)

(घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं० पन्नालाल ज्योतिषी, पृ० ५५

१. (क) नीचोनितो ग्रहः षड्भाधिको मण्डल २१ शोधितः। शेष स्यांशा नन्दभक्ता बलमुच्चस्य जायते॥
नीचोग्रहान्तरं कार्यं षड्भादल्पं यथा भवेत्। तदांशांक ९ लवः स्वोच्चबलं स्यात्ताजिकेस्फुटम्॥
(वर्ष पत्री दीपक, पृ० ७१, श्लो० ५७-५८)

(ख) तत्सप्तमं नीचमनेन हीनो ग्रहोऽधिकश्चेद्रसभाद्विशोध्यः।
चक्रात्तदंशाङ्कलवो बलं स्यात्............शाः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ० १, श्लो० ३२, पृ० २८)

रा॰ अं॰ क॰ वि॰
१० । २१ । १६ । ००
− ६ । १० । ० । ०
४ । ११ । १६ । ० शेष

अब शेष के अंश बनाए तो १३१ । १६ । ०० को ९ से भाग दिया तो १४ अंश ४३ कला बनी।

अतः सूर्य का उच्च बल १४° । ४३' हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का उच्चबल जानें।

ग्रहों का हर्ष बल स्थान :-

ताजिक में ग्रह बल को देखने के लिये जो पद्धति प्रचलित है, उसे हर्षबल कहते हैं। ग्रहों के हर्षबल चार प्रकार के होते हैं।

१. स्थानबल, २. स्वभोच्चबल, ३. स्त्री-पुरुषबल और ४. दिन-रात्रिबल।

१. स्थान बल :- सूर्य वर्ष लग्न से ९वें, चन्द्रमा वर्ष लग्न से तीसरे, मंगल वर्ष लग्न से छठे, बुध लग्न में, गुरु ग्यारहवें, शुक्र पांचवें और शनि वर्ष लग्न से १२वें स्थान में हो तो ५ हर्षबल देता है।

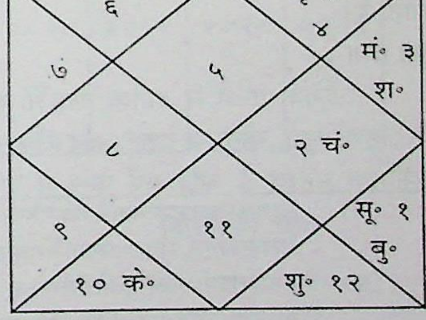
२. स्वभोच्चबल :- जो ग्रह वर्ष कुण्डली में अपनी राशि का अथवा अपने उच्च का हो तो ५ हर्षबल प्राप्त करता है- अर्थात् सूर्य १ । ५, चन्द्रमा २ । ४, मंगल १ । ८ । १०, बुध ३ । ६, बृहस्पति १२ । ४, शुक्र २ । ७ । १२, शनि १० । ११ । ७ इन राशियों में ५ बल देते हैं।

३. स्त्री-पुरुषबल :- स्त्री ग्रह वर्ष लग्न से १ । २ । ३ और ७ । ८ । ९ इन भावों में और पुरुष ग्रह वर्ष लग्न से ४ । ५ । ६ और १० । ११ । १२ इन भावों में ५ बल देते हैं। चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि स्त्री ग्रह है। और सूर्य, मंगल तथा गुरु पुरुष ग्रह हैं। ताजिक में नपुंसक ग्रह कोई नहीं है।

४. दिन-रात्रि बल :- यदि वर्षेष्ट रात्रि का हो तो स्त्री ग्रह (चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि) ५ बल देते हैं और यदि दिन का इष्ट हो तो पुरुष ग्रह (सूर्य, मंगल, बृहस्पति) ५ हर्ष बल देते हैं।[1]

पूर्वोक्त चारों प्रकार के हर्षबल में पाँच-पाँच विश्वा का बल होता है। जिस ग्रह में चारों प्रकार का बल पाया जाये वह पूरे २० विश्वा का बलवान् माना जायेगा और हर्षित ग्रह अपनी दशा में महत्त्वपूर्ण फल दिखाते हैं।

वर्ष कुण्डली



उदाहरण :- २ । २३ । २२ वारेष्टः

१. स्थान बल :- सूर्य को ५ बल प्राप्त हुए।

२. स्वभोच्च बल :- सूर्य को ५, चन्द्र को ५, गुरु को ५, शुक्र को ५ बल प्राप्त हुए।

३. पुरुष/स्त्री बल :- बुध को ५ बल, शुक्र को ५ बल, मंगल को ५ और गुरु को ५ बल प्राप्त हैं।

४. दिवा-रात्रि बल :- यहाँ वर्ष लग्न दिन का है अतः सूर्य, मंगल, बृहस्पति ग्रहों को ५-५ हर्षबल हुए। स्पष्टता के लिए हर्षबल चक्र निम्न है।

---

1. (क) नन्दत्रिषड्लग्नभवर्क्षपुत्रव्यया इनाद्वर्षपदं स्वभोच्चम्।
त्रिभं त्रिभं लग्नभतः क्रमेण स्त्रीणां नृणां रात्रिदिने च तेषाम्॥ (ता. नी., अ॰ २, पृ॰ १०८, श्लो॰ ६२)

(ख) नन्दाऽग्नितर्केन्दुशिवेष्विनाख्यास्सूर्यादिकानां स्वगृहन्निजोचन्।
पुंस्त्रीखगानान्तनुतस्त्रयञ्च निशादिनं स्त्रीनरसंज्ञितानाम्॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ १०५)

(ग) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८३

(घ) पंचाङ्ग दिवाकर, पं॰ देवीदयालु ज्योतिषी, सं॰ २०६१, पृ॰ २०७

(ङ) भारतीय कुण्डली विज्ञान, भाग-३, वर्ष कुण्डली विज्ञान प्रकरण, पृ॰ ७

अथ हर्षबल चक्रम्

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
स्थानबल	५	०	०	०	०	०	०
स्वभोच्चबल	५	५	०	०	५	५	०
पुरुष-स्त्री बल	०	०	५	५	५	५	०
दिवा-रात्रि बल	५	०	५	०	५	०	०
योग	**१५**	**५**	**१०**	**५**	**१५**	**१०**	**०**

जिस ग्रह का हर्ष बल ५ विश्वा हो वह अल्पबली, १० विश्वा हो वह मध्यबली, १५ विश्वा हो वह पूर्ण बली और शून्य विश्वा हो वह निर्बल माना जाता है। हर्षित ग्रह अपनी दशा में अच्छा फल देता है।

मुन्था दशा साधन :-

नवग्रहों के समान ताजिक शास्त्र में मुन्था भी एक ग्रह माना गया है। इसकी वार्षिक गति १ राशि, मासिक गति २॥ अंश तथा दैनिक गति ५ कला है। जन्म के समय में जो लग्न हो, वह लग्न की मुन्था होती है। वह मुन्था प्रति वर्ष एक-एक राशि का भोग करती हुई भ्रमण करती है। जैसे जन्म लग्न कन्या है तो उस वर्ष भर कन्या राशि पर ही मुन्था रहेगी, दूसरे वर्ष तुला राशि पर तीसरे वर्ष वृश्चिक राशि पर और चौथे वर्ष धन राशि पर होगी। इसको स्पष्ट करने के लिए जन्म लग्न राशि की संख्या में गत वर्ष की संख्या को जोड़कर जो योगफल आए उसे १२ से भाग देकर जो संख्या शेष रहे, उसी राशि अंक पर मुन्था स्थापित करें।[1]

उदाहरण :-

जन्म लग्न स्पष्ट २ । १३ । २१ । ५३ (मिथुन)

गत वर्ष + ३६ । ० । ० । ०

३८ । १३ । २१ । ५३ ÷ १२ (मात्र ३८ में भाग)

लब्धि ३, शेष २ अर्थात् मुन्था ३७वें वर्ष में मिथुन राशि १३ अंश, २१ कला, ५३ विकला पर स्पष्ट है।

मुद्दा दशा :-

ताजिक ग्रन्थों में अनेक दशाओं की चर्चा है जैसे- पात्यांश, तासीर, हीनांश, भाव तासीर, काल होरा, हद्दा, मुद्दा, बलराम दशा आदि। किन्तु वर्ष फल में मुद्दा दशा सर्वत्र मान्य है। वर्ष में इस दशा का सर्वाधिक महत्त्व है और वर्ष फल में जब तक इस दशा को स्पष्ट नहीं किया जाता, तब तक वर्ष

1. (क) स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान् मुथहा भ्रमोऽतः।
स्वजन्मलग्नं रवितष्टाब्दशरद्युतं सा ममुखेन्थिहा स्यात्॥ (ता. नी., अ॰ १, पृ॰ ४९, श्लो॰ ६६)

(ख) सम्प्राप्तवर्षप्रमिनिं पतिगर्भजेच्च सूर्यांकसमानभावे।
सम्भूतिलग्नान्मुथहास्थितिः स्यात्तद्राशिगाब्दे जननौदयांशैः॥
वर्षेण भुङ्क्ते मुथहैकराशिं मासेन भागद्वितयं दलाख्यम्।
कलाश्च पंचैव दिने नूनं न तद्राशिनाथो मुथहाधिपः स्यात्॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ५९,)

(ग) मेषादिजन्मलग्नं च गतवर्षाणि योजयेत्। द्वादशेन हरेद्भागं शेषं मेषादि चेन्थिहा॥
याताब्दसंख्याद्रबिभिविभक्ताच्छेषेन्थिहास्यादथ जन्मलग्नात्।
जन्मांगभागैः सहिता लवाद्यास्तात्कालिका साद्यगतिः प्रयुक्ता॥
मुन्था गतिः प्रतिदिनं शरलिप्तिकाश्च यत्स्थानगा भवति उद्भवने नियोज्या।
सौम्यान्विता स्वपतिना सहितेक्षिता चेत् सौख्यार्थदाविविधकार्यकरा निरुक्ता॥

(वर्ष पत्री दीपक, पं॰ नारायण प्रसाद सीताराम मिश्र)

फल अधूरा ही माना जाता है। विविध प्रकार के भाव फल से उत्पन्न फल ग्रहों की दशा में होता है इसलिए मुद्दा दशा का ज्ञान आवश्यक है।[1]

मुद्दा दशा साधन :- अश्विनी से जन्म नक्षत्र तक गिनने से जो संख्या हो उसमें गत वर्ष संख्या को जोड़ देना चाहिए। योगफल में से 2 घटाकर अवशेष में ९ का भाग देने से जो शेष रहें वह आ॰ चं, कु आदि क्रम से दशेश जानना जैसे जन्म नक्षत्र कृत्तिका है ३, गत वर्ष संख्या ३६, इनका जोड़ ३९ हुआ, इसमें दो घटाये ३७ रहे अब इसे ९ का भाग दिया ३७ ÷ ९ लब्ध ४ शेष १ अर्थात् सूर्य की दशा प्रथम हुई, २ शेष में चन्द्रमा, ३ में मंगल, ४ में राहु, ५ में गुरु, ६ में शनि, ७ में बुध, ८ में केतु और ९ में शुक्र की दशा होती है। विंशोत्तरी के दशा वर्ष सूर्य ६, चन्द्रमा १०, मंगल ७, राहु १८, बृहस्पति १६, शनि १९, बुध १७, केतु ७, शुक्र २० हैं इन्हें तीन से गुणा कर वर्ष के दिन होते हैं। जैसे सूर्य के १८ दिन, चन्द्रमा के ३०, मंगल के २१, राहु के ५४, बृहस्पति के ४८, शनि के ५७, बुध के ५१, केतु के २१ और शुक्र के २० दिन होते हैं।[2]

विंशोत्तरी मुद्दा दशा के मास एवं दिन

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र
मास	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दिन	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०

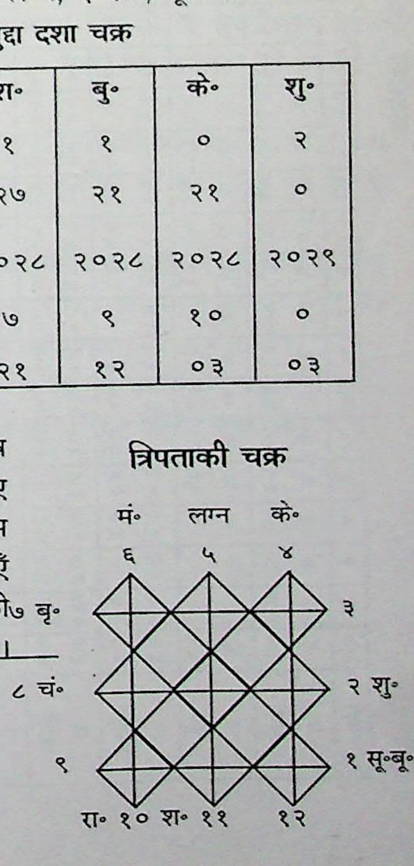
वर्ष कुण्डली में विंशोतरी मुद्दा दशा लिखने का उदाहरण :- जन्म नक्षत्र कृत्तिका है, इसकी संख्या ३ है। गत वर्ष ३६ + ३ = ३९ − २ = ३७ ÷ ९ = ४ लब्ध, १ शेष, सूर्य दशा में वर्ष प्रवेश हुआ अतएव प्रारम्भ में सूर्य दशा रखकर चक्र बनाया जायेगा। **मुद्दा दशा चक्र**

ग्रह	सू॰	चं॰	मं॰	रा॰	बृ॰	श॰	बु॰	के॰	शु॰
मा॰	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दि॰	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०
सं॰	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२९
मा॰ ०	०	१	२	४	५	७	९	१०	०
ता॰ ३	२१	२१	१२	०६	२४	२१	१२	०३	०३

त्रिपताकी चक्र साधन :-

वर्ष कुण्डली में त्रिपताकी चक्र का अपना विशेष महत्त्व है। अभीष्ट वर्ष में शारीरिक अरिष्ट जानने के लिए इस चक्र की कल्पना की गई है। इस चक्र की रचना इस प्रकार की जाती है। खड़ी तथा तिरछी तीन-तीन रेखाएँ खींचकर खड़ी तथा तिरछी रेखाओं के मध्य अग्र को मिलाने वाली अन्य रेखा खींचने से निर्दिष्ट चक्र बनता है।

त्रिपताकी चक्र



1. (क) (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ११०, श्लो॰ १)
   (ख) वर्ष फल दर्पण, पृ॰ ११८
2. (क) (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ११०)
   (ख) ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ १६६, श्लो॰ ४
   (ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग-३ पृ॰ १७

लग्न सारिणी[1] :-

अक्षांश २७° **पलभा ६ /६ /५०**

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
०	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	४°	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६
मेष	५०	५७	४	१२	१९	२६	३३	४१	४९	५७	६	१४	२२	३१	३९	४७	५६	४	१२	२१	२९	३७	४६	५४	२	११	१९	२७	३६	४४	५२
१	६	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११
वृष	५२	१	९	१७	२६	३४	४२	५१	१	११	२९	३१	४१	५१	१	११	२२	३२	४२	५२	२	१२	२२	३२	४२	५२	३	१३	२३	३३	४३
२	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७
मिथुन	४३	५३	३	१३	२३	३३	४४	५४	५	१६	२८	३९	५१	२	१४	२५	३६	४८	५९	११	२२	३४	४५	५७	८	१९	३१	४२	५४	५	१७
३	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२	२३
कर्क	१७	२८	३९	५१	२	१४	२५	३७	४८	००	११	२३	३५	४६	५८	९	२१	३३	४४	५६	७	१९	३१	४२	५४	५	१७	२९	४०	५२	३
४	२३	२३	२३	२३	२३	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८	२८
सिंह	३	१५	२७	३८	५०	१	१३	२५	३६	४७	५९	१०	२१	३२	४४	५५	६	१८	२९	४०	५२	३	१४	२५	३७	४८	५९	११	२२	३३	४५
५	२८	२८	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३४	३४	३४
कन्या	४५	५६	७	१८	३०	४१	५२	०४	१५	२६	३८	४९	००	११	२३	३४	४५	५७	८	१९	३१	४२	५३	४	१६	२७	३८	५०	१	१२	२४
६	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९	३९	४०
तुला	२४	३५	४६	५७	९	२०	३१	४३	५४	६	१७	२९	४१	५२	०४	१५	२७	३९	५०	२	१३	२५	३७	४८	००	११	२३	३५	४६	५८	०९
७	४०	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२	४२	४३	४३	४३	४३	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५	४५	४५
वृश्चिक	९	२१	३३	४४	५६	७	१९	३१	४२	५३	५	१६	२८	३९	५१	२	१४	२५	३६	४८	५९	११	२२	३४	४५	५६	०८	१९	३१	४२	५४
८	४५	४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०	५०	५१
धनु	५४	५	१६	२८	३९	५१	२	१४	२४	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४	४५	५५	५	१५	२५	३६	४५	५५	५	१५	२६	३६	४६	५६	०६
९	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५	५५	५५
मकर	६	१६	२६	३६	४६	५६	०७	१७	२५	३३	४२	५०	५८	७	१५	२३	३२	४०	४८	५७	५	१३	२२	३०	३८	४७	५५	३	१२	२०	२८
१०	५५	५५	५५	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५९	५९
कुम्भ	२८	३७	४५	५३	२	१०	१८	२७	३४	४१	४८	५६	०३	१०	१७	२४	३२	३९	४६	५३	१	८	१५	२२	३०	३७	४४	५१	५९	६	१३
११	५९	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२
मीन	१३	२०	२७	३५	४२	४९	५६	४	११	१८	२५	३३	४०	४७	५४	१	९	१६	२३	३०	३८	४५	५२	५९	७	१४	२१	२८	३६	४३	५०

१. पञ्चांग दिवाकर पं० पन्ना लाल ज्योतिषी, सं० २०६१, पृ० १७२

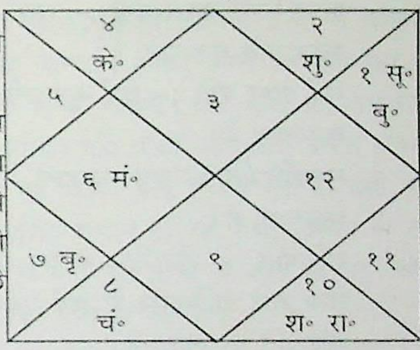
इसमें मध्य रेखा के ऊर्ध्व भाग पर वर्ष लग्न को रखकर अन्य रेखाओं के अग्र पर अन्य राशियों को क्रम से रखा जाता है। तदनन्तर उन राशियों पर ग्रह स्थापन करने के लिए निम्न क्रिया करें। त्रिपताकी का चन्द्रमा निकालने के लिए वर्ष प्रवेश की संख्या को ९ का भाग दें। जो शेष बचे जन्म कुण्डली में जिस राशि में चन्द्रमा स्थित है, उससे आगे उतने भाव गिनकर प्राप्त राशि अंक पर चन्द्रमा लगावें। शेष ग्रहों के लिए वर्ष प्रवेश संख्या में ४ द्वारा भाग दें। शेष को जन्म स्थान के ग्रहों से यहाँ वे स्थित हैं, उतना आगे गिनकर चक्र में लिखें। परन्तु यहाँ यह स्मरण रहे कि राहु-केतु अपनी राशि से उल्टे चलते हैं उसी अनुसार पीछे की राशि में लिखें।[1]

उदाहरण :-

वर्ष प्रवेश संख्या ३७ है पूर्वोक्त नियमानुसार ग्रहों को त्रिपताकी चक्र में रखने के लिए जन्म कुण्डली इस प्रकार है।

चन्द्रमा के लिए वर्तमान वर्ष ३७ ÷ ९ = १ शेष जन्म कुण्डली में चन्द्रमा ८ पर है उसे अपने स्थान से १ स्थान आगे बढ़ाया। अर्थात् चन्द्रमा उसी राशि में रहा और ३७ को ४ से भाग देने पर ३७ ÷ ४ = शेष १ बचा अतः यहाँ पर भी ग्रह जन्म कुण्डली में अपने-अपने स्थान पर ही रहे। पीछे त्रिपताकी चक्र में इन ग्रहों को स्थापित किया है।

जन्म कुण्डली



त्रिराशिपति :-

दिन में वर्ष प्रवेश हो तो मेष, वृष, मिथुन और कर्क इन चारों राशियों के सूर्य, शुक्र, शनि, शुक्र स्वामी होते हैं। अर्थात् मेष लग्न हो तो सूर्य, वृष लग्न हो तो शुक्र, मिथुन लग्न हो तो शनि, कर्क लग्न हो तो शुक्र त्रिराशिपति होते हैं।

यदि रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो मेष, वृष, मिथुन, कर्क चार राशियों के बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध और मंगल स्वामी होते हैं- जैसे रात्रि को वर्ष प्रवेश के समय मेष लग्न हो तो बृहस्पति, वृष हो तो चन्द्रमा, मिथुन हो तो बुध और कर्क हो तो मंगल स्वामी होता है।

सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक राशियों में विलोम क्रम से त्रिराशिपति होते हैं; जैसे- दिन में सिंह लग्न का बृहस्पति, कन्या का चन्द्रमा, तुला का बुध और वृश्चिक राशि का मंगल स्वामी होता है। रात्रि में सिंह का सूर्य, कन्या का शुक्र, तुला का शनि और वृश्चिक का शुक्र स्वामी होता है।

शेष धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशियों के दिन-रात्रि दोनों के समय के वर्ष प्रवेश काल में शनि, मंगल, चन्द्रमा, बृहस्पति और चन्द्रमा स्वामी होते हैं। जैसे- धनु लग्न का शनि, मकर का मंगल, कुम्भ का बृहस्पति और मीन लग्न का स्वामी चन्द्रमा होता है।[2]

उदाहरण :- वर्ष लग्न सिंह (५) है और वर्षेष्ट दिन का है।

---

1. (क) (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ १०८, श्लो॰ ३४, ३५, ३६, ३८)
   (ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान, वर्ष कुण्डली विधान प्रकरण, पृ॰ १६
   (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ ६५
   (ङ) ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ ३२७
2. (क) (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ १, पृ॰ ४५, श्लो॰ ६०)
   (ख) (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ६२, श्लो॰ ४०, ४१)

अथत्रिराशिपतिचक्रम्

राशि	मेष	वृष	मि॰	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	म॰	कु॰	मीन
दिवा	सूर्य	शुक्र	शनि	शुक्र	गुरु	चन्द्र	बुध	मंगल	शनि	मंगल	गुरु	चन्द्र
रात्रि	गुरु	चन्द्र	बुध	मंगल	सूर्य	शुक्र	शनि	शुक्र	शनि	मंगल	गुरु	चन्द्र

प्रस्तुत उदाहरण में वर्ष लग्न सिंह (५) है तथा वर्ष प्रवेश दिन का है। अतः त्रिराशिपति बृहस्पति हुआ।

पंचाधिकारी निर्णय :– निम्नलिखित पाँच ग्रह पंचाधिकारी कहलाते हैं।

१. **जन्म लग्न का स्वामी :–** जन्म कुण्डली में जो ग्रह लग्न राशि का स्वामी होता है वही जन्म लग्न पति कहलाता है।

2. **वर्ष लग्न पति :–** वर्ष कुण्डली में जो ग्रह वर्ष लग्न राशि का स्वामी हो, वह वर्ष लग्न पति कहलाता है।

३. **मुन्थाधिपति :–** वर्ष कुण्डली में मुन्था जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी ग्रह मुन्थापति कहलाता है।

४. **राशिपति :–** यदि दिन में वर्ष प्रवेश हुआ हो तो सूर्य जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी तथा यदि रात्रिकाल में वर्ष प्रवेश हुआ हो तो चन्द्र जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी राशिपति कहलाता है।[1]

५. **त्रिराशिपति :–**

मे॰	वृ॰	मि॰	क॰	सि॰	क॰	तु॰	बृ॰	ध॰	मं॰	कु॰	मी॰	राशि
सू॰	शु॰	श॰	शु॰	बृ॰	चं॰	बु॰	मं॰	श॰	मं॰	बृ॰	चं॰	दिवा
बृ॰	चं॰	बु॰	मं॰	सू॰	शु॰	श॰	शु॰	श॰	मं॰	बृ॰	चं॰	रात्रि

वर्ष लग्न की राशि के नीचे देखा यदि इष्ट दिन का हो तो दिनपति के सामने, रात्रि का इष्ट हो तो रात्रि के सामने ग्रह त्रिराशिपति कहलाता है।[2]

---

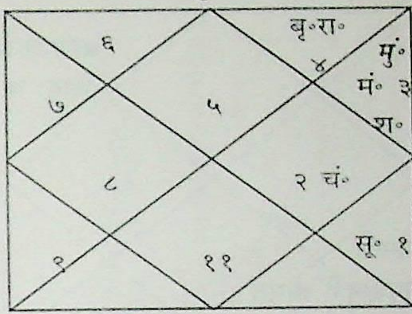
1. (क) जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतिस्त्रिराशिपः।
   सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रभाधीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्र, अ॰ १, श्लो॰ ६२)
   (ख) जन्माङ्गपोऽब्दाङ्गपइन्थिहेशो वर्षप्रवेशे दिवसेऽर्कभेशः।
   निशीन्दुभेशस्त्रिगृहेश एते वर्षाऽधिपत्येह्यधिकारिणः स्युः॥ (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ८०, श्लो॰ ७२)
   (ग) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८०, संस्करण–२००५
   (घ) भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग–३, वर्ष कुण्डली विधान प्रकरण, पृ॰ १२
2. (क) जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतिस्त्रिराशिपः।
   सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रभाधीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम्॥
   (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्र, अ॰ १, श्लो॰ ६२)
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८०
   (ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान, व॰ कु॰ प्रकरण, पृ॰ १२
   (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ७०

उदाहरण :– जन्म लग्न मिथुन है।

उपरोक्त वर्ष कुण्डली के अनुसार पंचाधिकारी निम्न रूपेण होंगे–

१. जन्म लग्नपति – बुध
२. वर्ष लग्न पति – सूर्य
३. मुन्थाधिपतिग्रह – बुध
४. राशिपति – मंगल
५. त्रिराशिपति – बृहस्पति

वर्षकुण्डली



वर्षेश का निर्णय :–

वर्ष कुण्डली में वर्षेश अर्थात् वर्ष का स्वामी कौन है; इसका निर्णय ताजिक ग्रन्थों में बताया है कि वर्ष के पंच अधिकारियों और हर्ष बल चक्र में जो ग्रह बलवान् होकर लग्न को देख रहा है और जो ग्रह बलवान् होकर देखता हो वही उस वर्ष का राजा माना जायेगा। यदि कोई ग्रह बलवान होता हुआ भी लग्न को न देखता हो वह वर्ष का स्वामी नहीं होता। यदि पाँचों अधिकारी प्रबल होकर लग्न को न देख रहे हों तो उसमें से जिस ग्रह की दृष्टि लग्न पर विशेष रूप से पड़ रही हो उसी को वर्ष पति माना जायेगा। यदि पूर्वोक्त पाँचों अधिकारियों की दृष्टि समान हो या पाँचों निर्बल हों तो मुन्था लग्न का स्वामी ही वर्ष स्वामी हो जाता है। इस स्थिति में यदि उन पाँचों में कोई भी ग्रह लग्न को न देख पाता हो तो सबसे अधिक बलवान ग्रह होगा, वही वर्ष पति हो जायेगा।[1]

वर्षेश निर्णय में दूसरा मत :–

वर्षेश निर्णय के विषय में कई आचार्यों का मत है कि उपर्युक्त पाँचों अधिकारियों में पंचवर्गी बल समान हो और वे पाँचों लग्न को भी समान दृष्टि से देख रहे हों तब यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य की राशि का अधिपति वर्ष पति हो जायेगा। यदि रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रराशि का स्वामी ही वर्षेश होगा।

चन्द्र वर्षेश का निर्णय :–

ताजिक शास्त्र के आचार्यों ने चन्द्रमा को वर्षेश होना नहीं माना है। उनका कहना है कि कोमल प्रकृति जलीय चन्द्र अनुशासन का काम नहीं कर सकता है। दूसरी बात यह भी है कि चन्द्रमा मन का स्वामी है और शासन मन से नहीं होता है, उसके लिए शारीरिक बल की भी आवश्यकता होती है।

इसलिए इन शास्त्रों के वेत्ताओं ने चन्द्रमा को वर्षेश स्वीकार नहीं किया है।

यदि पूर्वोक्त नियमों के अनुसार चन्द्रमा वर्षेश आता हो तो वह जिस ग्रह के साथ इत्थशाल योग करता है, वही ग्रह वर्षेश होता है यदि चन्द्र किसी ग्रह के साथ इत्थशाल नहीं करता हो तो वर्ष कुण्डली का चन्द्र राशीश ही वर्षेश होता है।[2]

उदाहरण :– पूर्वोक्त उदाहरण वर्ष कुण्डली के पंचाधिकारियों में सबसे बली सूर्य आया है, सूर्य की लग्न पर पूर्ण दृष्टि है, वर्ष लग्नेश सूर्य है, हर्ष बल में सबसे अधिक अंक भी सूर्य के हैं अतः सूर्य ही वर्षेश होगा।

---

1. (क) (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ६३, ६४, पृ॰ ४७)
(ख) (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ ८१, श्लो॰ ७३–७६) (ग) भारतीय ज्योतिष, पृ॰ ३८२, अ॰ ४

2. (क) बलादिसाम्ये रविराशपोऽह्नि निशींदुराशीडिति केचिदाहुः।
ये नेत्थशालोऽब्दविभुः शशीसवर्षाधिपश्चन्द्रभपोऽन्यथात्वे॥ (ता॰नी॰, संज्ञा तन्त्रे, अ॰ १, श्लो॰ ६५)
१. अत्र येनेत्थशाल्यब्दविभुः इति पाठो युक्ति सङ्गतः।
२. एवं वर्षाधियोऽर्कन्दुभयोऽन्यथात्वे इति पाठः साधु॥ (ता॰नी॰, संशोधकः, पृ॰ ४९)

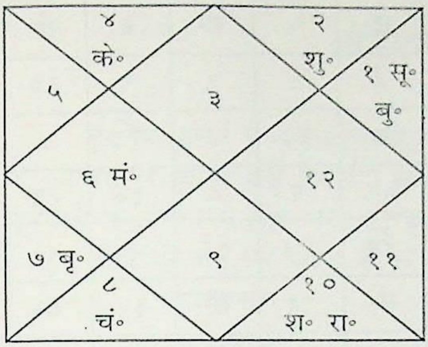
अथ वर्षफल स्वरूप पत्र

ॐ श्री गणेशाय नमः
ब्रह्मा करोतु दीर्घायु विष्णुः करोतु सम्पदाम्।
शिवः करोतु कल्याणं, यस्यैषावर्षपत्रिका॥

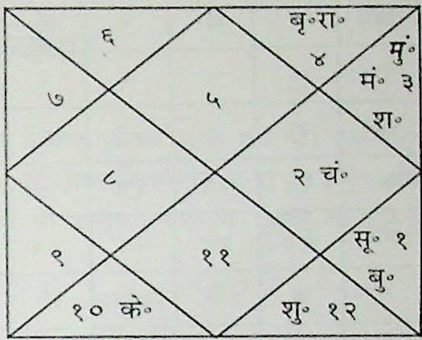
वर्षपत्रिका

नामश्री	:	संजीव शर्मा
सुपुत्र/पुत्री श्रीयुत	:	बलदेव शर्मा
जन्म तिथि	:	ता॰ १५ मास वैशाख सं॰ १९९२
जन्म स्थान	:	जालन्धर (पंजाब)
जन्म समय	:	१० घंटा ३६ मिन्ट ०० सै॰ प्रातः
जन्म दिन/रात्रि	:	दिवा
जन्मवार	:	रविवार
स्थानिक सूर्योदय	:	६ घ॰ २२ मि॰
इष्टकाल	:	१० घटी ३६ पल ० विपल
जन्म सूर्य स्पष्ट	:	० राशि १२ अंश ५५ क॰ ५१ वि॰
जन्म लग्न स्पष्ट	:	२ राशि, १३ अंश २७ क॰ ५३ वि॰
गताब्द	:	३६ वर्ष
प्रवेशाब्द	:	३७ वर्ष
वर्षेटम्	:	४ । २४ । २२
वर्ष प्रवेश दिन/रात्रि	:	दिवा
वर्ष प्रवेश वार	:	बुधवार
वर्ष प्रवेश सूर्य-स्पष्ट	:	० राशि १० अंश ०७ कला ३४ वि॰
वर्ष लग्न स्पष्ट	:	४ राशि २३ अंश ३१ कला ०० वि॰
मुन्था	:	२ राशि १३ अंश २१ कला ५३ वि॰
मुद्दा दशा ग्रह	:	सूर्य
वर्ष अवधि	:	१ वर्ष
जन्मेश	:	बुध
वर्षेश	:	सूर्य
मुन्थेश	:	बुध
त्रिराशिपति	:	बृहस्पति
वर्षराट्	:	सूर्य
पंचाङ्ग	:	सं॰ २०२८ बैशाख कृष्ण एकादशी बुधवार ईष्ट २४ । २२ पर नया वर्ष आरम्भ हुआ।

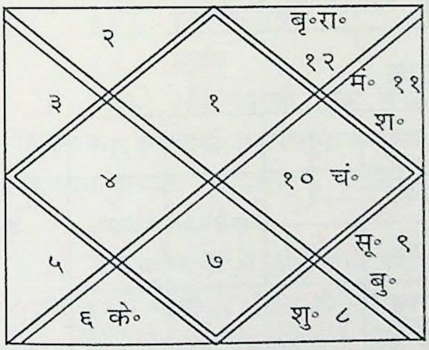
जन्म कुण्डली



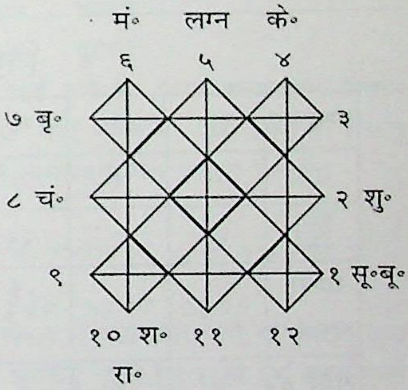
वर्ष कुण्डली



चलित भाव कुण्डली



त्रिपताकी चक्र



वर्ष प्रवेश ग्रह-स्पष्ट चक्रम्

ग्र०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
रा०	०	१	२	७	३	११	२	३	९
अं०	१०	०	२१	२३	२४	२३	७	९	९
क०	७	२६	५२	२१	७	२०	७	५	५
वि०	३४	४७	४५	३१	३२	१०	४५	१५	१५
क०	५८	८१७	३४	१७	३	७४	५	३	३
वि०	१२	१५	२८	३९	४	१२	४८	११	११
उ०/ अ०	मा० उ०	मा० उ०	मा० उ०	व० उ०	मा० उ०	मा० उ०	मा० उ०	व० अ०	व० अ०

हर्ष बल चक्रम्

बल	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श
स्था०	५	०	०	०	०	०	०
स्व०	५	५	०	०	५	५	०
पुरुष/स्त्री	०	०	५	५	५	५	०
दि०/रा०	५	०	५	०	५	०	०
योग	१५	५	१०	५	१५	१०	०

वर्ष द्वादश भाव स्पष्ट चक्रम्

भाव	१	सं०	२	सं०	३	सं०	४	सं०	५	सं०	६	सं०
रा०	४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	१०
अं०	२३	८	२३	८	२३	७	२२	७	२३	८	२३	८
क०	२५	१९	१३	८	२	५६	५०	५६	२	८	१३	१९
वि०	२७	४२	५८	१२	२७	४२	५७	४२	२७	१२	५७	४२
	७	सं०	८	सं०	९	सं०	१०	सं०	११	सं०	१२	सं०
रा०	१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३	४
अं०	२३	८	२३	८	२३	७	२२	७	३३	८	२३	८
क०	२५	१९	१३	८	२	५६	५०	५६	२	८	१३	१९
वि०	२७	४२	५७	१२	२७	४२	५७	४२	२७	१२	५७	४२

विंशोतरी मुद्दा दशा चक्र

दशा ग्रह	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०
मास	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दिन	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०
सम्वत् २०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२८	२०२९
मास ०	०	१	२	४	५	७	९	१०	०
दिन ३	२१	२१	१२	०६	२४	२१	१२	०३	०३

पंचाधिकारी चक्रम्

पंचाधिकारी	बल	दृष्टि	वर्षेश
जन्मेश	५	५	बुध
वर्ष लग्नेश	१५	९	सूर्य
मुन्थेश	५	५	बुध
राशीश	१५	३	मंगल
त्रिराशिश	१५	२	बृहस्पति

चतुर्थ अध्याय

षोडशयोग एवं सहम–विचार

ताजिक ग्रन्थों में वर्ष कुण्डली सम्बन्धी सोलह योगों का विशेष महत्त्व माना गया है। इन योगों के आधार पर किया गया फलदेश स्टीक व चमत्कारिक रूप से ठीक निकलता देखा गया है। वर्ष कुण्डली के समान ये योग जन्म कुण्डली तथा प्रश्नकुण्डली में भी अनुभव (प्रयोग) किए जा सकते हैं। इन योगों के नाम इस प्रकार हैं –

१.	इक्कवाल	२.	इन्दुवार
३.	इत्थशाल	४.	ईसराफ
५.	नक्त	६.	यमया
७.	मणऊ	८.	कब्बूल
९.	गैरि कब्बूल	१०.	खल्लासर
११.	रद्द	१२.	दुफालिकुत्थ
१३.	दुत्थोत्थदिवीर	१४.	तम्बीर
१५.	कुत्थ	१६.	दुरफ

अरबी और फारसी भाषा में उक्त योगों के नाम कहे कहे गये हैं। प्रायः इक्कबाल अर्थात् भाग्यार्थक, इन्दुवार अर्थात् कार्यनाशक, इत्थशाल अर्थात् दृष्टि योग सम्बन्धी एवं ईसराफ अर्थात् वियोगप्रद इत्यादि इन योगों के फलित के अनुसार हिन्दी भाषा में नामकरण कर सकते हैं।[1]

१. इक्कबाल योग :–

वर्ष कुण्डली में यदि सभी ग्रह केन्द्र तथा पणफर भावों में अर्थात् १, ४, ७, १० तथा २, ५, ८ एवं ११वें भावों में स्थित हों, तो इक्कबाल नामक योग होता है।

इस योग के प्रभावस्वरूप वर्ष में व्यवसाय में तरक्की, संवस में पदोन्नति, स्त्री या संतान सुख की प्राप्ति, भूमि–मकान, वाहनादि, सुखों की प्राप्ति तथा सौभाग्य में वृद्धि होती है। राज्य एवं सरकार से लाभ प्राप्ति के अवसर मिलते हैं। इक्कबाल योग होनें पर सम्बद्ध वर्ष को भाग्योदय वर्ष भी कह सकते हैं। ध्यान रहे, इक्कबाल योग तभी घटित होगा जबकि आपोक्लिमभावों (३, ६, ९, १२) में कोई भी ग्रह न पड़ा हो तथा उपरोक्त उदाहरण अनुसार सभी ग्रह केन्द्र तथा पणफर भावों में स्थित हैं। इक्कबाल योग के प्रभाव से वर्ष कुण्डली में यत्किंचित अरिष्ट योग भी भंग हो जाता है।[2]

1. (क) प्रागिक्कवालोऽपर इन्दुवारस्तथेत्थशालोऽपर ईशराफः।
नक्तं ततः स्याद्यमया मणाऊ कब्बूलतो गैरिकबूलमुक्तम्॥
खल्लासरं रद्दमथो दुफालिकुत्थं च दुत्थोत्थदिवीरनामा।
तंबीरकुत्थौ दुरफश्च योगाः स्युः षोडशैषां कथयामि लक्ष्म॥ (ता. नी. अ॰ २, पृ॰ ६४, श्लो॰ १, २)
(ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १८१
(ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १२९
(घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८३
(ङ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९२

2. (क) चेत्कण्टके पणफरे च खगाः समस्ताः।
स्यादिक्कबाल इति राज्यसुखाप्तिहेतुः॥ ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, पृ॰ ६५, श्लो॰ २
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १२९
(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८१
(घ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९२
(ङ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८३

२. इन्दुवार योग :-

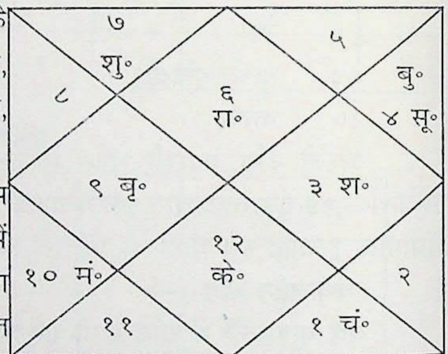
वर्ष कुण्डली में यदि सभी ग्रह आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) भावों में हों तो इन्दुवार नामक योग होता है।

इस योग का फल अशुभ होता है। इस योग के फलस्वरूप वर्ष में आय कम खर्च अधिक रहता है। स्त्री संतान एवं व्यवसाय सम्बन्धी चिन्ता, अवांछित स्थान पर स्थानान्तरण, मानसिक तनाव व शरीर कष्ट, शत्रु भय आदि अशुभ फल घटित होते हैं। अतः यह योग अशुभफलदायक होता है।[1]

३. इत्थशाल योग :-

जिन दो ग्रहों के बीच में जिस ग्रह की गति अधिक हो वह शीघ्रगतिवाला और जिसकी गति न्यून हो वह मन्दगति ग्रह कहलाता है। जब लग्नेश और कार्येश ग्रहों में (१) परस्पर दृष्टि हो (२) शीघ्रगतिवाले ग्रह के राशिगत अंश, मन्दगतिवाले ग्रह के अंशों की अपेक्षा कम हों, तो वर्ष प्रवेश से आगामी दिनों में शीघ्रगति युक्त ग्रह (तीव्र गति के कारण) मन्द गति वाले ग्रह केअंशों के बराबर हो जायेगा।इसको ही "इत्थशाल" या "मुथशिल" योग कहते हैं। ग्रहों की गति के सम्बन्ध में स्मरणीय बात है कि चन्द्रमा से बुध मन्द गति है, बुध से शुक्र मन्दगति, शुक्र से सूर्य मन्दतर, सूर्य से मंगल, मंगल से गुरु एवं गुरु से शनि मन्दतर ग्रह कहलाता है।

उदाहरण इक्कबाल योग



लग्नेश का जिस भाव के स्वामी से, इत्थशाल हो, उस भाव का फल उस वर्ष में अवश्य होता है। इस उदाहरण में पंचम भाव सम्बन्धी विचार करना है। यहाँ पंचमेश गुरु कार्येश हुआ। सूर्य लग्नेश हुआ। सूर्य की गति गुरु की अपेक्षाकृत शीघ्र है। प्रस्तुत कुण्डली में गुरु एवं सूर्य दोनों ग्रहों के अंशों में केवल ११ अंशों का अन्तर है। (२५ - १४ = ११) जो कि सूर्य के दीप्तांश (१५) के भीतर है। तथा लग्नेश सूर्य की मित्र दृष्टि कार्येश गुरु पर होने से इत्थशाल योग के प्रभाव स्वरूप वर्ष में पुत्र सन्तान की प्राप्ति होगी।[2]

इत्थशाल योग के भेद :-

इत्थशाल योग के मुख्यतः तीन भेद हैं :-

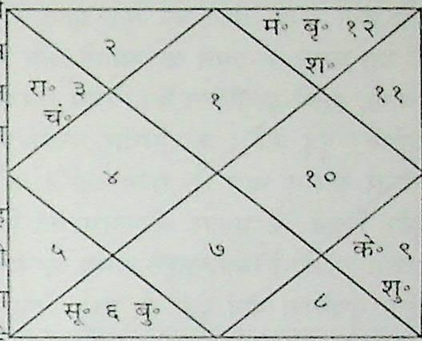
१. वर्तमान इत्थशाल २. पूर्णइत्थशाल ३. भविष्य इत्थशाल

---

1. (क) आपोक्लिमे यदि खगाः स किलेन्दवारो।
   न स्याच्छुभः क्वचन ताजिकशास्त्रगीतः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, पृ॰ ६५, श्लो॰ ३)
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८३
   (ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९२
   (घ) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८२
   (ङ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १२९
2. (क) शीघ्रोऽल्पभागैर्धनभागमन्देऽग्रन्थे निजं तेज उपाददीत।
   स्यादित्थशालोऽयमथो विलिप्ता-लिप्तार्द्धहीनोयदि पूर्णमेतत्॥
   (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, पृ॰ ६५, श्लो॰ ४)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३०
   (ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९२
   (घ) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८२

१. **वर्तमान इत्थशाल :–** यदि शीघ्र गति वाले ग्रह के अंश कम हों और मन्द गति वाले ग्रह के अंश अधिक हों तथा दोनों ग्रहों में परस्पर दृष्टिसम्बन्ध हो तब "वर्तमान इत्थशाल" होता है। उपरोक्त उदाहरण में सिंह लग्न की कुण्डली वर्तमान इत्थशाल योग की ही है। इसका प्रभाव पूर्ण इत्थशाल से कुछ कम होता है।

उदाहरण इन्दुवार योग



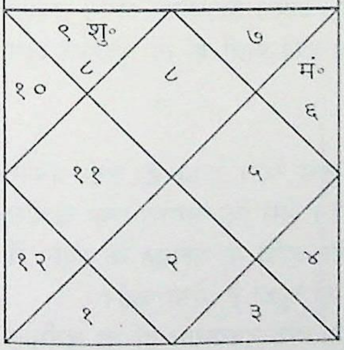
२. **पूर्ण इत्थशाल :–** जब शीघ्री ग्रह के अंश मन्द गति ग्रह के अंश से केवल कला-विकला मात्र से कम हों, तो पूर्ण इत्थशाल योग होता है। शीघ्री और मंदी ग्रह का अन्तर आधा अंश (३० कला) तक अथवा उसके अल्प हो तो भी पूर्ण इत्थशाल होता है।

३. **भविष्य इत्थशाल :–** शीघ्री ग्रह अल्प अंश पर और मन्दग्रह उसके आगे अधिक अंशों पर हो। दोनों की दृष्टि नवम-पंचमादि (मैत्री) हो परन्तु ग्रहों के दीप्तांशों के भीतर न होने पर भी भविष्य के आने वाले दिनों में दीप्तांशों में आ जाने की सम्भावना हो, तो इसे भविष्य इत्थशाल योग कहेंगे। इस प्रकार तीन तरह के मुथशिल योग हुए।[1]

विशेष :–

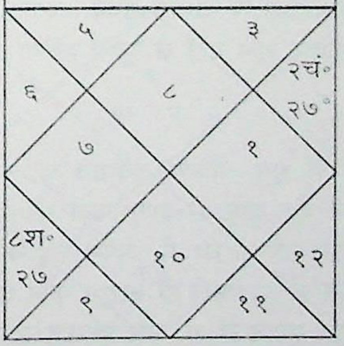
स्त्री प्राप्ति प्रश्ने

वर्त॰ मुथशिल



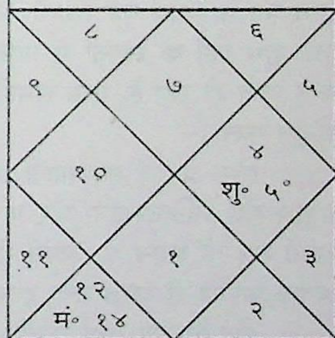
स्त्री लाभ प्रश्ने

पूर्ण॰ मुथशिल



केवलर्थ प्रश्ने

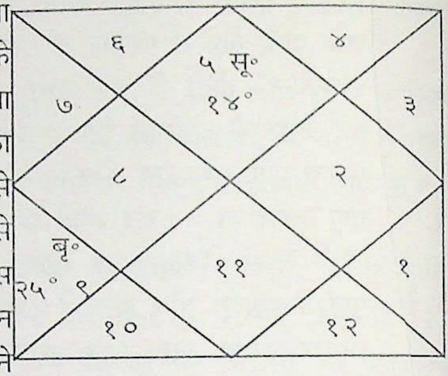
भविष्य॰ मुथशिल



मुथशिल योग का फल बताते हुए कहते हैं — लग्न का स्वामी और जिस भाव का प्रश्न किया जाये, उस भाव का स्वामी इन दोनों का योग होने पर ही मुथशिल योग होता है, ऐसा ज्योतिष शास्त्र के विचारवान पुरुष कहते हैं।[2]

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८३
   (ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८२
   (ग) शीघ्रो यदा भान्त्यलवस्थितः सन्मंदेऽग्रयभस्थे निदधातितेजः।
   स्यादित्थशालोऽयमथैष शीघ्रदीप्तांशकांशैरिहमन्दपृष्ठे॥
   तदा भविष्यद्गणनीयमित्थशालं त्रिधैवं मुथशीलमाहुः।
   लग्नेशकार्याधिपयोर्यथैष योगस्तथा कार्यमुशन्ति सन्तः॥ (ता. नी., अ॰ २, पृ॰ ६६, श्लो॰ ५, ६)
   (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३१
2. (क) लग्नेश कार्याधिपयोर्यथैष योगस्तथा कार्यमुशन्तिसन्तः। (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ६)

उदाहरण इत्थशाल योग



उदाहरण :- जैसे किसी ने आकर पूछा कि मुझे पुत्र, स्त्री तथा राज्य आदि का सुख प्राप्त होगा या नहीं? ऐसी दशा में उस समय के लग्न का स्वामी और स्त्री, पुत्र, आदि भाव के स्वामी, इनके इत्थशाल का विचार करके शुभाशुभ फल कहना चाहिए। पुत्र प्राप्ति का विचार पंचम भाव से, स्त्री प्राप्ति का विचार सप्तम भाव से, राज्य-प्राप्ति का विचार दशम भाव से और किसी भी प्रकार के लाभ का विचार एकादश भाव से करना चाहिए विचार करते समय लग्नेश तथा भावेश का जिस तरह मुथशिल योग होता है, उसी अनुसार फल कहें। यदि उन दोनों में पूर्ण मुथशिल योग हो तो भविष्य में फल प्राप्त होने की बात कहें।

इत्थशाल योग का शुभाशुभ फल :-

शुभ फल :-

यदि लग्न स्वामी और कार्य स्वामी ये दोनों अपनी राशि, अपने उच्च, अपनी हद्दा, अपने त्रैराशिप तथा अपने नवांश में हों अथवा अच्छे घर में तथा शुभ ग्रह के स्थान में विद्यमान रहकर शुभग्रह से युक्त या उनसे दृश्यमान हों तो पूर्वोक्त सम्पूर्ण शुभ फल प्राप्त हो चुका है, ऐसा समझें।

यदि लग्नेश तथा कार्येश ये दोनों अपने उच्च, अपनी हद्दा, अपने त्रैराशिप तथा अपने नवांश में जाने वाले हों या शुभ ग्रहों के स्थानों में जाने वाले हों अथवा शुभ ग्रहों से युक्त होने वाले हों या उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ने वाली हो तो पूर्वोक्त शुभ फल आगे चलकर होगा ऐसा कहें। जब लग्न का या कार्य का स्वामी अपनी राशि में, अपने उच्च, अपनी हद्दा, अपने त्रैराशिप, अपने नवांश तथा शुभ ग्रहों के स्थानों में प्राप्त होकर शुभ ग्रहों से युक्त हों या उनसे देखे जाते हों तो पूर्वोक्त शुभ फल प्राप्त हो रहा है, ऐसा समझें।

अशुभ फल :-

जिस प्रकार इत्थशाली ग्रहों से भूत-भविष्य-वर्तमान कालिक शुभ फल कहा है, उसी प्रकार शत्रुराश्यादि अनिष्टस्थान और पापग्रह योग दृष्टि से अशुभफल भी होता है। जैसे कि लग्नेश तथा कार्येश अपने शत्रु के स्थान में, अपने से नीच ग्रह के घर में, अपने शत्रु की हद्दा आदि में, पापग्रह के स्थान में अथवा पापग्रह से युक्त तथा दृश्यमान हों तो पहले ही अशुभ फल प्राप्त हो चुका है, ऐसा कहें।

यदि लग्नेश तथा कार्येश दुष्ट स्थान में हों और पापग्रह से युक्त तथा दृश्यमान हों तो वर्तमान समय में ही अशुभ फल मिल रहा है, ऐसा कहें।

यदि लग्नेश तथा कार्येश इष्ट स्थान में रहता हुआ अपनी मित्र राशि से शत्रु के घर में पहुँच गया हो तो शुभ फल पहले ही प्राप्त हो चुका है, ऐसा कहें।

यदि लग्नेश तथा कार्येश अपने मित्र के घर में हों, किन्तु आगे चलकर शत्रु के घर में जाने वाले हों तो अशुभ फल प्राप्त होने वाले हैं, ऐसा कहें।[1]

---

1. (क) स्वर्क्षादिसत्स्थानगतः शुभैश्चेद्युतेक्षितोऽभूद्भविताऽथवाऽऽस्ते।
तदा शुभं प्रागभवत्सुपूर्णमग्रे भविष्यत्त्वथ वर्तते च॥
व्यत्यस्तमस्माद्विपरीतभावेऽथेष्टर्क्षतोऽनिष्टगृहं प्रपन्नः।
अभूच्छुभं प्रागशुभं त्विदानीं संयातुकामेन च भाविवाच्यम्॥ (ता. नी., अ॰ २, पृ॰ ६९, श्लो॰ ८, ९)

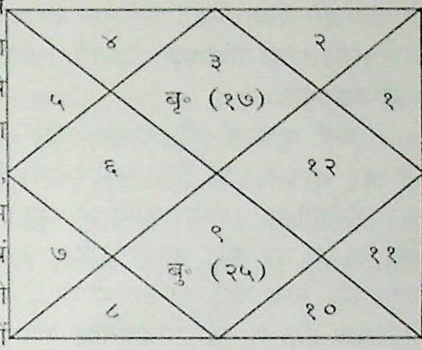
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३२

(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८२

(घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४

४. ईसराफ योग :-

उदाहरण ईसराफ योग



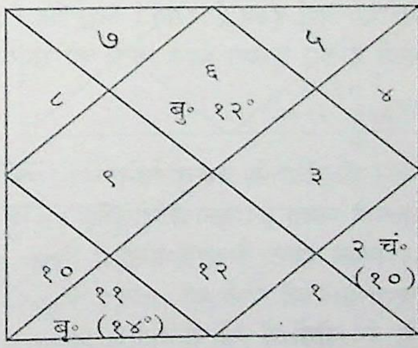
ईसराफ का दूसरा नाम मुसरिफ है। यह इत्थशाल योग के विपरीत है। जब शीघ्रगामी ग्रह मन्दगामी ग्रह से एक अंश या १ अंश से अधिक आगे हो, तब ईसराफ योग होता है, इसे मुसरिफ योग भी कहते हैं। इस योग में लग्न और कार्येश परस्पर कभी नहीं मिल पाते, इस कारण वर्ष में धन हानि, कार्य का नाश एवं विघ्न उत्पन्न होते हैं। परन्तु यदि दोनों शुभ ग्रह हों तो अशुभ फल नहीं होता।इसके अतिरिक्त शीघ्री एवं मन्द ग्रहों के मध्य बारह अंशों से अधिक का अन्तर हो, तो अशुभ फल अल्प रह जाता है। प्रस्तुत वर्ष कुण्डली में दोनों (बुध एवं गुरु) शुभ होने से ईसराफ योग होने पर भी अशुभ नहीं होगा, ऐसा ही सर्वत्र जानना।[1]

५. नक्त योग :-

. जब वर्ष कुण्डली में लग्नेश और कार्येश इन दोनों स्वामियों की परस्पर दृष्टि नहीं हो परन्तु लग्नेश तथा कार्येश दोनों ग्रहों के मध्य दीप्तांशों के अभ्यन्तर ऐसा शीघ्र गति वाला कोई अन्य ग्रह हो, जो लग्नेश और कार्येश दोनों पर दृष्टि करता हो अथवा अन्य प्रकार से (स्थान विपर्यादि) सम्बन्ध करता हो, तब वह ग्रह शीघ्र गति ग्रह का तेज मन्दगति वाले ग्रह को देता है इसप्रकार के योग को नक्त योग कहते हैं। नक्त योग में किसी अन्य व्यक्ति की सहायता से कार्य सिद्धि होती है।

यथा :-

उदाहरण नक्त योग



प्रस्तुत उदाहरण में लग्नेश बुध के अल्प अंश १२ हैं। कार्येश गुरु अधिक अंश (१४) पर है। दोनों ग्रह एक-दूसरे से ६-८वें भाव में परस्पर दृष्टि नहीं है परन्तु नवम भावस्थ उनसे शीघ्र गति वाला ग्रह १० अंश पर है। उसकी पाँचवीं शुभ दृष्टि लग्नेश बुध पर दीप्तांश के भीतर है और कार्येश गुरु

---

1. (क) शीघ्रो यदा मन्दगतेरथैकमप्यंशमभ्येति तदेसराफः।
कार्यक्षयो मूसरिफे खलोतथे सौम्येन हिल्लाजमतेन चिन्त्यम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, पृ॰ ७०, श्लो॰ १०)

(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३२

(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८३

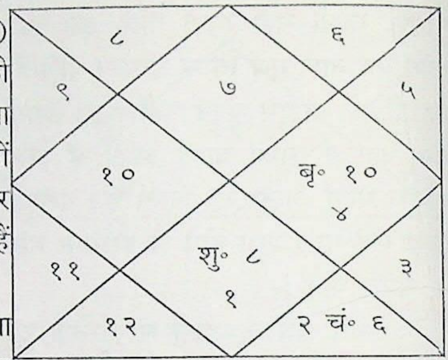
(घ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९४

(ङ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४

पर भी चन्द्रमा की दशम दृष्टि पड़ रही है। इस प्रकार शीघ्री चन्द्रमा दोनों ग्रहों को देखते हुए शीघ्री ग्रह बुध का तेज लेकर मंदी ग्रह गुरू को दे दिया। प्रस्तुत कुण्डली में विवाहादि के प्रश्न का कार्य किसी तीसरे व्यक्ति की मध्यस्थता द्वारा पूरा होगा, ऐसा कहना चाहिए।[1]

६. यमया योग :-

उदाहरण यमया योग

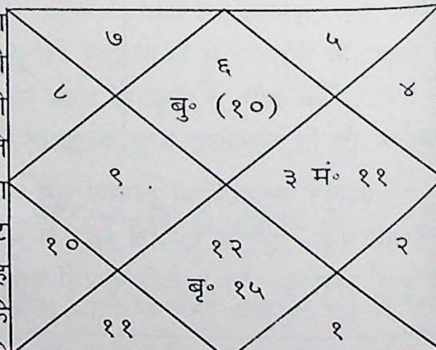


वर्ष कुण्डली में लग्नेश और कार्येश (जिस भाव के फल का ज्ञान करना हो उसके स्वामी को कार्येश कहते हैं।) इन दोनों ग्रहों की परस्पर दृष्टि न पड़ती हो अर्थात् लग्नेश की दृष्टि कार्येश पर और कार्येश की दृष्टि लग्नेश पर न हो तथा अन्य कोई मन्द गति का ग्रह दीप्तांशों के भीतर ही दोनों ग्रहों को देखता हो, तब वह मन्दगतिग्रह शीघ्रगति ग्रह का तेज लेकर मन्दगति ग्रह को अर्पण करता हो तो इसे यमया योग कहते हैं यह योग वांछित कार्य सिद्ध करता है। उदाहरण :-

प्रस्तुत कुण्डली में किसी ने पूछा कि मुझे राज्य मिलेगा या नहीं? इस अवसर पर प्रश्न लग्न तुला है। तुला लग्न कास्वामी शुक्र सप्तम भाव में मेष के आठ (अंश) पर उपलक्षित होकर बैठा हुआ है। कार्येश (राज्येश) चन्द्रमाः छः अंशों से उपलक्षित होकर वृष राशि में अर्थात् आठवें स्थान में बैठा हुआ है। यहाँ लग्नेश और कार्येश की परस्पर दृष्टि नहीं हैं। मन्दगति ग्रह बृहस्पति दश (१०) अंशों से उपलक्षित होकर कर्क अर्थात् दशम स्थान में बैठकर लग्नेश शुक्र और कार्येश चन्द्रमा को स्थान दृष्टि (१०/११) से देखता हुआ चन्द्रमा तथा शुक्र से अधिक दीप्तांश द्वारा चन्द्रमा का तेज लेकर शुक्र को प्रदान करता है। इस योग का नाम, यमया है। फल यह है कि लग्नेश और कार्येश का इत्थशाल होता तो स्वयं ही राज्य प्राप्ति होनी थी पर यहाँ बृहस्पति से योग पूर्ण हुआ है इसका अर्थ यह है कि दूसरे के द्वारा राज्यप्राप्ति होगी, बृहस्पति देवगुरु अर्थात् देवमन्त्री है इस कारण प्रश्न कर्ता को राज्य प्राप्ति मन्त्री द्वारा या पुरोहित द्वारा होगी, ऐसा कहना चाहिए।[2]

७. मणऊ योग :-

उदाहरण मणऊ योग



यह योग नक्त योग के समान ही होता है, परन्तु शनि वा मंगल की स्थिति में फल विपरीत हो जाता है। मणऊ योग में लग्नेश तथा कार्येश की परस्पर स्थान दृष्टि अवश्य होनी चाहिए। यदि शीघ्रगतिग्रह से मंगल तथा शनि पीछे या आगे बैठे हों अर्थात् लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों में जो शीघ्रगति वाला ग्रह हो, उसके अंशों से युक्त वक्रमंगल तथा शनि बैठा हो वह मंगल एवं शनि शत्रु (१, ४, ७, १०) स्थान की दृष्टि द्वारा अधिक या न्यून दीप्तांशों से देखता हुआ शीघ्र गति ग्रह का तेज हरे और निर्बल शीघ्रगति ग्रह कार्येश के स्थान के स्वामी के साथ इत्थशाल योग करता हुआ विद्यमान रहे तो

1. (क) लग्नेशकार्याधिपयोर्न दृष्टिमथोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्रः।
आदाय तेजो यदि पृष्ठसंस्थान्यसेदथान्यत्र हि नक्तमेतत्॥ (ता. नी. अ॰ २, पृ॰ ७१, श्लो॰ ११)

2. (क) अन्तः स्थितो मन्दगतिस्तु पश्येदीप्तांशकैर्द्वविथशीघ्रतस्तु।
नीत्वा महोयच्छति मन्दगाय कार्यस्य सिद्ध्यैयमया प्रदिष्टः॥
राज्याप्तिपृच्छातुल लग्ननाथो मेषे सितस्त्वष्टिलवैर्वृषस्थः। चन्द्रो रसांशैर्यदि राज्यनाथो दृष्टिस्तयोर्नास्तिगुरुस्तु मन्दः॥
दिगंशकैः कर्कगतस्तु पश्यन्नुभौ महो दीप्तलवैः सः चान्द्रम्।
ददौ सितायेति पदस्य लाभोऽमात्येन भावीतिविमृश्य वाच्यम्॥ (ता. नी. अ॰ २, श्लो॰ १४, १५, १६)

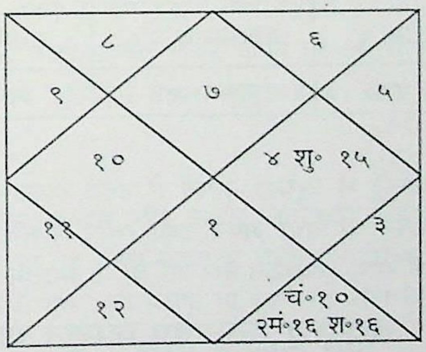
उसे मणऊ योग कहते हैं। यह मणऊ योग शुभकारक नहीं होता।

प्रस्तुत उदाहरण में किसी ने प्रश्न किया कि मुझे स्त्री मिलेगी या नहीं? प्रश्न समय कन्यालग्न है। इसका स्वामी बुध दस अंशों से उपलक्षित होकर लग्न में स्थित है और बृहस्पति पन्द्रह अंशों से उपलक्षित होकर मीन राशि में सप्तम स्थान में स्थित है। मंगल ग्यारह अंशों में दशम स्थान में बैठा हुआ है। इस स्थिति में भौम चतुर्थ स्थान की दृष्टि से बुध को देखता है। वह एक अंश से अधिक होकर आगे चला गया और उसने बुध का तेज हर कर उसे पीछे कर दिया और शीघ्रगति ग्रह होने के कारण कार्येश बृहस्पति से जा मिला है। अतः प्रश्न कर्ता को स्त्री प्राप्त नहीं होगी। मणऊ योग यह एक प्रकार का हुआ। दूसरी रीति से पूर्वोक्त बुध के अंशों की अपेक्षा न्यून अंशों से युक्त मंगल पृष्ठगत हो तो भी सर्वकर्मनाशक मणऊ योग होता है।[1]

दूसरा मणऊ योग :-

यदि कुण्डली में लग्नेश और कार्येश इन दोनों का मुथशिल योग हो और शनि तथा मंगल ये दोनों एक राशि में बैठे हों और लग्नेश तथा कार्येश के दीप्तांश की अपेक्षा न्यून या अधिक दीप्तांश शनि मंगल का होकर मध्य में हो तो वे लग्नेश और कार्येश का तेज हरण करते हुये वांछित कार्य का नाश करते हैं।

पुनर्मणऊ योग



यथा :- प्रस्तुत उदाहरण में राज्य प्राप्ति का प्रश्न है उस समय तुला लग्न है। तुला का स्वामी शुक्र १५ अंशों से उपलक्षित होकर कर्क राशि अर्थात् दशम स्थान में बैठा हुआ है और मंगल १६ अंशों में है, और शनि भी १६ अंशों से उपलक्षित है। भौम लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल होकर मुथशिल योग पड़ रहा है तो वे दोनों लग्नेश तथा कार्येश का तेज हरण करते हैं अतः मणऊ योग हुआ इससे कहना पड़ेगा कि प्रश्नकर्त्ता को राज्य नहीं मिलेगा।[2]

---

1. (क) वक्रः शनिर्वा यदि शीघ्रखेटात्पश्चात्पुरस्तिष्ठतितुर्यदृष्ट्या।
   एकर्क्षसप्तर्क्षभुवा दृशा वा पश्यन्नथांशैरधिकोनकैश्चेत्॥
   तेजो हरेत्कार्यपदेत्थशाली स्थितोऽपि वाऽसौ मणऊ शुभो न।
   स्त्रीलाभपृच्छा तनुरस्ति कन्याऽत्र ज्ञो दिगंशैस्तिथिभिः सुरेज्यः॥
   कलत्रगः खेऽवनिजो भवांशैः पूर्वं बुधो भौमहृतस्वतेजाः।
   जीवेन पश्चान्मिलतीति लाभो नार्यास्तुनो पृष्ठगतेऽथवास्मिन्॥ (ता. नी. अ॰ २, श्लो॰ १७, १८, १९)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३३
2. (क) यदीत्थशालोऽस्त्युभयोः स्वदीप्तहीनाधिकांशैः शनिभूसुतौ चेत्।
   एकर्क्षगौ लग्नपकार्यपोः तस्तेजोहरौ कार्यहरौ निरुक्तौ॥
   राज्याप्तिपृच्छातुललग्ननाथः कर्के सितोंऽशैस्तिथिर्भिदगंशैः।
   वृषे शशी भूपलवैः कुजश्च हरन्द्वयोर्भा हरते च राज्यम्॥ (ता॰ नी॰, श्लो॰ २०, २१)
   (ख) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९५

८. कम्बूल योग :-

कुण्डली में यदि लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों का परस्पर इत्थशाल योग हो और इनमें से किसी एक के साथ चन्द्रमा भी इत्थशाल योग करे तो उत्तम, मध्यम आदि भेदों से अनेक प्रकार का कम्बूल योग होता है। यह कम्बूल योग लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा के चर्तुवध अधिकार भेद से सोलह प्रकार का होता है। जैसे - १. उत्तमोत्तम २. उत्तममध्यम ३. उत्तम ४. उत्तमाधम ५. मध्यमोत्तम ६. मध्यमध्यम ७. मध्यम ८. मध्यमाधम ९. उत्तम १० मध्यम ११. मध्यमध्यम १२. अधम १३. अधमोत्तम १४. अधममध्यम १५. अधम १६. अधमाधम। अपने घर और अपने उच्च में लग्नेश तथा कार्येश के रहने पर उत्तम, अपनी हद्दा और अपने नवांश अधिकार में मध्यम और अपने शत्रु तथा नीच स्थान में लग्नेश और कार्येश के रहने पर अधम कम्बूल होता है।[1]

स्पष्टार्थ के लिये निम्न चक्र देखें :-

लग्नेशकार्यशयोरधिकारः

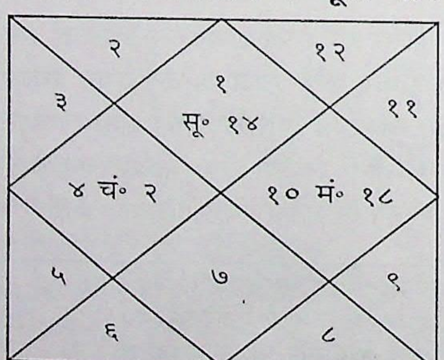
चन्द्रस्याधिकारः

०	उत्तमाधिकार	मध्यमाधिकार	अधमाधिकार	शून्याधिकार
उत्तमाधि॰	उत्तमोत्तम १	उत्तममध्यम २	उत्तमाधम ३	उत्तम ४
मध्यमाधिकार	मध्यमोत्तम ५	मध्यमध्म ६	मध्याधम ७	मध्यम ८
अध्माधिकार	अधमोत्तम ९	अधममध्य १०	अधमाधम ११	अधम १२
शून्याधिकार	उत्तम १३	मध्यम १४	अधम १५	सम १६

उत्तमोत्तम कंबूल योग :-

यदि चन्द्रमा स्वराशि (कर्क) में अथवा अपने से उच्च स्थान (वृष) में स्थित हो और लग्न स्वामी तथा कार्य स्वामी दोनों अपने घर तथा अपने उच्च स्थान में स्थित होकर परस्पर इत्थशाल करें और चन्द्रमा इन्हीं में से किसी के साथ इत्थशाल करे तो वह उत्तमोत्तम कम्बूल योग होता है। यथा-

उदाहरण उत्तमोत्तम कम्बूल योग



प्रस्तुत कुण्ड़ली में उत्तमोत्तम कंबूल का उदाहरण है। लग्नेश मंगल उच्च का १८ अंश पर दशम भाव में है। तथा कार्येश (पंचमेश) सूर्य लग्न भाव में उच्च राशिस्थ है। दोनों का इत्थशाल योग

---

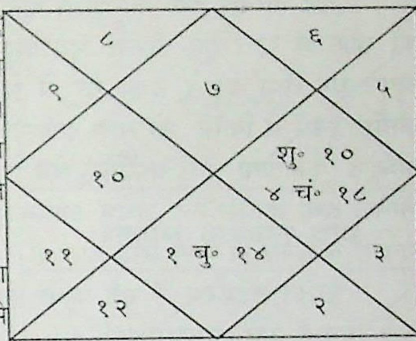
1. (क) लग्नकार्यशयोरित्थिशालेऽत्रेन्द्रित्थ शालतः।
कम्बूलं श्रेष्ठमध्यादिभेदैर्नानाविधं स्मृतम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २२)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३४
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४

है। स्वक्षेत्री चन्द्रमा चतुर्थ स्थान में १२ अंश का है, जो लग्नेश-कार्येश दोनों ग्रहों से इत्थशाल करता है। इस उत्तमोत्तम कंबूल योग से वर्ष में सन्तान सुख होगा। यह अत्यन्त शुभ फलदायक एवं कार्य सिद्धिप्रदायक योग है।[1]

उत्तममध्यम कम्बूल योग :-

लग्नेश कार्येश दोनों अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में हों और वे दोनों परस्पर इत्थशाल करते हों और यदि चन्द्रमा अपने घर तथा अपने उच्च स्थान में स्थित होकर कार्येश के साथ इत्थशाल योग करे तो उत्तम मध्यम कम्बूल योग होता है। यह योग कार्यसाधक होता है। इस योग के होने से वर्ष पर्यन्त व्यक्ति के समस्त कार्य बिना विघ्न-बाधाओं के अच्छी तरह होते हैं।

उत्तममध्यम कम्बूल योग

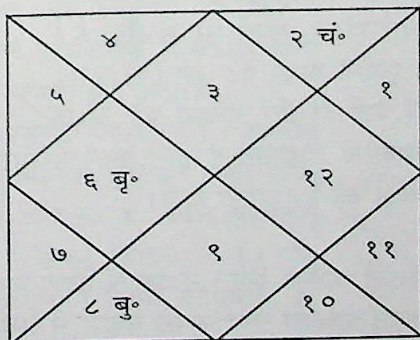


प्रस्तुत उदाहरण में किसी ने पूछा मेरा भाग्य उदय होगा या नहीं? उस समय तुला लग्न है। उसका स्वामी शुक्र १० अंशों से युक्त होकर दसवें स्थान में अपनी हद्दा में हैं। भाग्य स्थान का स्वामी बुध १४ अंशों से युक्त होकर सप्तम स्थान तथा अपनी हद्दा में स्थित है। इन दोनों का परस्पर मुथशिल योग है। यहाँ चन्द्रमा १८ अंशों सेयुक्त होकर अपने घर अर्थात् कर्क राशि में स्थित होकर कार्येश के साथ इत्थशाल करता है इसलिये यह उत्तम मध्यम कंबूल हुआ। अतः इस योग द्वारा भाग्यउदय की वृद्धि होगी ऐसा कहना चाहिए।[2]

उत्तम कम्बूल योग :-

यदि लग्नेश कार्येश उत्तम, मध्यम और अधम अधिकार से हीन हों और उनके साथ मुथशिल योग करता हुआ चन्द्रमा अपने घर या उच्च स्थान में बैठा हुआ इत्थशाल योग करे तो उत्तम कम्बूल योग होता है। इस योग के होने से दूसरे की प्रेरणा या दूसरे की सहायता से कार्य सिद्ध होते हैं।

उत्तम कम्बूल योग



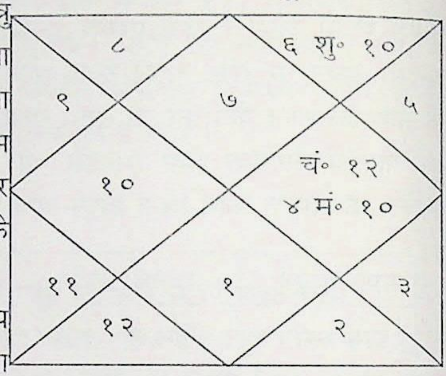
1. (क) यदीन्दुः स्वगृहोच्चस्थस्तदृशौ लग्नकार्यपौ।
इत्थशाली कम्बूलं तदुत्तमोत्तममुच्यते॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २३)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३४
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४

2. (क) स्वीयहद्दाद्रेक्काणाङ्कभागस्थनेत्थशालतः।
मध्यमोत्तमकम्बूलं हीनाधिकृतिनोत्तमम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २४)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४

प्रस्तुत कुण्डली में किसी ने प्रश्न किया कि मुझे राज्य प्राप्त होगा या नहीं? उस समय मिथुन लग्न है। लग्न का स्वामी बुध सम घर में स्थित है और राज्यभाव का स्वामी बृहस्पति अपने समगृह अर्थात् कन्या राशि में स्थित है। इस प्रकार तीनों ग्रहों का मुथशील योग होते हुए उत्तम नाम का कम्बूल योग हुआ। इस योग में प्रश्नकर्त्ता की उत्तम राज्यप्राप्ति कहनी चाहिए।[1]

उत्तमाधम कम्बूल योग :-

उत्तमाधम कम्बूल योग

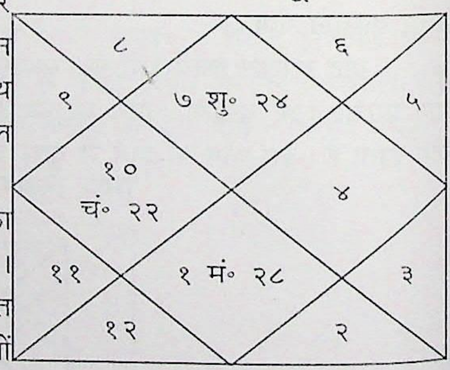


यदि लग्नेश तथा कार्येश ये दोनों अपने नीच अथवा शत्रु की राशि में रहते हुए परस्पर मुथशील योग करें और चन्द्रमा अपने घर तथा अपने उच्च घर में प्राप्त होकर लग्नेश तथा कार्येश इनमें से किसी के साथ इत्थशाल करे तो यह उत्तमाधम कम्बूल कहलाता है। क्योंकि यहाँ चन्द्रमा को उत्तम और लग्नेश तथा कार्येश को अधम अधिकार प्राप्त हैं। इस योग के होने से कठिनाई से कार्य सिद्ध होता है।

प्रस्तुत उदाहरण में स्त्री प्राप्ति होगी या नहीं? उस समय तुला लग्न है और उसका स्वामी १० अंशों से युक्त होकर कन्या राशि में स्थित है और स्त्री भाव का स्वामी १५ अंशों से युक्त होकर अपने से नीच कर्क राशि में है, और चन्द्रमा १२ अंशों से युक्त होकर अपनी कर्क राशि में स्थित है। इनका परस्पर इत्थशाल योग है। अतएव उत्तमाधम नामक योग बना। इसमें कुछ कठिनाई से स्त्री प्राप्ति की बात कहें।[2]

मध्यमोत्तम कम्बूल योग :-

मध्यमोत्तम कम्बूल योग



यदि चन्द्रमा अपने द्रेष्काण या नवांश में स्थित होकर अपने उच्च, अपने घर या अपने से उच्च राशि में विद्यमान और मुथशिल योग को प्राप्त लग्नेश या कार्येश के साथ इत्थशाल योग करता हो तो उसे मध्यमोत्तम नामक कम्बूल योग कहते है। यह योग कार्य साधक होता है।

उदारहण- स्त्री प्राप्ति प्रश्न में तुला लग्न है। उसका स्वामी शुक्र २४ अंशों से युक्त होकर अपने घर में बैठा है। उससे सप्तम भाव में मेष का स्वामी मंगल २८ अंशों से युक्त होकर अपने घर मेष राशि में बैठा है और चन्द्रमा २२ अंशों से युक्त होकर मकर के नवांश में विद्यमान है और इनमें परस्पर मुथशील योग है। यह मध्मोत्तम कंबूल योग हुआ अतः प्रश्नकर्त्ता को स्त्री प्राप्ति होगी।

मध्यममध्यम कम्बूल योग :-

अपनी हद्दा, अपने द्रेष्काण अथवा अपने नवांश में स्थित लग्नेश तथा कार्येश परस्पर मुथशील योग करते हों और चन्द्रमा अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में स्थित होकर मुथशील योग कराता हो तो उसे मध्यममध्यम कम्बूल कहते हैं।

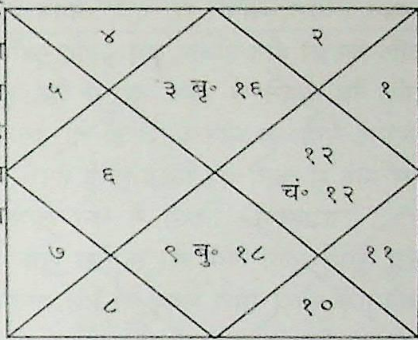
---

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ० ३८४
   (ख) ताजिक नीलकण्ठी, अ० २, श्लो० २४, पृ० ८१
2. (क) उत्तमाधमता नीचरिपुगेहस्थितेन चेत्।
   स्वद्रेष्काणांशगश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थेत्थशालकृत्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ० २, श्लो० २५)
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ० ३८४

उदाहरण–

स्त्री लाभ प्रश्न में, "मध्यम कंबूल" मिथुन लग्न है लग्नेश बुध धनु के १८ अंश पर अपने हद्दा में सप्तमेश बृहस्पति मिथुन के १६ अंश पर अपने हद्दा में और चन्द्रमा मीन के दूसरे द्रेष्काण में १२ अंश पर अपने द्वादशांश पर है अतः यहाँ पर तीनों की परस्पर दृष्टि होने से एवं मुथशिल परस्पर दृष्टि होने से एवं मुथशिल परस्पर होने से मध्यमध्यम कंबूल हुआ अतः स्त्री प्राप्ति में अत्याधिक यत्न करना होगा।[1]

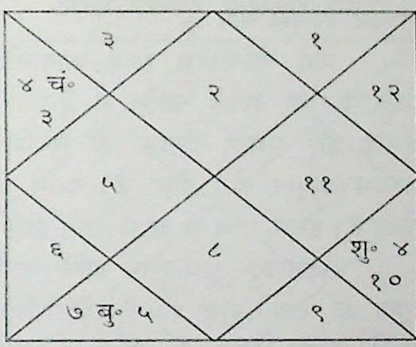
मध्यममध्यम कम्बूल योग



मध्यम कम्बूल योग :–

यदि लग्नेश अपना उत्तम तथा मध्यम अधिकार त्यागकर सम अधिकार को प्राप्त हो और लग्नाधीश तथा कार्येश में परस्पर इत्थशाल योग हो एवं चन्द्रमा मध्यम अधिकार को प्राप्त होकर उन दोनों के साथ इत्थशाल करता हो तो उसे मध्यम कम्बूल कहते हैं।

मध्यम कम्बूल योग

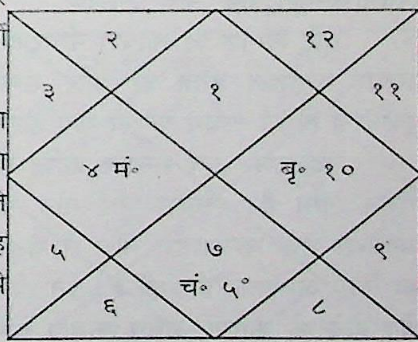


उदाहरण– सन्तान प्रश्न में वृष लग्न है। लग्नेश शुक्र ४ अंशों से युक्त होकर अपनी हद्दा और मकर राशि में विराजमान है। पंचमेश बुध ५ अंशों से युक्त होकर अपने समान हद्दा तुला राशि में विराजमान है। चन्द्रमा ३ अंशों से युक्त होकर अपने द्रेष्काण अर्थात् कर्क राशि में बैठा हुआ है। इनमें परस्पर मुथशील योग है। अतः यह मध्यम कंबूल हुआ। इसके फलस्वरूप कठिनाई से सन्तान की प्राप्ति होगी।

मध्यमाधम कम्बूल योग :–

यदि लग्नेश कार्येश नीच वा शत्रुराशि में परस्पर मुथशिलही हो, चन्द्रमा अपने द्रेष्काण व नवांशक में बैठकर दोनों केसाथ मुथशिली हों तो मध्यमाधम कंबूल योग होता है।

मध्यमाधम कम्बूल योग



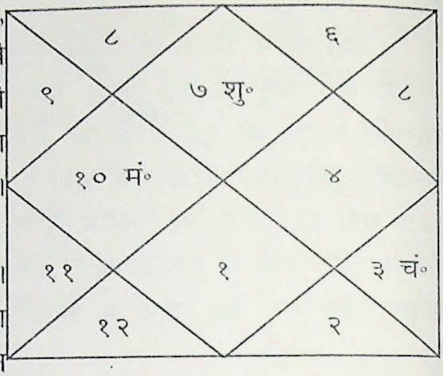
उदाहरण– भाग्य प्राप्ति प्रश्न में मेष लग्न है। लग्नेश मंगल कर्क का नीच राशि में और भाग्येश बृहस्पति मकर राशि में नीच है, चन्द्रमा तुला के पाँच अंश पर है, मंगल बृहस्पति के साथ चन्द्रमा मुथशिली होकर अपने विभाग में है। यह अधमाधम कंबूल योग हुआ अतः भाग्य प्राप्ति अतिकष्ट से होगी।[2]

---

1. (क) मध्यमोत्तममेतच्च पूर्वस्मान्न विशिष्यते।
   स्वहद्दादिपदस्थेन कम्बूलं मध्यमध्यमम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २६)
   (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८४
2. (क) मध्यमं च कम्बूलं स्यादीनाधिकृतिखेटजम्।
   मध्यमाधम कम्बूलं नीचारिभगखेटजम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २७)

उत्तम कम्बूल योग :-

उत्तम कम्बूल योग

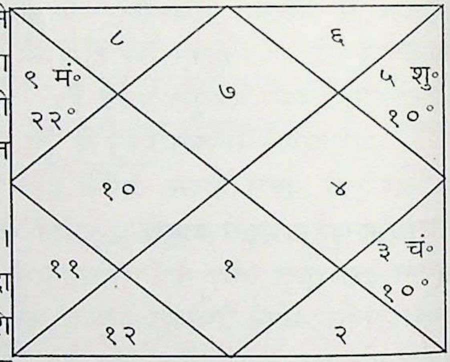


यदि चन्द्रमा अपने घर, अपने से उच्च, अपने द्रेष्काण, अपने नवांश, अपने से नीच, अपने शत्रु तथा अपने क्षेत्ररूपी अधिकार से हीन होकर सम आदि गृहों में बैठा हो और अपनी राशि या अपने से उच्च घर में बैठे हुए लग्नेश तथा कार्येश परस्पर मुथशिल योग करते हों तो उत्तम कम्बूल योग होता है। इस योग में कार्य की सिद्धि होती है।

उदाहरण– किसी ने धन लाभ सम्बन्धी प्रश्न किया। उस समय तुला लग्न है। लग्नेश शुक्र अपने घर में है। धनेश अपने से उच्च राशि मकर में विराजमान है। चन्द्रमा के समान द्रेष्काण अर्थात् राशि में बैठा है। इनमें परस्पर मुथशिल योग है। यह उत्तम कम्बूल योग हुआ इसमें कहना चाहिए कि धन प्राप्ति अवश्य होगी।

मध्यम कम्बूल योग :-

मध्यम कम्बूल योग

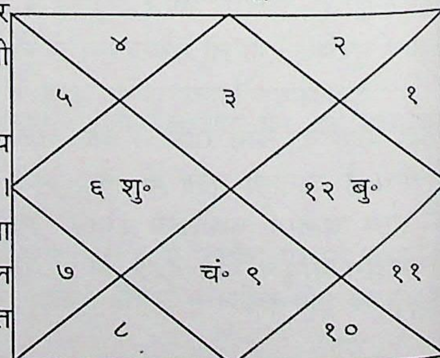


यदि लग्नाधीश तथा कार्याधीश अपनी हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में बैठकर परस्पर मुथशिल योग करता हो, अथवा चन्द्रमा ही मुथशिल योग करता हो तो मध्यम कंबूल योग होता है। इसमें चन्द्रमा अधिकार रहित होता है। इसमें यत्न से कार्य लाभ होता है।

उदाहरण– धन लाभ प्राप्ति के प्रश्न में तुला लग्न है। तुला का स्वामी शुक्र १० अंशों से सिंह राशि एवं अपनी हद्दा में हैं। धनेश मंगल २२ अंशों से उपलक्षित होकर धन राशि एवं अपनी हद्दा में बैठा हुआ है। चन्द्रमा १० अंशों का मिथुन राशि अपने मध्यम द्रेष्काण में है। लग्नेश कार्येश तथा चन्द्रमा का मुथशिल योग है। यह मध्यम कंबूल योग हुआ। इसके फलस्वरूप प्रश्नकर्त्ता को मध्यम धन लाभ होगा।[1]

अधम कम्बूल योग :-

अधम कम्बूल योग



यदि लग्नेश वा कार्येश नीचराशि वा शत्रुराशि में होकर परस्पर मुथशिल होता हो और समानाधिकारी चन्द्रमा भी मुथशिली हो तो अधम कंबूल योग होता है।

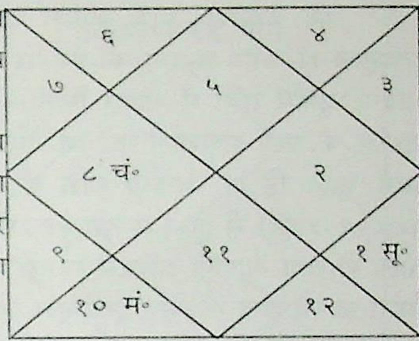
उदाहरण– पुत्र सन्तान प्राप्ति का प्रश्न है। इस समय मिथुन लग्न है। लग्नेश बुध मीन नीच राशि में बैठा है। पञ्चमेश शुक्र कन्याराशि नीच में बैठा हुआ है। यहाँ चन्द्रमा का कोई अधिकार ही नहीं है। इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग होने के कारण अधम कंबूल योग है। अतः पुत्र प्राप्ति कुछ कठिनाई से होगी।[2]

---

1. (क) इन्दुः पदोनः स्वक्षोंच्चस्थितेनाप्युत्तमं तु तत्।
स्वहद्दादिगतेनापि पूर्ववन्मध्यमुच्यते॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ २८)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८४
2. (क) नीचारिस्थेनेत्थशालेऽधमकम्बूलमुच्यते॥ (ता॰नी॰, अ॰ २, श्लो॰ २९/२)

अधमोत्तम कम्बूल योग :–

अधमोत्तम कम्बूल योग

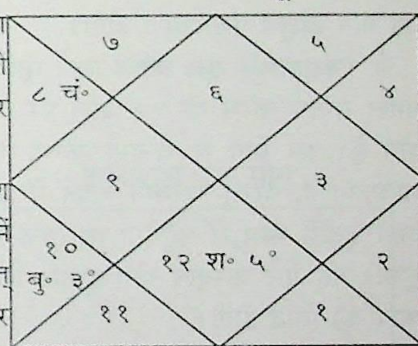


यदि चन्द्रमा नीच या शत्रु राशि में बैठा हो और लग्नेश तथा कार्येश परस्पर मुथशिल करते हुये अपने या अपने से उच्च स्थान में बैठे हों तो अधमोत्तम कम्बूल होता है।

उदाहरण – सुख प्राप्ति प्रश्न में सिंह लग्न है।लग्नेश सूर्य मेष उच्च राशि में है। कार्येश मंगल मकर में उच्च राशि का है। चन्द्रमा वृश्चिक राशि नीच में है। इन तीनो का परस्पर मुथशिल योग होने पर अधमोत्तम कम्बूल हुआ। इसलिए कहा जायेगा कि कुछ परिश्रम करने पर सुख की प्राप्ति होगी।[1]

अधममध्यम कम्बूल योग :–

अधममध्यम कम्बूल योग

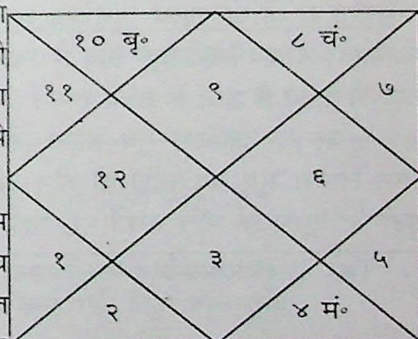


यदि चन्द्रमा नीच (वृश्चिक) राशि में अथवा शत्रु के घर में बैठा हो और लग्नेश तथा कार्येश अपनी हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में बैठकर परस्पर मुथशिल योग करते हों तो अधममध्यम कम्बूल योग होता है। यहाँ चन्द्रमा का अधिकार अधम है और लग्नेश तथा कार्येश मध्यमाधिकारी हैं।

उदाहरण– सन्तान प्राप्ति के प्रश्न में कन्या लग्न है। लग्नेश बुध ३ अंशों से उपलक्षित होकर अपनी हद्दा अर्थात् मकर राशि में विद्यमान् है। पुत्रभाव का स्वामी शनि ५ अंशों में अपनी हद्दा अर्थात् मीन राशि में विद्यमान है और चन्द्रमा ३ अंशों से उपलक्षित होकर अपने से नीच अर्थात् वृश्चिक राशि में बैठा हुआ है। इन तीनों का परस्पर मुथशिल होने पर अधममध्यम कम्बूल योग हुआ। फल यह है कि बड़ी कठिनाई से सन्तति प्राप्त हो सकेगी।[2]

अधमाधम कम्बूल योग :–

अधमाधम कम्बूल योग



यदि लग्नेश और कार्येश अपनी नीच या शत्रु की राशि में बैठकर परस्पर मुथशिल योग करते हों और चन्द्रमा भी अपने नीच या अपने शत्रु की राशि में रहकर मुथशिल योग करता हो तो अधमाधम कम्बूल योग होता है। इसके होने से महाकष्ट और विपत्ति होती है।

उदाहरण– किसी ने प्रश्न किया कि मुझे पुत्र लाभ होगा या नहीं? उस समय धनु लग्न है। लग्नेश बृहस्पति नीच अर्थात्, मकर राशि में बैठा हुआ है। पुत्रभाव कास्वामी मंगल नीच अर्थात् कर्क राशि में बैठा हुआ है। चन्द्रमा भी नीच अर्थात् वृश्चिक राशि में बैठा हुआ है। इसका परस्पर मुथशिल योग होने से अधमाधम कम्बूल योग

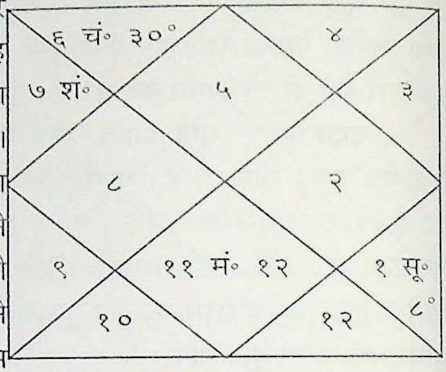
---

1. (क) नीचशत्रुभगश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थेत्थशाल कृत्।
अधमोत्तमकम्बूलं पूर्वतुल्यफलप्रदम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ३०)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८५
2. (क) चन्द्रो नीचरिगेहस्थः स्वहद्दादिगतेन चेत्।
तत्रेत्थशाली कम्बूलमुच्यतेऽधममध्यमम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ३१)

हुआ। अतः यह योग होने से प्रशनकर्त्ता को पुत्र लाभ नहीं होगा।[1]

९. गैरि कम्बूल योग :-

गैरि कम्बूल योग

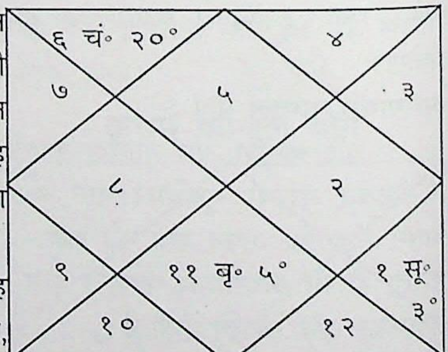


यदि लग्नेश और कार्येश दोनों ग्रहों का परस्पर इत्थशाल हो, और चन्द्रमा की इन पर दृष्टि न हो, परन्तु वह चन्द्रमा अग्रिम राशि में जाकर किसी अन्य (गेर) बलवान् या शुभग्रह के साथ इत्थशाल करें तो गैरि कम्बूल योग होता है। इसमें ध्यान रहे कि चन्द्रमा राशि के अन्तिम भाग (लगभग २८, २९ अंशों) में हो और वह आगामी राशि में, प्रवेश करने वाला हो तथा आगामी राशि में स्वगृही या सर्वोच्चग्रह पहले ही स्थित हो जो चन्द्र के साथ इत्थशाल करेगा। इस योग के होने से वर्ष में किसी गैर अथवा अन्य व्यक्ति की सहायता से काम होगा। यदि चन्द्रमा अन्य राशि में स्थित होकर नीच, अस्त आदि पापी ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो वह योग अशुभ फलदायक होगा।

उदाहरण- सुख प्राप्ति प्रश्न में सिंह लग्न है। लग्नेश सूर्य आठ अंश पर नवम भाव में, कार्येश मंगल सप्तम कुम्भ के १२ अंश पर है, और यहाँ लग्नेश, कार्येश (सू॰, मं॰), का परस्पर मुथशिल योग है। इस योग में चन्द्रमा कन्या राशि के अन्तिम (३०वें) अंश पर है। यहाँ चन्द्रमा तृतीय भावगामी है, परन्तु वर्तमान काल में लग्नेश या कार्येश के साथ इत्थशाल नहीं करता। परन्तु अब आगे तृतीय भाव में पहुँचेगा तो तुला राशि शनि की उच्च है। अतः शनि के साथ चन्द्रमा का योग हुआ। यह गैरि कम्बूल योग हुआ। किसी अन्य तृतीय सहायक मनुष्य की सहायता से ही वांछित कार्य की सिद्धि होगी।[2]

१०. खल्लासर योग :-

खल्लासर योग



जब लग्नेश और कार्येश ग्रहों का परस्पर इत्थशाल योग हो परन्तु शून्यमार्ग्री चन्द्रमा (स्वराशि, उच्च अथवा किसी शुभ या अशुभ ग्रह द्वारा दृष्ट न हो) दोनों में से भी इत्थशाल न करता हो तो खल्लासर नाम का अशुभ योग बनता है। यह कार्य बाधक एवं विनाशक योग है। इस योग से कम्बूल योग नष्ट हो जाता है।

प्रस्तुत उदाहरण पुत्र प्राप्ति के सम्बन्ध में है। सिंह लग्न लग्नेश सूर्य मेष राशि के तीन अंश पर है, पुत्र भावेश, बृहस्पति कुम्भ के पाँच अंशों पर, यहाँ लग्नेश, कार्येश इनका

---

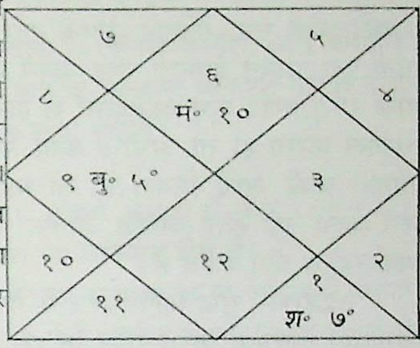
1. (क) नीचारिभस्थखेटेन नीचारिभिगतः शशि। तदित्थशाली कम्बूलमधमाधममुच्यते॥
वृश्चिकस्थः शशी भौमः कर्के तत्रेत्थशालतः। अधमाधमकम्बूलं कार्यविध्वंसदुःखम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ३३, ३५)

2. (क) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३४
(ख) लग्नकार्येशयोरित्थिशाले शून्याध्वगः शशी। उच्चादिपंदशून्यत्वान्नेत्थशालोऽस्य केनचित्॥
यद्यन्यर्क्षं प्रविचश्यैष स्वर्क्षोच्चस्थेत्थशालवान्। गैरिकम्बूलमेतत्तु पदोनेनाशुभं स्मृतम्॥
लप्स्ये सुखमिति प्रश्ने सिंह लग्ने रविः क्रिये। अष्टांशैः सुखयः कुम्भे भौभोंऽशरविभिस्तयोः॥
इत्थशालोऽस्ति तत्रेन्दुः कन्यायां चरमेंऽशके। स्वर्क्षादिपदहीनस्य नेत्थशालोऽस्य केनचित्॥
स स्वोच्चेगेन शनिनाऽन्यर्क्षस्थेनेत्थलालकृत्। गैरिकम्बूलमन्येन सहायाल्लाभदायकम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ४२-४६)

इत्थशाल योग है। चन्द्रमा कन्या राशि के २० अंश में हैं। यह किसी के साथ नहीं है यह खल्लासर योग पुत्र प्राप्ति में बाधा करेगा। यही इसका फल है।[1]

११. रद्द योग :-

उदाहरण रद्द योग

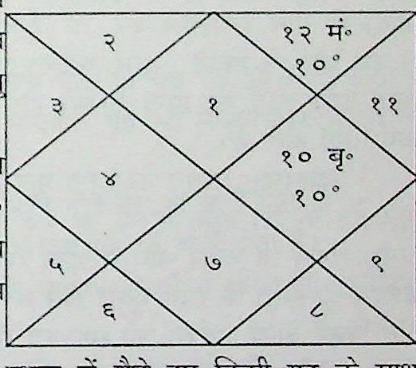


रद्द शब्द पारसीय (निकम्मा) निर्बल का पर्याय है जो ग्रह अस्त हो गया हो, अपने नीच घर में हो, वक्री अथवा तेज रहित हो ऐसा ग्रह दुर्बल माना जाता है। यदि कोई दुर्बल किसी भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल योग करे वह ग्रह आदि और अन्त में उस भाव के स्वामी के कार्यों का साधन नहीं करता। क्योंकि उस ग्रह में वह सामर्थ्य नहीं रहती कि किसी का तेज ग्रहण कर सके; इस योग का नाम ही रद्द योग है। यह योग कार्यों में विघ्न-बाधाएँ व हानि करने वाला होता है। कई बार कार्य सिद्ध होकर भी निष्फली हो जाता है।

प्रस्तुत उदाहरण कुण्डली में लग्नेश बुध व कार्येश (पंचमेश) शनि अष्टम भाव में नीच राशिस्थ है। दोनों पर क्रूर ग्रह मंगल की दृष्टि पड़ने से "रद्दनामक", योग हुआ।[2]

शुभाशुभ रद्द योग :-

शुभाशुभ रद्द योग



१. यदि कोई दुर्बल ग्रह कार्यधीश होकर केन्द्र में बैठा हुआ आपोक्लिम स्थान में विद्यमान लग्नेश के साथ मुथशिल योग करता हो तो कार्य प्रारम्भ में अच्छी तरह होता है, किन्तु अन्त में नष्ट हो जाता है।

उदाहरण- भाग्य प्राप्ति प्रश्न में मेष लग्न है। लग्नेश बारहवाँ मंगल दुर्बल और भाग्येश बृहस्पति मकर नीच का १० अंश में है यहां शीघ्र मंगल आपोक्लिम में बैठकर केन्द्रस्थ मन्दगति गुरु के साथ इत्थशाली होने से रद्द योग प्रथम शुभ पश्चात् अशुभ फलदायक होगा।

२. यदि आपोक्लिम स्थान में बैठा हुआ ग्रह केन्द्र स्थान में बैठे हुए किसी ग्रह के साथ मुथशिल योग करता हो तो कार्य आदि में बिगेड़ता हुआ दीखता है, किन्तु अन्त में सिद्ध हो जाता है।[3]

---

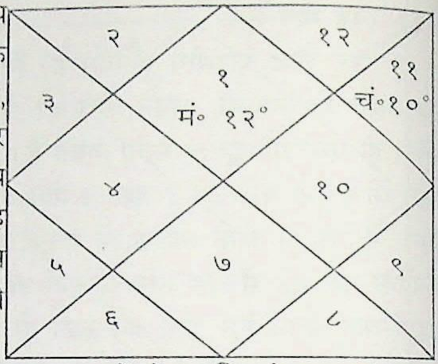
1. (क) शून्येऽध्वनीन्दुभयोर्नेत्थशालो न वा युतिः।
खल्लासरो न शुभदः कम्बूलफलनाशनः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ४७)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३५
(ग) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३२५, (घ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९६
(ङ) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८४

2. (क) अस्तनीचरिपुवक्रहीनभा दुर्बलो मुथशिलं करोति चेत्।
नेतुमेष न विभुर्यतो महोऽन्ते मुखेऽपि न स कार्यसाधकः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ४८)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३५
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८५, (घ) वर्षफल दर्पण, डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९६
(ङ) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८४

3. (क) केन्द्रस्थ आपोक्लिमगं युनक्ति भूत्वादित्तोनश्यति कार्यमन्ते।
आपोक्लिमस्थो यदि केन्द्रयातं विनश्यपूर्वं भवतीह पश्चात्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ४९)

१२. दुःफालिकुत्थ योग :-

दुःफालिकुत्थ योग

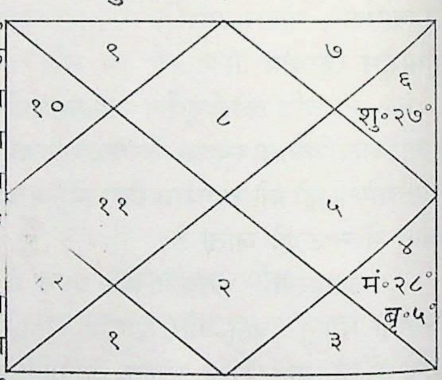


पारसीय भाषा में दुःफालि शब्द दुःसाध्य और कुत्थ शब्द शुभ वाची है, अर्थात् दुःफालिकुत्थ दुःसाध्य शुभ वाचक है। यदि कोई मन्द गतिग्रह अपनी राशि, अपने उच्च स्थान, अपनी हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में स्थित होकर अपनी राशि आदि शुभ अधिकारों से हीन शीघ्रगतिग्रह के साथ इत्थशाल करता हो तो अभीष्ट कार्य सिद्ध होता है। यदि वह शीघ्रगति वक्री आदि निर्बल हो तो वांछित कार्य का साधन करने वाला नहीं होता अथवा अनिष्ट फल देता है। इसी को दुष्फालिकुत्थ योग कहते हैं।

उदाहरण– सुख प्राप्ति प्रश्न में मेष लग्न है। लग्नेश मंगल लग्न में मेष राशि के १२ अंश पर सुखभावेश ग्यारहवां कुम्भ राशि के दस अंश पर चन्द्रमा इत्थशाली है, मंगल पदयुक्त और चन्द्रमा पदहीन है, ऐसा दुष्फालि कुत्थ योग हुआ। सुख प्राप्ति यत्न से करता है।[1]

१३. दुत्थोत्थदिवीर योग :-

दुत्थोत्थदिवीर योग

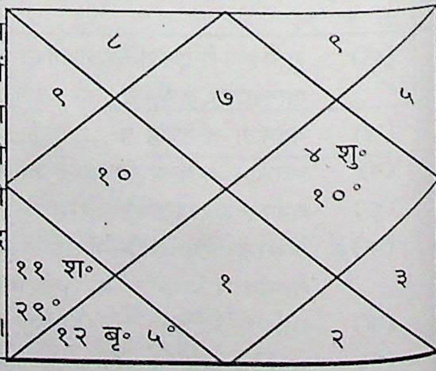


यदि लग्नेश और कार्येश ग्रह निर्बली (शत्रुक्षेत्री, पापयुक्त, नीचादि) होकर इत्थशाल करें, और उनमें से एक ग्रह किसी अन्य बली ग्रह (उच्चस्थ, स्वक्षेत्री, अपनी हद्दा आदि) के साथ इत्थशाल करे, तो "दुत्थोत्थदिवीर" योग बनता है। इस योग में किसी दूसरे व्यक्ति की सहायता से अथवा उसके द्वारा कार्य का होना सम्भव होता है। अतः सहयोग से कार्य सिद्धि होती है।

उदाहरण– प्रस्तुत उदाहरण कुण्डली में विवाह सम्बन्धी प्रश्न है। कार्येश शुक्र कन्या के २७ अंश पर नीच है तथा लग्नेश मंगल भी नवम भाव में कर्क राशि में नीच होकर उच्च राशिस्थ बृहस्पति के साथ युक्त होने से "दुत्थोत्थदिवीरयोग" बनता है। अतः स्त्री (विवाहादि) सम्बन्धी कार्य किसी अन्य व्यक्ति की सहायता से सिद्ध होगा।[2]

१४. तम्बीर योग :-

तम्बीर योग



यदि लग्नेश और कार्येश ग्रहों का परस्पर मुथशिल योग नहीं हो, और इनमें से कोई एक बलवान ग्रह राशि के अन्तिम अंश अर्थात् ३०वें अंश में विद्यमान रहता हुआ अन्य राशि में गमन कर रहा हो तो वह अपने दीप्त अंशें द्वारा अगली राशि में विद्यमान ग्रह को अपना तेज प्रदान करता है। इसी को तम्बीर योग कहते हैं। अग्रिम राशि में बैठा हुआ ग्रह यदि अपने गृह आदि बलों से युक्त हो तो यह योग अभीष्ट कार्य सिद्ध करने वाला होता है।

उदाहरण– सुख प्राप्ति के प्रश्न में तुला लग्न है।

1. (क) मन्दःस्वभोच्चादिपदे स्थितश्चेत्पदोनशीघ्रेणकृतेत्थशालः।
तत्रापि कार्य भवतीति वाच्यं वक्रादिनिर्वीर्यपदे न चेत्स्यात्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ० २, श्लो० ५०)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पृ० १३५ (ग) भारतीय ज्योतिष, अ० ४, पृ० ३८५

१. (क) वीर्योनितौ कार्यविलग्ननाथौ स्वक्षादिगेनान्यतरोयुनक्ति।
अन्यौ यदा द्वौ बलिनौ तदान्यसाहाय्यतः कार्यमुशन्ति सन्तः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ० २, श्लो० ५१)

लग्नेश शुक्र कर्क के १० अंश में सुख भावेश शनि कुम्भ के २९ अंश पर है। इनका इत्थशाल नहीं है, परन्तु बृहस्पति मीन के पांच अंश पर है इसको शीघ्रगतिशनि कुम्भ के २९ अंश पर मीन को गंतव्य होने से और बृहस्पति के साथ भविष्य मुथशिल करने से अपना तेज बृहस्पति को देता है। यह कार्य साधक योग है, अतः सुख प्राप्ति करेगा।[1]

१५. कुत्थ योग :-

यवन भाषा में कुत्थ से तात्पर्य बली है। यदि वर्ष कुण्डली में लग्नेश कार्येश आदि बनवान् हों तो "कुत्थयोग" होता है। केन्द्र और पणफर में स्थित पंचवर्गी बल के अनुसार बलवान ग्रह बली होता है। इसके अतिरिक्त चारों प्रकार से हर्षबल का भी विचार कर लेना चाहिए।

विशेष – बल भी अनेक तरह के होते हैं :- जैसे

(i) सबकी अपेक्षा लग्न में विद्यमान ग्रह बलवान होता है। उसक अभाव में केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थान में स्थित ग्रह बलवान होते हैं।

(ii) चारों केन्द्रों में ग्रह न होकर (किसी भी केन्द्र में ग्रह नहीं है) तो केन्द्रस्थ ग्रह के अभाव में पणफर (२, ५, ८, ११) द्वितीय, पंचम, अष्टम और एकादश भाव में स्थित ग्रह बलवान होता है। केन्द्रस्थ ग्रह बली होता है। केन्द्रस्थ ग्रह की अपेक्षा पणफर भाव को कम बली समझना चाहिए।
उक्त स्थितियों के अभाव में लग्न को देखने वाला ग्रह भी बली होता है। केन्द्र के निकट पणफर आपोक्लिम में स्थित ग्रह विलग्नदर्शी तथा तृतीय, पंचम और नवम तथा एकादश स्थान में स्थित ग्रह बलवान होते हैं।

(iii) जो ग्रह, अपनी उच्च राशि में स्वराशि में स्वद्रेष्काण में, स्व नवांश में, या अपनी हद्दा में हो वह ग्रह बली कहा जाता है।

(iv) जिस स्पष्ट ग्रह की गति, ग्रह की मध्यम गति के तुल्य गति हो वह ग्रह भी बली होता है। मध्यम गति से कम गतिवाला ग्रह बली होता है। मन्दगति ग्रह भी मध्यगमनशील ग्रह की अपेक्षा कभी-कभी बलवान हो जाया करते हैं।[2]

(v) अस्त के अनन्तर उदय हुआ ग्रह बली होता है और वक्री गति ग्रह भी बली होता है।

(vi) जो ग्रह शुभ ग्रहों या केवल शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो वह ग्रह भी बली होता है।

(vii) जो ग्रह पाप ग्रहों या ग्रह की प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम दृष्टियों से रहित हो वह ग्रह भी बली होता है।

(viii) जो ग्रह पाप ग्रह से युत न हो वह ग्रह भी वली ग्रह होता है। यह ग्रहों का सामान्य बल है और ग्रहों का समय बल इस प्रकार है-

---

1. (क) बली राश्यन्तगोऽन्यर्क्षगामी दीप्तांश कैर्महः।
दत्तेऽन्यस्मै कार्यकरस्तम्बीरो लग्नकार्यपोः॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ५२)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८५
(ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ १८४
(घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३६
(ङ) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ ९६

2. (क) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८५
(ख) लग्नेऽथ केन्द्रे निकटेऽपि वास्य विलग्नदर्शीस्वगृहोच्चदृक्के।
मुसल्लहे स्वे निजहद्दगो वा बली ग्रहोमध्यगतिस्त्वशीघ्रः॥ (ता॰नी॰, अ॰ २, श्लो॰ ५३)
(ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९७
(घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८५

(i) शुक्र, चन्द्रमा और मंगल सायंकाल में उदय होने से बली कहे जाते हैं।
(ii) गुरु और शनि अर्धरात्रि के बाद उदित हों तो बली होते हैं।
(iii) पुरुषग्रह, सूर्य, मंगल और गुरु ये दिन में बली होते हैं।
(iv) स्त्रीग्रह, चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि रात्रि में बली होते हैं।
(v) जो ग्रह सूर्य के नवांश में न हो वह ग्रह भी बली होता है।
(vi) स्त्री ग्रह (चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि) चतुर्थ स्थान से ६ राशि आगे नवम भाव तक यदि बैठे हों तो बली होते हैं।
(vii) पुरुषग्रह दशम भाव से प्रारम्भ से ६ राशि आगे तीसरे भाव के अन्त तक स्थित होने से बली होते हैं।
(viii) विषम राशि स्थित (१, ३, ५, ७, ११) पुरुषग्रह बली होते हैं। सम राशियों (२, ४, ६, ८, १०, १२) में स्थित स्त्री ग्रह बली होते हैं। उक्त प्रकार सेग्रहों का बलाबल विचार करते हुए शुभाशुभ फल की विवेचना करते हुए फलादेश करना चाहिए।[1]

१६. दुरफ्फ योग :-

दुरफ्फ योग कुत्थ योग का बिल्कुल उल्टा है। त्रिक् (६। ८ । १२) भाव में स्थित ग्रह; वक्री होने वाला, वक्री, शत्रुगृही, नीच, पापयुक्त कान्तिहीन, अस्त, बलहीन ग्रह, इसी प्रकार के अन्य निर्बल ग्रह से मुथशिल योग होता है। इसका फल शरीर कष्ट, विपत्ति, मानसिक तनाव, धनहानि कलह-क्लेश आदि होते हैं। दुरप्फ का मतलब ही निर्बल होता है अतः ग्रह की निर्बलता जानने के लिये कुछ तथ्य निम्न हैं -

(i) वर्ष, मास, दिन या प्रश्न लग्न से जो ग्रह छठे, आठवें और बारहवें स्थान में स्थित हों तो वह निर्बल ग्रह कहलाता है।
(ii) शत्रुक्षेत्री ग्रह भी निर्बल कहलाता है।
(iii) नीच राशिगत ग्रह को भी निर्बल ग्रह कहते हैं।
(iv) पापग्रहों से युत ग्रह को भी निर्बल ग्रह समझना चाहिए।
(v) अस्तंगत ग्रह भी निर्बल ग्रह होता है।
(vi) क्रूर ग्रह और प्रथम-चतुर्थ-दशम-सप्तम स्थानगत ग्रह से दृष्ट ग्रह भी निर्बल ग्रह है।
(vii) द्वादश, षष्ठ या अष्टम भाव स्थित ग्रहों से इत्थशाल करने की स्थिति में या इत्थशाल करने की इच्छा करने वाला ग्रह अथवा वह ग्रह जो इत्थशाल करता हो तो वह ग्रह भी निर्बल कहा गया है।
(viii) जो ग्रह अपने घर से सप्तम घर में बैठा हो और राहु के मुख या पुच्छ में गया हुआ ग्रह (राहु के भुक्त अंश और भोग्यांश) भी निर्बल होता है।
(ix) जो ग्रह लग्न को नहीं देखता वह ग्रह भी निर्बल होता है।
(x) जो ग्रह सूर्य नवांश से सप्तम नवांश में है वह ग्रह भी निर्बल होता है।

1. (क) कृतोदयो मार्गगतिः शुभेन युतेक्षितः क्रूरखगस्य दृष्ट्या।
क्षुताख्ययानाधिगतो न युक्तः क्रूरेण सायं च सितेन्दु भौमाः॥
यदोदयन्ते पर रात्रिभागैजीवार्क जावहि नराः सवीर्याः।
अन्यं निशीनस्य नवैकभागे स्थिताः स्थिरर्क्षेन बलेन युक्ताः॥
स्त्रियश्चतुर्थात्पुरुषा वियद्वाद्रषट्कगा ओजभगाः पुमांसः।
समे परे स्युर्बलिनौ विमृश्य विशेषमेतेषु फलं निगद्यम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ५४-५६)
(ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८६

(xi) जो ग्रह अपने उच्च, अपनी राशि, अपनी हद्दा, अपने द्रेष्काण व अपने नवांश में नहीं है, सभी पदों से हीन है, वह ग्रह निर्बल होता है।

(xii) जो ग्रह पापग्रह के साथ ईसराफ योग करता है वह ग्रह भी निर्बल होता है क्योंकि ऐसे ग्रह में कार्य करने की क्षमता नहीं होती।[1]

चन्द्रमा के सम्बन्ध में दुरफ्फ योग :-

(i) यदि सूर्य की राशि में बारहवें स्थान में चन्द्रमा बैठा हो तो ऐसे चन्द्रमा को निर्बल कहा गया है।

(ii) वृश्चिक राशि के पूर्वार्ध का अर्थात् (७ । १५°) चन्द्रमा भी निर्बल कहा गया है तथा तुला राशि के उत्तरार्ध में चन्द्रमा हो तो अशुभ (१५ से ३० अंश) होता है।

(iii) जिस राशि में चन्द्रमा है उस राशि का अधिपति ग्रह यदि चन्द्रमा को नहीं देख रहा है तथा अन्य ग्रहों की भी यदि चन्द्रमा पर दृष्टि नहीं है तो ऐसे चन्द्रमा को भी शून्य मार्ग या अधिकार हीन कहा जाने से ऐसा चन्द्रमा भी निर्बल चन्द्रमा कहा जाता है।

(iv) क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष षष्ठी से शुक्ल पक्ष चतुर्थी तक मतान्तर से कृष्ण पक्ष अष्टमी से शुक्ल पक्ष अष्टमी तक तथा अन्य मतों से कृष्ण पक्ष एकादशी से अमावस्या तक) जिस राशि में है, उस राशि के अन्तिम नवांश में हो तो ऐसा चन्द्रमा शुभ नहीं कहा जाता है। ऐसे चन्द्रमा को निर्बल चन्द्रमा कहते हैं। शुक्ल पक्ष में मंगल ग्रह और कृष्ण पक्ष में शनि ग्रह यदि १, ४, ७, १० दृष्टियों से चन्द्रमा को देखते हैं तो इस स्थिति का चन्द्रमा शुभ फलद नहीं होता है।

(v) शुक्ल पक्ष के दिन में विषम राशि गत (१, ३, ५, ७, ९, ११) शनि यदि चन्द्रमा को देखें तथा कृष्ण पक्ष की रात्रि में समराशि गत (२, ४, ६, ८, १०, १२) मंगल यदि चन्द्रमा को देखें तो पूर्वोक्त दोष की न्यूनता होती है। इस प्रकार की चन्द्र ग्रह की शुभाशुभता प्रश्न लग्न, वर्ष लग्न और जन्म लग्न से भी विचारनी चाहिये।[2]

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८५
   (ख) लग्नात्षष्ठाष्टमेऽन्त्येऽनृजुरिगृहगो नीचगो वक्रगामी,
   क्रूरैर्युक्तोऽस्तगो वा यदि च मुथशिली क्रूरनीचारिभस्थैः।
   क्षुदद्दृष्ट्याक्रूरदृष्टो व्ययरिपुमृतिगैरित्थशालं विधित्सुः,
   कुर्वन्वा निर्बलोऽयं स्वगृहनगभगो राहुपुच्छास्यवर्ती॥
   अनीक्षमाणस्तनुमस्तभागस्थितः स्वभोच्चादिपदैश्च शून्यः।
   क्रूरेसराफी न स वीर्ययुक्तः कार्यं विधातुं न विभुर्यतोऽसौ॥
   (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ५७, ५८)
   (ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८६
   (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३७
   (ङ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ९८
2. (क) चन्द्रः सूर्याद् द्वादशे वृश्चिकाद्ये खण्डे नेष्टोऽन्त्ये तुलायां विशेषात्।
   राशीशेनादृष्टमूर्तिर्न सर्वैर्दृष्टो ज्ञेयः शून्यमार्गः पदोनः॥
   क्षीणो भान्ते नो शुभो जन्मकाले पृच्छायां वा चन्द्र एवं विचिन्त्यः।
   शुक्ले भौमः कृष्णपक्षेऽर्कसूनुः क्षुदद्दृष्ट्येन्दुं वीक्षते नो शुभोऽसौ॥
   शुक्ले दिवा नृगृहगोऽर्कसुतः शशाङ्कं कृष्णे कुजो निशि समर्क्षगतः प्रपश्येत्।
   दोषाल्पतां वितनुतेऽपरथा बहुत्वं प्रश्नेऽथवा जनुषि बुद्धिमतोहनीयम्॥
   (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, श्लो॰ ५९-६१)
   (ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८७
   (ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १३७

वर्ष कुण्डली में सहम विचार :-

ताजिक शास्त्र में ५० सहमों का विशेष महत्त्व है, जिनके नाम इस प्रकार हैं-

(१) पुण्य (२) गुरु (३) ज्ञान (४) यश (५) मित्र (६) महात्म्य (७) आशा (८) समर्थता (९) भ्राता (१०) गौरव (११) राज्य (१२) पिता (१३) माता (१४) सुत (१५) जीवित (१६) अम्बु (१७) कर्म (१८) रोग (१९) कामदेव (२०) कली (२१) क्षमा (२२) शास्त्र (२३) बन्धु (२४) बन्दक् (२५) मृत्यु (२६) परदेश (२७) धन (२८) अन्यदारा (२९) अन्य कर्म (३०) वणिक् (३१) कार्य सिद्धि (३२) विवाह (३३) सूतिका (३४) सन्ताप (३५) श्रद्धा (३६) प्रीति (३७) बल (३८) तनु (३९) जड़ता (४०) व्यापार (४१) पानीयपतन (४२) रिपु (४३) शौर्य (४४) उपाय (४५) दरिद्रत्व (४६) गौरव (४७) अम्बुपंथ (४८) बन्धन (४९) दुहिता और (५०) अश्व। इस प्रकार आचार्य नीलकण्ठ ने ५० सहमों पर ही विचार किया है।[1]

सहम संस्कार :-

सहम संस्कार करते समय दिन में वर्ष प्रवेश है या रात्रि में वर्ष प्रवेश है इसका ध्यान विशेष रूप से रखा जाता है। दिन में वर्ष प्रवेश होने से दूसरे प्रकार से तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने से दूसरे प्रकार से संस्कार किया जाता है। जिसमें घटाया जाये उसे शुद्धाश्रय और जो घटाया जाये उसे शोध्य कहते हैं। यदि इन दोनों के मध्य में लग्न न हो तो एक राशि जोड़ देना चाहिए और मध्य में लग्न हो तो एक राशि नहीं जोड़ना चाहिए। सरलता से जानने के लिए निम्न कोष्टक दिया गया है —

सहम कोष्टक[2]

सहम	दिन में	रात्रि में	सहम	दिन में	रात्रि में
(१) पुण्य	चं-सू+ल	सू-चं+ल	(१०) सन्तान	गु-बु+ल	बु-गु+ल
(२) गुरु	सू-चं+ल	चं-सू+ल	(११) व्यापार	मं-बु+ल	मं-बु+ल
(३) यश	गु-पु+ल	पु-गु+ल	(१२) शत्रु	मं-श+ल	श-मं+ल
(४) भ्राता	गु-श+ल	गु-श+ल	(१३) बन्धन	पु-श+ल	श-पु+ल
(५) विवाह	शु-श+ल	शु-श+ल	(१४) गौरव	बृ-चं+सू	गु-चं+सू
(६) कार्य सिद्धि	श-सू+सू पु	श-चं+चं पु	(१५) तात	श-सू+ल	सू-श+ल
(७) माता	चं-शु+ल	शु-चं+ल	(१६) धन	द्वि-द्विप+ल	द्वि-द्विप+ल
(८) पुत्र	गु-चं+ल	गु-चं+ल	(१७) अन्य स्त्री	शु-सू+ल	शु-सू+ल
(९) विदेश	ध-ध पु+ल	धर्म-ध पु+ल	(१८) मृत्यु	अष्टम-चं+श	अष्टम-चं+श

1. (क) ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १-४) (ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १८९
2. (क) भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग-३, पृ॰ १५ (ख) ता. नी., पृ॰ ८५ (ग) वर्षफल दर्पण, पृ॰ ८७

पुण्य सहम का साधन :-

यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा से सूर्य को घटायें और रात में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य से चन्द्रमा को घटाकर शेष में लग्न को जोड़ देने से पुण्य सहम बन जाता है।

उदाहरण :- यहाँ वर्ष प्रवेश रात को हुआ है अतएव,

७ । ०५ । ४१ । ४१	स्पष्ट सूर्य में से
– ६ । १६ । १२ । ५१	चन्द्रमा को घटाया
० । १९ । २८ । ५०	**शेष में**
६ । २३ । ५१ । ३८	लग्न को जोड़ा
७ । १३ । २० । २८	**पुण्य सहम हुआ**

यहाँ लग्न शोध्य और शुद्धाश्रय और बीच में है क्योंकि चन्द्रमा तुला का है और सूर्य वृश्चिक का है तथा लग्न तुला है जो दोनों के मध्य में पड़ता है, अतएव एक राशि जोड़ने की आवश्यकता नहीं है।[1]

गुरु, विद्या और यश सहम :-

यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य में से चन्द्रमा को घटायें और रात में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में से सूर्य को घटाकर लग्न जोड़ देने से विद्या और गुरु सहम होते हैं।

यश सहम साधन के लिए यदि रात में वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में से गुरु सहम को घटायें और दिन में वर्ष प्रवेश हो तो गुरु सहम में से पुण्य सहम को घटाकर शेष में लग्न जोड़ना चाहिए तथा पूर्वोक्त सहम संस्कार भी करना चाहिए।

उदाहरण :-

	६ । १६ । १२ । ५१	[चन्द्रमा में सूर्य को घटाया जा रहा है, क्योंकि वर्ष प्रवेश रात में हुआ है।]
	७ । ०५ । ४१ । ४१	
शेष में	**११ । १० । ३१ । १०**	
लग्न जोड़ा	०६ । २३ । ५१ । ३८	
	०६ । ०४ । २२ । ४८	**गुरु और विद्या सहम हुआ।**

यश सहम का उदाहरण :-

	९ । २ । ४३ । ३५	पुण्य सहम
	८ । २९ । ३५ । १३	गुरु स्पष्ट को घटाया
शेष में	**० । ०३ । ०८ । २२**	
लग्न को जोड़ा	६ । २३ । ५१ । ३८	
	६ । २७ । ०० । ००	यश सहम हुआ।[2]

मित्र सहम :-

दिन में वर्ष प्रवेश हो तो गुरु सहम में से पुण्य सहम को घटायें और रात में वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में से गुरु सहम को घटाकर शेष में शुक्र को जोड़ दें। यदि शोध्य और शोधक के मध्य में शुक्र न आता हो तो एक राशि और जोड़ दें तो मित्र सहम सिद्ध हो जायेगा।

---

1. (क) सूर्योनचन्द्रान्वितमह्नि लग्नं वीन्द्वर्कयुक्तंनिशि पुण्यसंज्ञम्।
शोध्यर्क्षशुद्धथाश्रयभान्तराले लग्नं न चेत्सैकभमेतदुक्तम्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ५)
(ख) भारतीय ज्योतिष, अ॰ ४, पृ॰ ३८६ (ग) भारतीय कुण्डली विज्ञान-३, पृ॰ १५
(घ) वर्षफल दर्पण, पृ॰ ८८ (ङ) वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ १९१
2. (क) व्यत्यस्तमस्माद्गुरुविद्ययोस्तु संसाधनं पुण्यवियुक्सुरेज्यः।
दिवा विलोमं निशि पूर्ववत्तुयशोऽभिधं तत्सहमं वदन्ति॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ६)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८६
(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९० (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ १९१

उदाहरण :-

	९ । २४ । ३ । ३५	पुण्य सहम में
	५ । ०३ । २४ । १३	गुरु सहम घटाया
शेष में	**३ । २० । ३९ । २२**	
शुक्र जोड़ा	७ । २४ । ३१ । ४८	
	११ । १५ । ११ । १०	मित्र सहम हुआ।[1]

महात्म्य और आशा सहम :-

यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में भौम को घटायें और लग्न जोड़ें तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर मंगल में से पुण्य सहम को घटाकर लग्न जोड़ें तो महात्म्य सहम सिद्ध होता है।

आशा सहम साधन के लिए दिन में वर्ष प्रवेश होने पर शनि में से शुक्र तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर शुक्र में से शनि घटाकर वर्ष लग्न जोड़ देने से आशा सहम सिद्ध हो जाता है। क्रम से शुक्र-शनि और शनि-शुक्र के मध्य लग्न न होने पर १ राशि जोड़कर आशा सहम स्पष्ट होता है।

उदाहरण :-

९ । २ । ४३ । ३५	[पुण्य सहम में से मंगल
८ । १४ । ३२ । ३६	को घटाया]
० । १८ । १० । ५९	शेष में लग्न जोड़ा
+ ० । १८ । ०३ । ५४	
१ । ०६ । १४ । ५३	[एक राशि और जोड़ो से
+ १ । ० । ० । ०	महात्म्य सहम हुआ]
२ । ०६ । १४ । ५३	महात्म्य सहम

उदाहरण आशा सहम :-

	६ । ६ । ४६ । ५४	शनि में
	७ । २४ । ३१ । ४८	शुक्र घटाया
शेष में	**१० । १२ । १५ । ०६**	
लग्न जोड़ा	० । १८ । ०३ । ५४	
	११ । ०० । १९ । ००	आशा सहम हुआ।[2]

सामर्थ्य और भ्रातृ सहम :-

यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट मंगल में से वर्ष लग्नेश को तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर वर्ष लग्नेश से भौम को घटाकर लग्न जोड़ दें तथा भौम व लग्नेश के मध्य में लग्न न हो तब एक राशि युक्त करें। इस प्रकार सामर्थ्य सहम स्पष्ट होता है।

भ्रातृ सहम स्पष्ट करने के लिए दिन रात्रि चाहे किसी समय वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में शनि को घटाकर सैकता करने पर भ्रातृ सहम सिद्ध हो जाता है।

---

1. (क) पुण्यसद्म गुरुसद्मतस्त्यजेद्वथत्ययो निशि सितान्वितं च तत्।
सैकता तनुवदुक्तरीतितो मित्रनामसहमं विदुर्बुधाः॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ० ३, पृ० ११३)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ० ४, पृ० ३८६

2. (क) पुण्याद्भौमं शोधयेदुक्तवत्स्यान्माहात्म्यं तन्नक्तमस्मा द्विलोमम्।
शुक्रं मन्दादह्नि नक्तं विलोममाशाख्यं स्यादुक्तवच्छेषमूह्यम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ० ३, श्लो० ८)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ० ४, पृ० ३८७
(ग) वर्षफल विचार, डॉ० उमेश पुरी, पृ० १९०

उदाहरण :-

८ । २९ । ३५ । १३	[बृहस्पति स्पष्ट में से
− ८ । १४ । ३२ । ३६	मंगल स्पष्ट घटाया]
० । १५ । ०२ । ३७	
० । १८ । ०३ । ५४	[शेष में लग्न को जोड़ा]
०१ । ०३ । ०६ । ३१	१ राशि जोड़ने से
+ १ । ० । ० । ०	
०२ । ०३ । ०६ । ३१	सामर्थ्य सहम

उदाहरण भ्रातृ सहम :-

८ । २९ । ३५ । १३	[बृहस्पति में से शनि को
६ । ०६ । ४६ । ५४	घटाया]
शेष में २ । २२ । ४८ । १९	
लग्न जोड़ा ० । १८ । ०३ । ५४	
३ । १० । ५२ । १३	[सैकता करने के लिए
१ । ० । ० । ०	१ जोड़ा]
४ । १० । ५२ । १३	भ्रातृ सहम।[1]

गौरव और तात सहम :-

दिन में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट बृहस्पति में से स्पष्ट चन्द्र घटायें और सूर्य को जोड़ें तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट बृहस्पति में से स्पष्ट सूर्य घटाकर स्पष्ट चन्द्रमा का योग करें तथा क्रम से चन्द्र गुरु के मध्य सूर्य न हो या सूर्य-गुरु के मध्य चन्द्र न हो तो एक राशि युक्त करने पर "गौरव सहम" स्पष्ट होता है।

तात सहम साधन करने के लिए यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो शनि में से सूर्य को घटायें और रात में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य में से शनि को घटाकर लग्न को जोड़कर पूर्ववत् सैकता करने से तात सहम होता है। इसका दूसरा नाम पिता सहम भी है।

१. उदाहरण :-

८ । २९ । ३५ । १३	[बृहस्पति में से चन्द्रमा
५ । २२ । ०९ । ४७	को घटाया]
३ । ०७ । २५ । २६	[शेष में सूर्य स्पष्ट जोड़ा]
९ । ०७ । ३० । ०६	
० । १४ । ५५ । ३२	१ राशि जोड़ी
+ १ । ० । ० । ०	
= ०१ । १४ । ५५ । ३२	गौरव सहम स्पष्ट हुआ।

२. उदाहरण :-

६ । ०६ । ४७ । ५४	शनि स्पष्ट में से
९ । ०७ । ३० । ०६	सूर्य स्पष्ट को घटाया

1. (क) सामर्थ्यमारात्तनुपं विशोध्य नक्तं विलोमं तनुपे कजे तु।
जीवाद्विशुध्येत्सततं पुरावद् भ्राताऽर्कहीनाद् गुरुतः सदोह्यः॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ९)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७
(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९१

८ । २९ । १७ । ४८	शेष में
० । १८ । ०३ । ५४	स्पष्ट लग्न जोड़ा
९ । १७ । २१ । ४२	तात सहम स्पष्ट हुआ।[1]

माता, पुत्र और जीवित सहम :-

१. **माता सहम :-** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्र में से शुक्र को घटायें और रात में वर्ष प्रवेश हो तो शुक्र में से चन्द्र को घटाकर शेष में लग्न को जोड़ सैकता करने से माता सहम होता है।

२. **पुत्र सहम :-** गुरु में से चन्द्र को घटाकर शेष में लग्न को जोड़कर पूर्ववत् सैकता करने से पुत्र सहम होता है।

३. **जीवित सहम :-** दिन के वर्ष प्रवेश में शनि में से गुरु तथा रात्रि के वर्ष प्रवेश में गुरु में से शनि घटाकर लग्न जोड़ना चाहिए और यदि दोनों में लग्न राशि न हो तो एक राशि जोड़कर "जीवित सहम" स्पष्ट होता है।

१. उदाहरण :-	५ । २२ । ०९ । ४७	चन्द्र स्पष्ट में से शुक्र
	७ । २४ । ३१ । ४८	को घटाया
	९ । २७ । ३७ । ५९	शेष में लग्न जोड़ा
	० । १८ । ०३ । ५४	
	१० । १५ । ४१ । ५३	माता सहम स्पष्ट हुआ
२. उदाहरण :-	८ । २९ । ३५ । १३	गुरु में से चन्द्र स्पष्ट
	५ । २२ । ०९ । ४७	घटाया
	३ । ०७ । २५ । २६	शेष में लग्न स्पष्ट जोड़ा
	० । १८ । ०३ । ५४	और एक राशि भी जोड़ी
	३ । २५ । २९ । ०	
	अतः ४ । २५ । २९ । २०	पुत्र सहम हुआ।
३. उदाहरण :-	६ । ६ । ४७ । ५४	शनि में से बृहस्पति
	८ । २९ । ३५ । १३	घटाया
	९ । ०७ । १२ । ४१	शेष में लग्न स्पष्ट
	० । १८ । ०३ । ५४	जोड़ा
	९ । २५ । १६ । ३५	जीवित सहम।[2]

कर्म, रोग और मन्मथ सहम :-

१. दिन में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट मंगल में से बुध को घटायें और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो बुध

---

1. (क) दिने गुरोश्चन्द्रमपास्य नक्तं रविः क्रमादर्कविधू च देयौ।
रीत्योक्तया गौरवमर्कमार्केरपास्य वामं निशि राजतातौ॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १०)

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९१

2. (क) वर्षफल विचार, डॉ. उमेश पुरी, पृ॰ १९१

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

(ग) मातेन्दुतोपास्य सितं विलोमं नक्तं सुतोऽर्हनशमिन्दुमीज्यात्।
स्याज्जीविताख्यं गुरुर्माकतोऽह्नि वामं निशीदं सममम्बुयाऽम्बु॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ११)

में से मंगल घटायें यदि बुध और मंगल के मध्य लग्न न हो तो एक राशि जोड़ने पर "कर्म" सहम होता है।

२. **रोग सहम :–** लग्न में से चन्द्र को घटाकर शेष में लग्न को जोड़कर पूर्वोक्त सैकता करने से रोग सहम होता है।

३. **मन्मथ सहम :–** यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में लग्नेश को घटावें तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो लग्नेश में चन्द्रमा को घटाने और लग्न जोड़ने तथा सैकता करने से मन्मथ सहम होता है।

१. उदाहरण :–

८ । १४ । ३२ । ३६	मंगल में से बुध को घटाया
८ । १२ । १६ । ०८	
० । ०२ । १६ । २८	शेष में लग्न स्पष्ट को जोड़ा गया तथा एक राशि और जोड़ी
० । १८ । ०३ । ५४	
० । २० । २० । २२	
+ १ । ० । ० । ०	
१ । २० । २० । २२	कर्म सहम हुआ।

२. उदाहरण :–

० । १८ । ०३ । ५४	लग्न में से चन्द्रमा को घटाया तथा लग्न स्पष्ट को जोड़ा
५ । २२ । ०९ । ४७	
६ । २५ । ५४ । ०७	
० । १८ । ०३ । ५४	
रोग सहम = ७ । १३ । ५८ । ०१	

३. उदाहरण :–

५ । २२ । ०९ । ४७	चन्द्रमा में से लग्नेश मंगल को घटाया तथा शेष में लग्न जोड़ा गया
८ । १४ । ३२ । ३६	
९ । ०७ । ३७ । ११	
० । १८ । ०३ । ५४	
९ । २५ । ४१ । ०५	मन्मथ सहम हुआ।[1]

कलि, क्षमा और शास्त्र सहम :–

१. **कलि सहम :–** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में मंगल को और रात्रि वर्ष प्रवेश में मंगल में बृहस्पति को घटाने और लग्न को जोड़ने तथा सैकता करने पर कलि सहम और क्षमा सहम स्पष्ट होता है।

२. **शास्त्र सहम :–** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट बृहस्पति में से शनि घटायें और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो स्पष्ट शनि में स्पष्ट बृहस्पति घटाकर स्पष्ट बुध को युक्त कर दें। यदि बृहस्पति–शनि या शनि–गुरु के मध्य बुध राशि न हो तो एक राशि और जोड़ दें तो 'शास्त्र सहम' स्पष्ट होता है।

---

1. (क) कर्मज्ञमारान्निशि वाममुक्तं रोगाख्यमिन्दुं तनुतः सदैव।
स्यान्मन्मथो लग्नपमिन्दुतोऽहि वामं निशीन्दुं तनुपं सदाऽर्कात्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १२)

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९१

१. उदाहरण :-

	८ । २९ । ३५ । १३	गुरु स्पष्ट से मंगल स्पष्ट घटाया
	८ । १४ । ३२ । ३६	
	० । १५ । ०२ । ३७	शेष में लग्न स्पष्ट को जोड़कर एक राशि और जोड़ी
	० । १८ । ०३ । ५४	
	१ ।.०३ । ०६ । ३१	
	+ १ । ० । ० । ०	
	०२ । ०३ । ०६ । ३१	कलि सहम स्पष्ट हुआ

२. उदाहरण :-

	८ । २९ । ३५ । १३	बृहस्पति में शनि को घटाया
	६ । ६ । ४६ । ५४	
शेष	**२ । २२ । ४८ । १९**	शेष में स्पष्ट बुध को जोड़ा
	८ । १२ । १६ । ०८	
	११ । ०५ । ०४ । २७	
अतः	११ । ०५ । ०४ । २७	शास्त्र सहम स्पष्ट हुआ।[1]

बन्धु, बन्धक और मृत्यु सहम :-

१. दिन या रात्रि किसी भी समय वर्ष प्रवेश होने पर बुध में चन्द्रमा को घटा दें और लग्न जोड़कर सैकता करके बन्धु सहम स्पष्ट होता है।

२. दिन को वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में बुध और रात्रि को वर्ष प्रवेश हो तो बुध में चन्द्रमा को घटाकर लग्न जोड़ें तथा दोनों के मध्य लग्न न हो तो एक राशि जोड़ने पर "बन्धक सहम" बनता है।

३. दिन तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर अष्टम भाव में चन्द्रमा को घटा दें और शनि जोड़कर पूर्वोक्त रीति से सैकता कर दें तो "मृत्यु सहम" होता है।

१. उदाहरण :-

८ । १२ । १६ । ०८		बुध में चन्द्रमा को घटाया
५ । २२ । ०९ । ४७		
२ । २० । ०६ । २१	शेष	शेष में लग्न जोड़कर एक राशि जोड़ी
० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
०३ । ०८ । १० । १५		
+ ०१ । ० । ० । ०		
०४ । ०८ । १० । १५		बन्धु सहम स्पष्ट

२. उदाहरण :-

	५ । २२ । ०९ । ४७		चन्द्रमा में बुध को घटाया
	– ८ । १२ । १६ । ०८		
	९ । ०९ । ५३ । ३९	शेष	शेष में लग्न जोड़ा तथा सैकता करने पर
	+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
	९ । २७ । ५७ । ३३		
अतः	१० । २७ । ५७ । ३३		"बन्धक सहम" हुआ।

---

1. (क) कलिक्षमेस्तो गुरुतो विशुद्धे कुजे विलोमं निशि पूर्वरीत्या।
शास्त्रं दिने सौरिमपास्य जीवेद्वामं निशिज्ञस्य युतिः पुरावत्॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १३)

(ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९१

३. उदाहरण :-

७ । १३ । ४९ । ३०	अ॰	[अष्टम भाव में चन्द्रमा घटाया]
– ५ । २२ । ०९ । ४७		
१ । २१ । ३९ । ४३	शेष	[शेष में शनि को जोड़ा]
+ ६ । ०६ । ४६ । ५४	शनि	
०७ । २८ । २६ । ३७	मृत्यु सहम स्पष्ट हुआ।[1]	

देशान्तर और अर्थ सहम :-

१. **देशान्तर :-** दिन या रात्रि किसी भी समय वर्ष प्रवेश हो तो नवम भाव में नवम भाव के स्वामी को घटा दें और लग्न जोड़कर सैकता करने से "देशान्तर सहम" होता है।

२. **अर्थ सहम :-** दिवा और रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर धन भाव में धन भावेश को घटाकर लग्न को जोड़ें और पूर्वोक्त रीति से सैकता कर दें तो अर्थ सहम सिद्ध हो जाता है।

१. उदाहरण :-

८ । ९ । २६ । १८		[नवम भाव में नवम भाव के स्वामी गुरु को घटाया]
– ८ । २९ । ३५ । १३		
११ । ०९ । ५१ । ०५	शेष	[शेष में लग्न जोड़ा]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
११ । २७ । ५४ । ५९	देशान्तर सहम हुआ।	

२. उदाहरण :-

१ । १३ । ४९ । ३०	ध०	[धन भाव में धनेश शुक्र को घटाया]
– ७ । २४ । ३१ । ४८	शु॰	
०५ । १९ । १७ । ४२	शेष	[शेष में लग्न जोड़ा]
० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
६ । ०७ । २१ । ३६	अर्थ सहम हुआ।[2]	

प्रसव और सन्ताप सहम :-

१. **प्रसव सहम :-** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में बुध को घटावें और यदि रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो बुध में गुरु को घटाकर लग्न जोड़ें तथा दोनों के मध्य में लग्न राशि न हो तब एक राशि युक्त करने पर प्रसव (प्रसूति) सहम सिद्ध हो जाता है।

२. **सन्ताप सहम :-** दिन तथा रात्रि किसी भी समय वर्ष प्रवेश हो तो शनि में चन्द्रमा को घटावें और उसमें षष्ठ भाव को जोड़कर पूर्ववत् सैकता कर देने से "सन्ताप सहम" बनता है।

१. उदाहरण :-

८ । २९ । ३५ । १३		[बृहस्पति में से बुध को घटाया]
– ८ । १२ । १६ । ०८		
० । १७ । १९ । ०५	शेष	[शेष में लग्न को जोड़ा]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
१ । ०५ । २२ । ५९		
+ १ । ० । ० । ०		
०२ । ०५ । २२ । ५९	प्रसव सहम हुआ।	

---

1. (क) दिवानिशं ज्ञाच्छशिनं विशोध्य बन्ध्वाख्यमेतन्निशि बन्धकं स्यात्।
वामं दिवैतन्मृतिरष्टमक्षादिन्दुं विशोध्योक्तवर्दाकयोगात्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १४)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७
(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९२

2. (क) देशान्तराख्यं नवमाद्विशोध्य धर्मेश्वरं सन्ततमुक्तवत्स्यात्।
अर्हनशं वित्तपमर्थभावाद्विशोध्य पूर्वोक्तवदर्थसद्म्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १५)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ३८८

२. उदाहरण :-

६ । ६ । ४६ । ५४		[शनि में से चन्द्र को घटाया]
– ५ । २२ । ०९ । ४७		
० । १४ । ३७ । ०७	शेष	[शेष में षष्ट भाव को जोड़ा]
+ ५ । १३ । ४५ । १६		
५ । २८ । २२ । २३		[एक राशि और जोड़ी]
अतः ६ । २८ । २२ । २३		सन्ताप सहम स्पष्ट।[1]

श्रद्धा, प्रीति, बल और देह सहम :-

१. **श्रद्धा सहम :-** दिन या रात्रि किसी भी समय वर्ष प्रवेश हो तो शुक्र में मंगल को घटाकर लग्न जोड़ें और शुक्र-मंगल के मध्य लग्न न हो तो एक राशि और जोड़ने पर "श्रद्धा सहम" स्पष्ट होगा।

२. **प्रीति सहम :-** दिन या रात किसी भी समय वर्ष प्रवेश हो तो विद्या सहम में पुण्य सहम को घटाकर लग्न जोड़ें तथा विद्या-पुण्य सहम के मध्य लग्न न हो तब एक राशि युक्त करें "प्रीति सहम" बन जायेगा।

३. बल और देह सहम की स्पष्टता पूर्वोक्त यश सहम को समझें।

१. उदाहरण :-

७ । २४ । ३१ । ४८		[शुक्र में से मंगल को घटाया]
– ८ । १४ । ३२ । ३६		
११ । ०९ । ५९ । १२	शेष	[शेष में लग्न को जोड़ा सैकता करने पर]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
११ । २८ । ०३ । ०६		

० । २८ । ०३ । ०६ श्रद्धा सहम स्पष्ट।

२. उदाहरण :-

६ । ०४ । २२ । ४८		[विद्या में से पुण्य सहम को घटाय]
– ७ । १३ । २० । २८		
१० । २१ । ०२ । २०	शेष	[शेष में लग्न को जोड़ा तथा एक राशि और जोड़ी]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
११ । ०९ । ०६ । १४		
+ ०१ । ० । ० । ००		
०१ । ०९ । ०६ । १४		प्रीति सहम स्पष्ट।[2]

---

1. (क) गुरोबुधं प्रोज्झ्य भवेत्प्रसूतिर्वामं निशिन्दुं शनितो विशोध्य।
षष्ठं क्षिपेदुक्तदिशा सदैव सन्ताप सद्माऽरमपास्य शुक्रात्॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १८)

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९२

2. (क) श्रद्धा सदा प्रोक्तदिशाऽथ पुण्यं विद्याख्यतः प्रोज्झ्यसदापुरोक्त्या।
प्रीत्याख्यमुक्तं बलदेहसंज्ञे यशः समे जाड्यमपास्य भौमात्॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ १९)

(ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९२

जाड्य, व्यापार और पानीयपतन सहम :-

१. जाड्य सहम में दिन का वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में शनि को घटावें और बुध को जोड़ें तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो शनि में मंगल को घटावें और बुध को जोड़ दें। यदि मंगल-शनि या शनि-मंगल के मध्य में बुध न हो तो पुनः एक राशि युक्त करें तो "जाड्य सहम" बनता है।

२. **व्यापार सहम :-** दिन रात्रि किसी समय वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में बुध को घटाकर लग्न जोड़ने और सैकता करने से व्यापार सहम बनता है।

३. **पानीयपतन सहम :-** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो शनि में चन्द्रमा और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में शनि को घटाकर लग्न जोड़ें और पूर्ववत् सैकता करें तो "पानीयपतन सहम" बनता है।

१. उदाहरण :-

८ । १४ । ३२ । ३६		[मंगल में से शनि को घटाया]
– ६ । ०६ । ४६ । ५४		
२ । ०७ । ४५ । ४२	शेष	[शेष में बुध जोड़ा]
+ ८ । १२ । १६ । ०८		
१० । २० । ०१ । ५०	जाड्य सहम स्पष्ट	

२. उदाहरण :-

८ । १४ । ३२ । ३६		[मंगल में बुध को घटाया]
– ८ । १२ । १६ । ०८		
० । ०२ । २६ । २८	शेष	[शेष में लग्न जोड़कर एक राशि और जोड़ी]
० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
१ । २० । ३० । २२	व्यापार सहम स्पष्ट हुआ।	

३. उदाहरण :-

६ । ०६ । ४६ । ५४		[शनि में से चन्द्रमा को घटाया]
– ५ । २२ । ०९ । ४७		
० । १४ । ३७ । ०७	शेष	[शनि में से चन्द्रमा को घटाया]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	
२ । ०२ । ४१ । ०१	पानीयपतन सहम।[1]	

शत्रु और शौर्य सहम :-

१. **शत्रु सहम :-** दिन में वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में शनि को और रात्रि को वर्ष प्रवेश हो तो शनि में मंगल को घटावें और लग्न को जोड़ें और पूर्ववत् सैकता करें तो "शत्रु सहम" सिद्ध हो जाता है।

२. **शौर्य सहम :-** दिन के समय वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में मंगल को घटावें और रात्रि को वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में "पुण्य सहम" को घटाकर लग्न जोड़ें और पूर्ववत् सैकता करें तो "शौर्य सहम" स्पष्ट होता है।

१. उदाहरण :-

८ । १४ । ३२ । ३६		[मंगल में से शनि को घटाया]
– ६ । ०६ । ४६ । ५४		
२ । ०७ । ४५ । ४२	शेष	[शेष में लग्न को जोड़ा तथा एक राशि और जमा की]
+ ० । १८ । ०३ । ५४	लग्न	

1. (क) शनिं विलोमं निशि चान्द्रियोगाद्व्यापारमा राज्ञमपास्य शश्वत्।
पानीयपातः शशिनं विशोध्य सौरेर्वलोमं निशि पूर्ववत्स्यात्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ २०)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ १८७
(ग) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९२

```
  २ । २५ । ४९ । ३६
+ १ । ०० । ० । ०
  ३ । २५ । ४९ । ३६     शत्रु सहम हुआ।
```

२. उदाहरण :-

```
  ७ । १३ । २० । २८      [पुण्य सहम में से मंगल को घटाया]
- ८ । १४ । ३२ । ३६
 १० । २८ । ४७ । ५२   शेष   [शेष में लग्न जोड़कर एक राशि जमा की]
+ ० । १८ । ०३ । ५४   लग्न
 ११ । १६ । ५१ । ४६
+ १ । ० । ० । ०
  ० । १६ । ५१ । ४६   शौर्य सहम स्पष्ट।[1]
```

उपाय, दरिद्र और गुरुता सहम :-

१. **उपाय सहम :-** दिन को शनि में बृहस्पति और रात्रि को बृहस्पति में शनि घटाकर शेष में लग्न जोड़ दें।

२. **दरिद्र सहम :-** दिन को पुण्य सहम में बुध घटायें तथा रात्रि के वर्ष प्रवेश में बुध में पुण्य सहम को हीन करें और बुध स्पष्ट को जोड़ दें। पुण्य-बुध या बुध-पुण्य के मध्य बुध राशि न हो तो एक राशि युक्त करने पर "दरिद्र सहम" स्पष्ट होता है।

३. **गुरुता सहम :-** दिन को सूर्य के उच्च (० । १०) में सूर्य को घटावें और रात को चन्द्रमा के उच्च (१ । ०३) में चन्द्रमा को घटावें और पूर्वोक्त रीति से लग्न का योग और सैकता करें तो गुरुता सहम स्पष्ट होता है।

१. उदाहरण :-

```
  ६ । ०६ । ४६ । ५४     [शनि में से गुरु को घटाया]
  ८ । २९ । ३५ । १३
  ९ । ०७ । ११ । २१   शेष   [शेष में लग्न जोड़ा तथा एक राशि युक्त की]
+ ० । १८ । ०३ । ५४   लग्न
  ९ । २५ । १५ । १५
+ १ । ० । ० । ०
 १० । २५ । १५ । १५   उपाय सहम हुआ।
```

२. उदाहरण :-

```
  ७ । १३ । २० । २८     [पुण्य सहम में बुध को घटाया]
- ८ । १२ । १६ । ०८
 ११ । ०१ । ०४ । २०   शेष   [शेष में बुध को जमा किया]
+ ८ । १२ । १६ । ०८
  ७ । १३ । २० । २८   दरिद्र सहम हुआ।
```

३. उदाहरण :-

```
  ० । १० । ० । ०      [सूर्य उच्च में से सूर्य को घटाया]
- ९ । ०७ । ३० । ६
  ३ । ०२ । २९ । ५६   शेष   [शेष में लग्न को जोड़ा और एक राशि युक्त की]
+ ० । १८ । ०३ । ५४   लग्न
  ४ । २० । ३३ । ५०   गुरुता सहम स्पष्ट हुआ।
```

---

1. (क) मन्दं कुजात्प्रोज्झ्य रिर्पुवलोमं रात्रौ भवेद्भौमविहीनपुण्यात्।
शौर्यं विलोमं निशि पूर्ववत्स्यादपाय इज्यं शनितो विशोध्य॥

(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ २१)

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

जलपथ और बन्धन सहम :-

१. जलपथ सहम :- दिन में वर्ष प्रवेश हो तो कर्कार्ध (३ । १५) में शनि को घटाकर और रात्रि को वर्ष प्रवेश हो तो शनि में कर्कार्ध (३ । १५) को घटाकर लग्न का योग करें और सैकता करें तो "जलपथ सहम" होता है।

२. बन्धन सहम :- दिन में वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में शनि को और रात्रि को वर्ष प्रवेश हो तो शनि में पुण्य सहम को घटाकर लग्न का योग और पूर्ववत् सैकता करें तो "बन्धन सहम" स्पष्ट होता है।

१. उदाहरण :-

```
  ३ । १५ । ० । ०          [कर्कार्ध में से शनि को घटाया]
- ६ । ०६ । ४६ । ५४
------------------
  ९ । ०८ । १३ । ०६   शेष  [शेष में लग्न जोड़ा]
  ० । १८ । ०३ । ५४
------------------
  ९ । २६ । १७ । ००   जलपथ सहम हुआ।
```

२. उदाहरण :-

```
  ७ । १३ । २० । २८         [पुण्य सहम में से शनि
- ६ । ६ । ४६ । ५४           को घटाया]
------------------
  १ । ०६ । ३३ । ३४   शेष   [शेष + लग्न + १
  ० । १८ । ०३ । ५४   लग्न   सैकता करने पर]
  १ । २४ । ३७ । २८
+ १ । ० । ० । ०
------------------
  २ । २४ । ३७ । २८   बन्धन सहम स्पष्ट।[1]
```

सहमों की सबलता और निर्बलता :-

सहमों की सबलता और निर्बलता का निर्देश इस प्रकार समझें- यदि सहम राशि का स्वामी अपने उच्च, स्वगृह, स्वोच्च, अपने हद्दा और अपने नवांश में रहता हुआ लग्न को देखता हो तो वह बलवान् माना जायेगा।

यदि सहम राशि का स्वामी उच्च का, स्वराशि का होकर भी लग्न को नहीं देखता हो तो वह निर्बल कहा जाता है। जन्म समय सूर्य जिस राशि में बैठा हो उसका स्वामी तथा चन्द्रमा जिस राशि में बैठा हो उसका स्वामी इन ग्रहों के बलावल का विचार भी करें और जन्म मास की अमावस्य जिस लग्न में अन्त हो उस लग्न का स्वामी तथा जन्म मास की पूर्णमासी जिस लग्न में अन्त हो उस लग्न का स्वामी इन सब के बल का विचार पूर्वोक्त रीति से ही करना चाहिए। सहम का फल अपनी राशि के स्वामी की दशा में प्राप्त होता है।[2]

पुण्य सहम का शुभाशुभ फल :-

यदि वर्ष कुण्डली में पुण्य सहम बलवान हो और शुभग्रह तथा उस राशि के स्वामी उसके

1. (क) वामं निशि ज्ञं तु विशोध्य पुण्याज्ज्ञयुग्विलोमं निशि तद्दरिद्रम्।
सूर्योच्चतः सूर्यमपास्य नक्तं चन्द्रं तदुच्चाद् गुरुता पुरोक्त्या॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ २२)

(ख) वर्षफल विचार, डॉ॰ उमेश पुरी, पृ॰ १९३

2. (क) कर्कार्द्धतः प्रोज्झ्य शनिं स्याज्जलाध्वान्यथा निशि।
पुण्याच्छनिं विशोध्याऽहि वामं निशि तु बन्धनम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ २३)

(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३८७

साथ हों तथा देख रहे हों तो धार्मिक भावना जागृत हो और धन का आगम होता है। यदि पुण्य सहम निर्बल होकर पाप ग्रहों से युत या दृष्ट हो तो संचित धन और धर्म दोनों का नाश होता है।

पुण्य सहम वर्ष कुण्डली में यदि वर्ष लग्न से छठे, आठवें तथा बारहवें स्थान में हो तो धर्म, भाग्य, धन और यश की हानि होती है। यदि पुण्य सहम छठे, आठवें तथा बारहवें स्थान में स्थित हो और उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ रही हो तो सुख और धर्म आदि की प्राप्ति होती है।

जिस वर्ष में पुण्य सहम शुभ फल देने वाला होता है; उस वर्ष व्यक्ति को सभी प्रकार के सुख होते हैं। उसकी उन्नति सर्वतोमुखी होती है।[1]

विवाह सहम का शुभाशुभ फल :-

जिस मनुष्य के वर्ष काल में विवाह सहम अपने स्वामी से दृष्ट या युक्त हो अथवा शुभग्रहों से मुथशिल योग करता हो या किसी अन्य शुभ ग्रह से देखा जाता हो तथा उनसे युक्त हो या मुथशिल योग करता हो तो शुभदायक होता है अर्थात् विवाह कार्य भली-भाँति सम्पन्न हो जाता है। यदि शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त और दृष्ट हो या उनके साथ मुथशिल योग करता हो तो कठिनाई से कार्य सम्पन्न होता है। यदि विवाह सहम पाप ग्रह से युक्त और दृष्ट हो और वर्ष लग्न तथा अष्टम स्थान के अधिपति के साथ मुथशिल योग करता हो तो उस वर्ष विवाह नहीं होता है।[2]

कार्य सिद्धि सहम का शुभाशुभ फल :-

यदि कार्य सिद्धि सहम शुभ ग्रहों से युक्त और दृष्ट हो और शुभ ग्रहों के साथ इत्थशाल करता हो तो वह संग्राम में विजयदायक, शत्रुनाशक और उत्कर्षकारी होता है। यदि कार्य सिद्धि सहम शुभ ग्रह अथवा पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो बड़ी कठिनाई से विजय होती है। इसका विचार हर किसी कार्य में किया जाता है।[3]

यश सहम का शुभाशुभ फल :-

यदि यश सहम का स्वामी अष्टम स्थान में बैठा हो और वह किसी पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो बहुत समय का उर्पाजत यश नष्ट हो जाता है तथा पाप सम्बन्ध से बहुत समय का अर्जित अपयश बढ़ जाता है।[4] इस प्रकार यश सहम के स्वामी के अष्टम स्थान में स्थित रहने पर ही यदि वह अस्त हो जाए तो अपने वंश से चला आया पितृपितामहादिकों का जो यश उसे नाश करता है अर्थात्

---

1. (क) स्वोच्चादिसत्पदगतो यदि लग्नदर्शी, वीर्यान्वितः सहमपो यदि नेक्षतेऽङ्गम्।
नाऽसौ बली रविशशिश्रितमेशदर्शपूर्णान्तलग्नपबलस्य विचारणेत्थम्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ २६)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९०
2. (क) सबले पुण्यसहमे धर्मसिद्धिर्धनागमः। शुभस्वामीमीक्षितयुते व्यत्यये व्यत्ययं विदुः॥
लग्नात्षष्ठाष्टरिः फस्थं धर्मभाग्ययशोहरम्। शुभस्वामिदृशा प्रान्ते सुखधर्मादिसम्भवः॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ३१-३२)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९१
3. (क) विवाहसद्माधिपसौम्यदृष्टं युतं शुभैर्मूथशिलं शुभाप्तिम्।
कुर्याद्यदा मिश्रसमेतदृष्टं कष्टादथक्रूरमृतीश्वरैर्न॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ३९)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९१
4. (क) कार्यसिद्धिसहमं युतं शुभैर्दृष्टमूथशिलगं जयप्रदम्।
सङ्गरेऽथ शुभपापदृष्टियुक् क्लेशतो जय उदीरितोबुधैः॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ३७)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९१

कुल की कीर्त नष्ट हो जाती है।

यदि यश सहम के स्वामी के साथ किसी शुभ ग्रह का मुथशिल योग हो रहा हो, शुभ ग्रह की दृष्टि पड़ रही हो अथवा वह शुभ ग्रह से युक्त और बली हो तो यश की वृद्धि होती है, युद्ध में विजय प्राप्त हो और विविध प्रकार के वाहन तथा अस्त्र, शस्त्र अनायास प्राप्त हो जाते हैं। यदि यश सहम का स्वामी पापग्रह के साथ ईसराफ योग कर रहा हो तो संसार में अपयश बढ़ता और धन नष्ट होता है।[1]

रोग सहम का शुभाशुभ फल :-

यदि रोग सहम का स्वामी किसी पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो वह रोग उत्पन्न करता है और यदि लग्न से अष्टम भावेश के साथ इत्थशाल योग करता हो तो मृत्यु होती है। यदि रोग सहम का स्वामी निर्बल हो तो बड़े कष्ट से मृत्यु होती है।

यदि रोग सहम का स्वामी शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो और वह पूर्वोक्त रीति से बलवान् होकर छठे, आठवें तथा बारहवें स्थान में न बैठकर अन्यत्र विराजमान हो तो रोग नहीं होता। यदि रोग सहम के स्वामी को शुभ ग्रह तथा पापग्रह दोनों देख रहे हों या युक्त हों तो रोग का कुछ भय रहता है।[2]

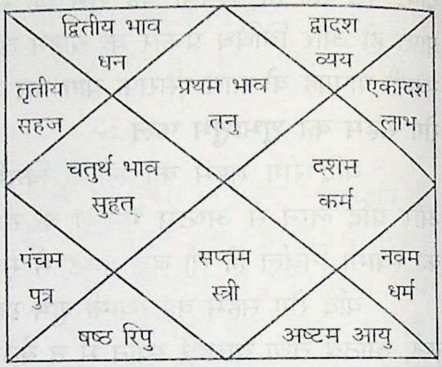
---

1. (क) यशोऽधिपे नैधनगे खलेन युतेक्षिने सद्यशसो विनाशः।
पार्पाजतस्यायशसोऽस्ति लाभो नष्टौजसि स्यात्कुलकीर्तनाशः॥
शुभेत्थशालेशुभदृग्युते वा बलान्विते स्याद्याशसोऽभिवृद्धिः।
युद्धे जयो वाहनशस्त्रलाभः पापेसराफायशोऽर्थनाशः॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ४०-४१)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९१
2. (क) मान्द्याधिपः पापयुतेक्षितश्च पापः स्वयं रोगकरो विचिन्त्यः
चेदित्थशालो मृतिपेन मृत्युस्तदा भवेद्धीनबलेऽतिकष्टात्॥
स्वस्वामिसौम्येक्षणभाजि मान्द्ये नाथे सवीर्येऽष्टषडन्त्यवर्जे।
रोगस्तदा नैव भवेद्विमिश्रयुतेक्षिते रुग्भयमस्ति किञ्चित्॥
(ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ३, श्लो॰ ४३, ४४)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १९१

पञ्चम अध्याय

वर्ष तन्त्र

वर्ष कुण्डली

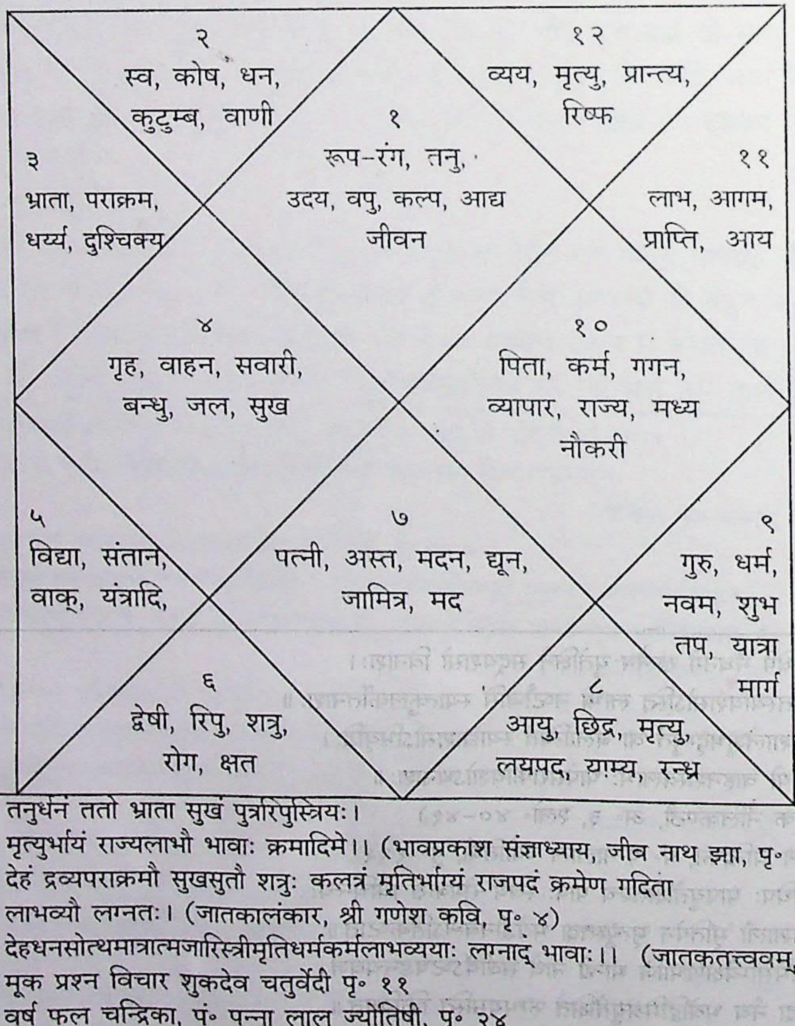


द्वादश भावों के नाम :-

वर्षकुण्डली एवं जन्म कुण्डली में द्वादश भावों की गणना की जाती है। ये क्रमशः इस प्रकार हैं :-

१.	तनु भाव	७. स्त्री भाव
२.	धन भाव	८. आयु भाव
३.	सहज भाव	९. धर्मभाव
४.	सुहृद भाव	१०.कर्म भाव
५.	पुत्रभाव	११. आय भाव
६.	रिपु भाव	१२. व्यय भाव

द्वादश भावों के पर्यायवाची नाम [1]



1. (क) तनुर्धनं ततो भ्राता सुखं पुत्ररिपुस्त्रियः।
मृत्युर्भाग्यं राज्यलाभौ भावाः क्रमादिमे।। (भावप्रकाश संज्ञाध्याय, जीव नाथ झा, पृ॰ २, श्लो॰ ७)
   (ख) देहं द्रव्यपराक्रमौ सुखसुतौ शत्रुः कलत्रं मृतिर्भाग्यं राजपदं क्रमेण गदिता लाभव्यौ लग्नतः। (जातकालंकार, श्री गणेश कवि, पृ॰ ४)
   (ग) देहधनसोत्थमात्रात्मजारिस्त्रीमृतिधर्मकर्मलाभव्ययाः लग्नाद् भावाः।। (जातकतत्त्वम्, पृ॰ १२)
   (घ) मूक प्रश्न विचार शुकदेव चतुर्वेदी पृ॰ ११
   (ङ) वर्ष फल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ २४
   (च) भृगु संहिता, सी॰ एम॰ श्री वास्तव, पृ॰ ३०

यह द्वादश भाव कुण्डली में इस प्रकार रखे जाते हैं :-

द्वादश भावों के पर्यायवाची नाम :-

प्रथम भाव — लग्न, मूर्त्त, अङ्ग, तनु, उदय, वपु, कल्प, आद्य ये प्रथम भाव के नाम हैं।

द्वितीय भाव — स्व, कोष, अर्थ, कुटुम्ब, धन ये द्वितीय भाव के नाम हैं।

तृतीय भाव — सहज, भ्राता, दुश्चिक्य, ये तृतीय भाव के नाम हैं।

चतुर्थ भाव — अम्वा, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद, वाहन, यान, बन्धु, अम्बु, नीर, जल, सुख ये चतुर्थ भाव के नाम हैं।

पंचम भाव — तनय, बुद्धि, विद्या, आत्मज, वाक्, पंचम, तनुज ये पंचम भाव की संज्ञायें हैं।

षष्ठ भाव — रिपु, द्वेषी, वैरी, क्षत, षष्ठ ये षष्ठ भाव के नाम हैं।

सप्तम भाव — जामित्र, अस्त, स्मर, मदन, मद, द्यून, काम ये सप्तम भाव के नाम हैं।

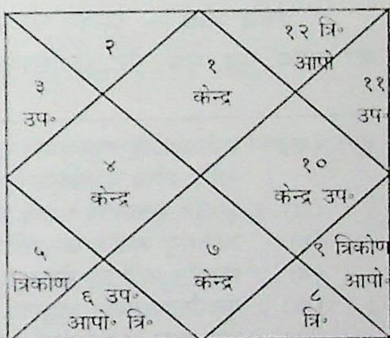
अष्टम भाव — रन्ध्र, आयु, छिद्र, याम्य, निधन, लयपद, अष्टम, मृत्यु ये अष्टम भाव के नाम हैं।

नवम भाव — गुरु, धर्म, नवम, शुभ, तप, मार्ग ये नवम भाव के नाम हैं।

दशम भाव — तात, आज्ञा, मान, कर्म, आस्पद, गगन, नभ, व्योम, मेषूरण, मध्य, व्यापार, दशम ये दशम भाव के नाम हैं।

एकादश भाव — आगम, प्राप्ति, आय ये नाम ग्यारहवें भाव के हैं।

द्वादश भाव — प्रान्त्य, अन्तिम, द्वादश, रिष्फ, ये बारहवें भाव के नाम हैं।



इस प्रकार सब भावों के पर्यायवाचक शब्दों के द्वारा भी भावों को ज्ञात करना चाहिए।[1]

भावों की केन्द्रादि संज्ञायें :-

ज्योतिष शास्त्र के विद्वानों ने जन्म अथवा वर्षकुण्डली के विभिन्न भावों के अलग-अलग नाम रखें हैं :-

१. केन्द्र — लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव केन्द्र कहलाते हैं।

२. त्रिकोण — पंचम तथा नवम भावों को त्रिकोण कहते हैं।

३. पणफर — द्वितीय, पंचम, अष्टम तथा एकादश भाव को पणफर कहते हैं।

४. आपोक्लिम — तृतीय, षष्ठ, नवम तथा द्वादश भाव को आपोक्लिम कहते हैं।

५. त्रिक — षष्ठ, अष्टम और द्वादश इन भावों को त्रिक कहते हैं।

६. उपचय — तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश इन भावों को उपचय तथा शेष भावों को अनुपचय कहते हैं।[2]

---

1. (क) लग्नं मूर्तस्तथाऽङ्गं तनुरूदयवपुः कल्पमाद्यं ततः स्वंकोशार्थाख्यं कुटुम्बं धनमथ सहजं भ्रातृदुश्चिक्यसंज्ञम्। अम्बापातालतुर्यहिबुकगृहसुहृद्वाहनं यानसज्ञं बन्ध्वाख्यं चाम्बु नीरं जलमथ तनयं बुद्धिविद्यात्मजाख्यम्। वाक्स्थानं पञ्चमं स्यात्तनुमथ रिपुद्वेषवैरिक्षताख्यं जामित्रमस्तं स्मर मदनमदद्यून कामाभिधानम्। रन्ध्रायुश्छिद्रयाम्यंनिधनलयपदं चाष्टमं मृत्युरन्यद्गुर्वाख्यंधर्मसंज्ञं नवमहि शुभं स्यात्तपोमार्गसंज्ञम्।। ताताज्ञामानकर्मास्पदगगननभो व्योमभेषूरणाख्यं मध्यं व्यापारमूचुर्दशममथ भवं चागमं प्राप्तिमायम्। इत्थं प्रान्त्यान्तिमाख्यं मुनय इह ततो द्वादशं रिष्फमाहुर्ग्राह्यं बुद्ध्या प्रवीणैर्यदधिकममुतः संज्ञया तस्य तच्च।।
(जातकालंकार॰ पृ॰ ४, ५, श्लो॰ ६, ७, ८) (ख) भाव प्रकाश, संज्ञाध्यायः पृ॰ ३

2. (क) आद्यं तुर्यं कलत्रं शममिह बुधैः केन्द्रमुक्तं त्रिकोणं पुत्रं धर्माख्यमुक्तं पणफरमुदितं मृत्युलाभात्म जार्थम्। धर्मं चापोक्लिमाख्यं व्ययरिपुसहजं कण्टकाख्यंहि केन्द्रं चैतच्चातुष्टयं स्यात्त्रिकमिह गदितं वैरि रिष्फान्काख्यम्।। (जातकालंकार, श्री गणेश पृ॰ ६, श्लो॰ ९)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ २४

भावों से विचारणीय बातें :-

प्रथम भाव — इसे तनु भाव के अतिरिक्त लग्न, केन्द्र, मूत उदय भी कहते हैं। इससे विचारणीय बातें निम्न हैं :-

वर्ष लग्न तथा प्रश्न लग्न से शरीर सम्बन्धी सभी बातों का विचार किया जाता है। जैसे - शरीर की कृशता-पृष्ठता, सुख, आयु अवस्था, जाति, आरोग्यता, शरीर के लक्षण, रंग, मासा आदि चिह्न अवस्था का प्रमाण, गुण, क्लेश, जाति आचरण, मस्तिष्क, यश, बल, आत्मा प्रारम्भिक जीवन, चरित्र, स्वभाव, इन सब बातों का लग्न से ही विचार करना चाहिए।[1]

द्वितीय भाव — "धनभाव" के अतिरिक्त इसे कोष, पणफर कुटुम्बादि भावों से भी पुकारा जाता है। इससे विचारणीय बातें - सोना, चाँदी, लोहा, शीशा, काँसा आदि धातु मैत्री का विचार, धन, वस्त्र, क्रय-विक्रय, कुटुम्ब, कोष आदि का विचार धन भाव से किया जाता है।[2]

तृतीय भाव — इसे सहज एवं पराक्रम, आपोक्लिम स्थान भी कहते हैं - इससे भाई-बहन, नौकर-चाकर, सहोदर, पराक्रम, मार्ग, पिता से सम्बन्ध रखने वाले कार्य, हानि, साहस, सेवाकर्म आदि का विचार करना चाहिए।[3]

चतुर्थ भाव — इसे सुख भाव के अतिरिक्त केन्द्र, कण्टक, पाताल, मातृ आदि भाव भी कहते हैं। इस भाव से पिता का धन, गड़ा हुआ धन, खेती-बाड़ी, घर, वाहन भूमि, बाग-बगीचा, सुख सम्पत्ति आदि का विचार चतुर्थ भाव से किया जाता है।[4]

पंचम भाव — इसको पणफर सुतभाव, तनयभाव भी कहते हैं। इससे गर्भ, विद्या, धनोपार्जन का उपाय, पुत्र, पुत्री, पेट, आस्तिकता, जठराग्नि एवं गर्भाशय आदि का विचार पंचम भाव से किया

---

1. (क) शरीरवर्णचिह्नायुर्वयोमानं सुखासुखम्।
   जातिः शीलं च मतिमाँल्लग्नात्सर्वं विचिन्तयेत्।। (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्र, पृ॰ ४१, श्लो॰ ४९)
   (ख) सुखानि दुखान्यपि साहसं च लग्ने विलोक्यं खलु सर्वमेतत्। (वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ २५)
   (ग) जातिरायुः सुखं दुःखमङ्गादिकं, वर्णविज्ञाननिद्रालयान्यङ्गत। (भावप्रकाश, पृ॰ ४६, श्लो॰ १)
   (घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ३, पृ॰ २३४
2. (क) सुवर्णरूप्यरत्नानि धातुद्रव्यं सखाधने। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२२, श्लो॰ ५२)
   (ख) मुक्ताफलं च माणिक्यं रत्न धातुधनाम्बरम्।
   हयकार्यध्वविज्ञानं वित्तस्थानाद्विलोकयेत्।। (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ६, पृ॰ २५६, श्लो॰ ३४)
   (ग) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ३, पृ॰ २३४
   (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल, पृ॰ २५
3. (क) भगिनीभ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि।
   कुवीत् वीक्षणं विद्वान् सम्यग्दुश्चिक्यवशमतः।। (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ ६, पृ॰ २४६)
   (ख) भ्रातृतो भ्रातृभृत्यादिकम्।। (भावप्रकाश, पृ॰ ४६, श्लो॰ १)
   (ग) किंकराभरणौषधदासकर्मसाहसक्षुद्दक्षिणकर्णोपजीकिंकाभ्रातृ-
   भगिनी कण्ठमूलादिहृद्विक्रमं सहजाच्चिन्त्यम्।। (जातकतत्त्व, डॉ॰ सुरेश चन्द्र मिश्र॰ पृ॰ १०२)
   (घ) भारतीय जयोतिषि नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ३, पृ॰
   (ङ) वर्षफल चन्द्रिका पं॰ पन्नालाल, पृ॰ २५
4. (क) गृहग्रामचतुष्पदमित्रक्षेत्रोद्योगबन्धुसुखासुखगमागमवाटिकाऽऽराम-
   महौषधिवृद्धिहृदयस्कन्धशयनविवरप्रदेशसिंहासनमातृभोज्यादिसुखाचिन्दयम्। (जातकतत्त्वम्, पृ॰ ११५)
   (ख) पितृवित्तं निधिः क्षेत्रं गृहं भूमिश्च तुर्यतः। (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्र, अ॰ १, श्लो॰ ५१)
   (ग) सुहृदःसुखमालये तुरीये निधिसंस्थानकृषिस्वमातृसौख्यम्।
   नववाहनवाटिकागमादेर्गृहलाभं च विचिन्तयेत्।। (भावप्रकाश, पृ॰ ४७, श्लो॰ २)
   (घ) सुहृद्गृहग्रामचतुष्पदो वा क्षेत्राद्यथालोकनायकं चतुर्थे।। (वर्षफलचन्द्रिका पं॰ पन्नालाल, पृ॰ २६)
   (ङ) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ २३५

जाता है।[1]

षष्ठ भाव — इसको रिपु, त्रिक, शत्रु, रोग आदि भाव कहते हैं। इस भाव से - शत्रु, घाव, मामा, शारीरिक व्याधि, गाय, भैंस आदि, भव, व्रण, नाभिस्थान, विश्वासघात, चोट आदि का विचार किया जाता है।[2]

सप्तम भाव — इसको स्त्री, जाया, कलत्र, केन्द्रभाव आदि नामों से भी पुकारते हैं। इस भाव से स्त्री सुख, रोजगार नष्टवस्तु तथा विस्मरण सम्बन्धी बातें, रास्ते में गायब हुई वस्तु का पता, लड़ाई-झगड़ा और यात्रा सम्बन्धी बातें सप्तम भाव से विचार करना चाहिए। सप्तम भाव में बैठा हुआ शुभ ग्रह या पापग्रह कोई भी हो अशुभ फल ही देता है।[3]

अष्टम भाव — रन्ध्र, मृत्यु, आयु पणफर आदि इसके नाम हैं। इस भाव से प्राचीन द्रव्य, मरे हुए प्राणी का धन, संग्राम, युद्ध, मृत्यु, गुप्त धन, शत्रु, दुर्गस्थान, नष्ट परिवार मानसी व्यथा, दुर्घटना, गुदा रोग, दुःख-बन्धन, वियोगादि का विचार अष्टम भाव से किया जाता है।[4]

नवम भाव — इस भाव को धर्म, भाग्य, पुण्य, त्रिकोणादि नामों से जाना जाता है- इससे धर्म, भक्ति, भावना, बावली, कुआँ, तालाब, तीर्थ यात्रा, विदेश यात्रा, देवमन्दिर, गौशाला, धर्मशाला, धार्मिक स्थल, आध्यात्मिक जीवन आदि विषयों का विचार नवें भाव से किया जाता है।[5]

दशम भाव - इसे व्यापार, मान, कर्म, व्योम, केन्द्र, पिता आदि नामों से जाना जाता है। इस भाव से

---

1. (क) गर्भापत्यविनेयानां मन्त्रसन्धानयोरपि।
   विद्याबुद्धिप्रबन्धानां सुतस्थाने विनिर्णयः।। (ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ २५७, श्लो॰ ३७)
   (ख) पुत्रमन्त्रवचनप्रवीणता, गद्यपद्यमतिवृद्धिमङ्गजात्। (भावप्रकाश, पृ॰ ४७, श्लो॰ ३)
   (ग) बुद्धिविद्यात्मजमन्त्रमन्त्रीविनयप्रबन्धगर्भस्थिति-
   नीतिपितृहृदयोदर शक्ति देवेभक्तिमातुलादि सुतभावाच्चित्यम्।। (जातक तत्त्व, डॉ॰ सुरेश चन्द्र मिश्र, पृ॰ १३४)
2. (क) मातुलादरिचतुष्पदव्रणव्रातभतिसमरादि चिन्तयेत्। भावप्रकाश, पृ॰ ४७, श्लो॰ ३
   (ख) रिपौ मातुलमान्द्यारिचतुष्पाद् बन्धभीर्व्रणान्। (ताजिक नीलकण्ठी संज्ञातन्त्र॰ अ॰ १, पृ॰ ४२)
   (ग) शत्रुक्षतचौर चिन्ताशङ्का क्रूरकर्म विघ्नक्लेशनाभ्युदर-
   मातुलरोगादि शत्रुस्थानाच्चिन्त्यम्।। (जातकतत्त्व डॉ॰ सुरेशचन्द्र मिश्र, पृ॰ १६६)
   (घ) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ३, पृ॰ २३५
3. (क) द्यूने कलत्रवाणिज्यनष्टविस्मृतिसङ्कथा।
   हताध्वकलिमार्गादि चिन्त्यं द्यूने ग्रहोऽशुभः।। (ताजिकनीलकण्ठी संज्ञातन्त्र पृ॰ ४२ श्लो॰ ५२)
   (ख) अङ्गनागमवणिक्क्रियाङ्गनायुद्धमन्मथकलाश्चसप्तमात्। (भावप्रकाश पृ॰ ४६ श्लो॰ ४)
   (ग) जायानष्टधनविवादोद्वाहव्यवहारगमागममल-
   मूत्राशयवणिक्क्रियासमरादि जायास्थानाच्चितन्त्यम्।। (डॉ॰ सुरेश चन्द्र मिश्र, पृ॰ १९१)
4. (क) मृत्योचिरन्तनं द्रव्यंमृतवित्तं रणो रिपुः।
   दुर्गस्थानं मृतिर्नष्टं परीवारो मनोव्यथा।। (ताजिक नीलकण्ठी संज्ञातन्त्र श्लो॰ ५३)
   (ख) रोगयुद्धमरणारिविहिनी, निम्नगातरणभीतिरष्टमात्।। (भावप्रकाश, पृ॰ ४७ श्लो॰ ४)
   (ग) आयुः शस्त्रधारणरोगसंकटछिद्रजावितगुह्यस्थाननद्युत्तारात्यन्तदुर्गादि आयुस्थानाच्चिन्त्यम्।। (जातकतत्त्व, पृ॰२१२)
5. (क) वापीकूपतडागादिप्रपादेवगृहाणि च।
   दीक्षां यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निश्चिन्त्य कीर्तयेत्।। (ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ २५७ श्लो॰ ४१)
   (ख) धर्मकार्य दैवोदयशीलसन्तोष यात्रा प्रयाणसच्छास्त्रश्रवणपितृ-
   वापीकूपप्रपातडागारामदेवगृहदीक्षामठधर्मशालागुरूस्वामि-
   पौत्रादितपोविद्योरूमातुलादि, नवमाच्चिन्त्यम्।। (जातकतत्त्व डॉ॰ सुरेश चन्द्र मिश्र, पृ॰ २३६)
   (ग) धर्मरतिस्तथा पन्था धर्मोपायं विचिन्तयेत्। (वर्ष पत्री दीपक, पृ॰ १२२)
   (घ) देवतालजलाशयादिकं, पुण्यतीर्थगमनं प्रपादिकम्।
   मार्गसङ्गमनभाग्यवर्धनं, धर्मकृत्यमपि धर्मतो वदेत्॥ (भाव प्रकाश, पृ॰ ४७, श्लो॰ ५)

राज्य, रुपया-पैसा, पुण्य, नौकरी, राज्यविस्तार, पैतृक सम्पत्ति का विचार, मान-सम्मान, पदवी (ओहदा) उद्योग धन्धा, विदेशगमन, आजीविकाकार्य, कार्यसम्पन्नता आदि का विचार दशम भाव से किया जाता है।[1]

एकादश भाव — इसको आय, पणफर लाभ, स्थान भी कहते हैं। इस भाव से धन (आमन्दन) से सम्बन्ध रखने वाली सभी बातें, अन्न का भाव, कन्या, मित्र, पशु, चौपाये, हाथी-घोड़े, राजा का द्रव्य, कुटुम्ब मित्र सुख, आभूषण, ऐश्वर्य की वस्तुएं और सुख का विचार एकादश भाव से करना चाहिए।[2]

द्वादश भाव — इसको रिष्फ, व्यय, त्रिक, अन्तिम, प्रान्त्य आदि नामों से जाना जाता है। इस भाव से शत्रु पर रूकावट, पीड़ा, प्रवास, व्यय-अपव्यय, हानि, खर्च दूसरे से कलह और सभी प्रकार के व्यय का विचार व्यय भाव से किया जाता है।[3]

भावफल के सामान्य नियम :-

जिस भाव का स्वामी अपने-अपने भाव में या शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो, उस भाव के फल की वृद्धि होतीहै। जैसे यदि वर्ष लग्न का स्वामी नवम भाव में बैठकर लग्न भाव को पंचम (मित्रदृष्टि) से देखता हो, तो उस वर्ष जातक के भाग्य में उन्नति एवं धन लाभ के अवसर प्राप्त होते हैं।

इसी भान्ति जो भाव पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, तो उस भाव के फल की हानि होती है। शुभ एवं पापी दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त अथवा शुभग्रह से युक्त व क्रूर ग्रह से दृष्ट हो तो मिश्रित फल अर्थात् शुभाशुभ दोनों प्रकार के फल होंगे।

इसके अतिरिक्त नीच राशि का एवं शत्रु के गृह में बैठा हुआ ग्रह, उस भाव के फल का नाश करता है। सम राशि में मध्यम फल करता है। मित्र राशिगत या स्वराशिगत अथवा त्रिकोण भाव में गया हुआ ग्रह उच्च राशिस्थ हो या मित्र ग्रह से दृष्ट हो, वह ग्रह उस भाव की अवश्य वृद्धि करता है।[4]

---

1. (क) राज्यं मुद्रां परं पुण्यं स्थानं तातं प्रयोजनम्
वृष्टयादिव्योम वृत्तान्तं व्योमस्थानान्निरीक्षयेत्॥ (ताजिक नीलकण्ठी, पृ॰ २५७, श्लो॰ ४२)
(ख) राज्यपद व्यापार मुद्रा नृपमानराज्य पितृमहत्पदाप्तिपुण्ययाज्ञा-
कीर्त वृष्टि प्रवृत्तिप्रवासकर्माजीवजानु पूर्त्यादिदशमाच्चिन्त्यम्॥ (जातक तत्त्व, पृ॰ २५०)
(ग) राज्यलाभ जनकाम्बुवर्षणं, क्षोणिपालकुलवित्तवर्धनम्
मुद्रिकाप्तिपदवीपदाप्तयः, कार्यसिद्धिरपि कर्मभावतः।। (भावप्रकाश पृ॰ ४८ श्लो॰ ६)
(घ) व्योम्नि मुद्रा परं पुण्यं राज्यवृद्धिं च पैतृकम्। (वर्षफल पत्री पृ॰ १२२ श्लो॰ ५७)
2. (क) आये सर्वार्थधान्यार्घकन्यामित्र चतुष्पदा।
राज्ञोवित्तं परीवारो लाभोपायांश्च भूरिशः।। (ताजिक नीलकण्ठी, संज्ञातन्त्र, पृ॰ ४३, श्लो॰ ५५)
(ख) सस्ययानलनानवाम्बर ज्ञान वाहन सुखानि लाभतः। (भावप्रकाश पृ॰ ४८ श्लो॰ ७)
(ग) गजाश्वहेमाम्बरान्दोलिकमंगलाभूषणादिसर्ववस्तुलाभवामश्रोतृजंघाशास्त्र
कन्यकाविद्वत्त्वविद्याप्तिज्येष्ठभ्रात्रादिलाभ स्थानाच्चिन्त्यम्।। (जातक तत्त्व, पृ॰ २७६)
3. (क) त्यागभोगविवादेषु दानेष्टकृषिकर्मसु।
व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वान्! व्ययं व्ययात्।। (ता॰ नी॰ पृ॰ २५८ श्लो॰ ४४)
(ख) व्यये वैरिनिरोधार्तव्ययादि परिचिन्तयेत्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२२ श्लो॰ ५८)
(ग) जातक तत्त्व, डॉ॰ सुरेश चन्द्र मिश्र, पृ॰ २८०
(घ) सद्व्ययादिकमभीष्टचिन्तनं, वैरिरोधनरयानमन्तिमात्। (भावप्रकाश पृ॰ ४८, श्लो॰ ७)
4. (क) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १११
(ख) यो भावः स्वामिसौम्याभ्यां दृष्टो युक्तोऽयमेधते।
पापदृष्टयुतो नाशो मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत्।। (ता॰ नी॰ अ॰ ५, पृ॰ १९३, श्लो॰ १)
(ग) लग्नादिभावा निजनाथयुक्तां दृष्टाश्च तेषां प्रवदन्ति वृद्धिन्।
सौन्यश्चतैः पापखगैर्वनाशं ह्येवं विमिश्राः फलमिश्रदाश्च।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२४)
(घ) यो भावः स्वस्वामिशुभैर्युक्तो दृष्टो वा तस्य वृद्धिः, पापैर्हानिर्मिश्रैर्मिश्रम्।
नीचारिस्थो ग्रहो भावनाशकः।। स्वसुहृतगस्थो भाववृद्धिकरः।। (जातकतत्त्व, पृ॰ ४८)

तनु भाव फल :-

तनु भाव पति पंचवर्गी बल से बलवान् हो तो शरीर सुख, आरोग्यता, द्रव्य (धन) का लाभ और विलासादि (आनन्द) सुख देता है। यदि लग्नेश मध्यम बली हो तो कम सुख और कम धन का लाभ होता है। और लग्नेश अल्प बली हो तो क्लेश अधिक हो और बराबर विपत्ति आती रहे।[1]

सूर्यादि ग्रहों के पंचाधिकारी होकर भी निर्बल होने का फल :-

जिस मनुष्य की वर्षकुण्डली में जन्म लग्नेश, वर्ष लग्नेश, मुन्थापति, त्रिराशिपति, दिन-रात्रि के पति इन पंच अधिकारियों में किसी अधिकार को प्राप्त होकर सूर्य नष्ट बली (अशुभ) हो तो वह मनुष्य सिर, नेत्र, त्वचा आदि रोगों से कष्ट भोगता हुआ नेत्र रोग से पीड़ित होता है और उत्साह से रहित होता हुआ माता-पिता से अनादर पाता है।

यदि पूर्वोक्त पंचाधिकारियों में से किसी अधिकार को प्राप्त चन्द्रमा नष्टबली हो तो उस प्राणी को नेत्र, वायु-कफ, बलगम एवं मानसिक चिन्ता के कारण कष्ट और वांछित कार्य नष्ट हों, और वह दरिद्र हो, सर्वत्र अनादर को प्राप्त हो और स्त्रियों से कलह करता रहे तथा आधि-व्याधि (मानसीव्यथा) से सदा भयभीत रहे।[2]

मंगल, बुध और बृहस्पति निर्बल होने का फल :-

वर्षकुण्डली में जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मन्थापति, त्रिराशिपति, दिन-रात्रि के पति इन पचंधिकारियों में से किसी अधिक को प्राप्त मंगल हीनबली हो तो शरीर में निर्बलता, रक्तविकार, अग्नि-भय, दुर्घटना, चोटादि का भय, मन सदा चलाय मान रहे और वह चोर आदि से भयभीत रहे। यदि उक्त अधिकारियों में से बुध नष्ट बली हो तो उस प्राणी को मोह और पराभव होता है। यदि उपरोक्त पंचाधिकारियों में बृहस्पति नष्टबली हो तो उस प्राणी के धर्म का क्षय, पाचनशक्ति में कमी, सन्तान कष्ट और वह कन्दमूल-फलादि खाकर बड़े कष्ट से जीवन व्यतीत करता है।[3]

शुक्र और शनि निर्बल होने का फल :-

यदि वर्षकुण्डली में जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मुन्थापति, त्रिराशिपति, दिन-रात्रि के पति इन पंचाधिकारियों में किसी अधिकार को प्राप्त होकर शुक्रग्रह बलहीन हो तो उस प्राणी के विलास-क्रीड़ा आदि और सौख्य का नाश हो, धातुक्षीणता, और सुख का नाश होता है। धन का नाश और स्त्रियों के साथ कलह होती रहती है।

यदि शनि ग्रह नष्ट बली हो तो नौकर से क्लेश बन्धुवर्ग से क्लेश और वातशूल आदि क्लिष्ट रोगविकार की पीड़ा बनी रहती है।[4]

---

1. (क) लग्नाधिपे वीर्ययुते सुखानि नैरूज्यमर्थागमनं विलासः।
   स्यान्मध्यवीर्येऽल्पसुखार्थलाभः क्लेशाधिकत्वं विपदल्पवीर्ये। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ २)
   (ख) तनुपतिर्बलमूर्त्तयुतः करोत्यसुखानि च कांतिनिवर्द्धनम्।
   भवति मध्यतले किलमध्यताऽधमबलेऽधममेव फलन्दिशेत्। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२५, श्लो॰ ६०)
2. (क) यन्माब्दाङ्गपतीन्थिहापतिसमानाथाद्यधीकारवान्-
   सूर्यो नष्टबलस्त्वगक्षिविलयं कुर्यान्निरूत्साहताम्।
   नीचत्वं पितृमातृतोऽप्यभिभवश्चन्द्रेऽक्षिकार्यक्षयो
   दारिद्रयं च पराभवो गृहकलिर्व्याध्याधिभीतिस्तदा।। (ता॰ नी॰, भावफलाध्याय - ५, पृ॰ १९४, श्लो॰ ३)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११३
3. (क) भौमे चलत्वं बुधे मोह पराभवौ।
   जीवे धर्मक्षयः कष्टफला जीवनवृत्तयः।। (ता॰ नी॰, श्लो॰ ४)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११४
4. (क) शुक्रे विलास सौख्यानां नाशः स्त्रीभिः समं कलिः।
   सौरे भृत्यजनाद् दुःखं रूजो वातप्रकोपतः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ १९५, श्लो॰ ५)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११४

बलिष्ट अधिकारियों के होते हुए फल :-

यदि जन्म लग्न का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी, आठवें स्थान का स्वामी और मुन्थहा का स्वामी ये बलिष्ठ होते हुए यदि त्रिक (षष्ठ, अष्टम, द्वादश) स्थान में स्थित नहीं हों तो उस प्राणी के लिए वह सम्पूर्ण वर्ष शुभ फल देने वाला होता है और उसे अतुल सौख्य, यश और धन मिलता है। तथा यदि जन्म लग्न आदि के स्वामी यदि बली होकर छठे, आठवें तथा बारहवें स्थान में स्थित हों तो दुःख, रोग, मरण, व्यय (खर्च) देते हैं। यदि चारों बलरहित छठें, आठवें तथा बारहवें स्थान में हो तो दुःख, कष्ट, मरण, चौरादि से भय देते हैं।

यदि वे चारों शुभग्रहों से न देखे जायें तो सम्पूर्ण वर्ष अशुभ फल देते हैं। यदि उक्त चारों को शुभ ग्रह देखतें हों तो शुभ फल ही होता है।[1]

धन हानि योग :-

वर्ष कुण्डली में जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश और मुन्थेश यदि वर्ष कुण्डली में निर्बल होकर अशुभ स्थानों पर आवें या जन्म काल में धन योग का एक ग्रह और धनेश ये दोनों वर्ष में नष्टबली हों तो उस पुरुष का धन नष्ट हो जाये और जिसके यहाँ धन रखने को दिया हो, वह बदल जायें कि हमारे पास तुम्हारा कुछ नहीं है अर्थात् धन नष्ट हो जाता है।[2]

द्वितीय भाव फल :-

जिनके जन्मसमय में बृहस्पति धनेश होकर वर्षलग्न से दूसरे स्थान में स्थित हो और लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करता हो तो उस प्राणी को वर्षभर धन की प्राप्ति होती है। यदि बृहस्पति लग्नेश को छोड़कर अन्य किसी पापग्रह के साथ ईसराफ योग करता हो तो वर्ष भर धन-धान्य की हानि होती है।[3]

धन लाभ योग :-

यदि जन्म काल का बृहस्पति दूसरे स्थान को देखता हो और वही वर्षेश होकर बलवान हो तो उस वर्ष में उस मनुष्य को अनायास धन प्राप्त होता है।

बृहस्पति जिस भाव का स्वामी हो वह यदि उसी वर्ष प्रवेश के समय उसी भाव में हो और लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करे तो वह उसी भाव से उत्पन्न सुख पाता है। जन्मकाल में बृहस्पति जिस भाव को देखता हो वही यदि वर्षेश हो तो वह उस भाव के सुख को प्राप्त होता है।[4]

---

1. (क) जन्माब्दाङ्गपरन्ध्रपाब्दमुथहानाथा बलाढयास्तदा रम्यं वर्षमुशन्ति सर्वमतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः।
षष्ठाष्टान्त्यगता न चेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदानिर्वीर्यायदि वर्षभेतदशुभं वाच्यं शुभेक्षां विना।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ ७)

(ख) केन्द्रत्रिकोणे तनुपः करोति प्रकृष्टसौख्य विजयाभिवृद्धिम।
षष्टेष्ठऽमेन्त्ये च विलग्ननाथः करोति रोगं मरणं व्ययं च।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२४)

2. (क) सूतौ धनप्रदः खेटो धनाधनीशश्च तौ यदि।
वर्षे नष्टो वित्तनाशोऽन्यनिःक्षेपापवाददौ।। (ता॰ नी॰ अ॰ ५, श्लो॰ ८)

(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११८

3. (क) वित्ताधियो जन्मनि वित्तगोऽब्दे जीवो यदा लग्नपतीत्वशाली।
तदाधनाप्तिः सकलेऽपि वर्षेक्रूरेसराफे धनधान्यहानिः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ १)

(ख) जन्मन्यब्दे वित्तभावं प्रपश्येद्वित्ताधीशो वर्षपश्चाधिवीर्यः।
द्रव्यप्राप्तिवीर्यहीनेऽथे तस्मिन्क्रूराक्रान्तेनैकधा वित्तनाशः।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२६, श्लो॰ ६२)

4. (क) जन्मन्यर्थावलोकीज्योऽब्देऽब्देशो बलवान् यदा। तदा धनाप्तिर्बहुला विनाऽऽयासेन जायते।।
एवं यद्भावपो जन्मन्यब्दे तद्भावगो गुरुः। लग्नेशेत्थशाली चेत्तद्भावजसुखं भवेत्।।
तथा जनुषि यं पश्येद् भावमब्देऽब्दपो गुरुः। तदा तद्भावजं सौख्यभुक्तं ताजिकवेदिभिः।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ २, ३, ४)

(ख) वित्तेवास्मिन्साधुखेटैः प्रदृष्टे संयुक्ते वासेव्यमानोनरः स्यात्। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२६)

अल्पधनप्राप्ति और राजदण्डयोग :-

यदि वर्षकुण्डली में बुध ग्रह षष्ठेश होकर वर्षलग्न से छठे भाव में स्थित हो तो वह थोड़ा धन पाता है।

बृहस्पति यदि पापग्रहों से पीड़ित होकर वर्षलग्न से आठवें अथवा धन भाव में स्थित हो तो उसको अवश्य राजदण्ड होता है तथा बृहस्पति यदि दूसरे सातवें स्थान में पापग्रह युक्त होवे तो प्रचण्ड राजदण्ड को प्राप्त करवाता है। और यदि धन (दूसरा) स्थान किसी शुभ करके दृष्ट युक्त हो अर्थात् शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रह धन स्थान में हो तो मनुष्य को शुभफल देने वाला होता है। अर्थात् धन आदि पदार्थों से युक्त करता है।[1]

अन्य धन प्राप्ति योग :-

यदि वर्षकुण्डली में बलान्वित बुध वर्षेश होकर धन स्थान में शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो, तो जातक को लिखने के काम से अथवा शास्त्रज्ञान और उद्यम (व्यवसाय) द्वारा धन लाभ होता है। यदि जन्म कुण्डली में जो शुभ ग्रह लग्न में हों, वही वर्ष कुण्डली में धन स्थान में हों तो धन लाभ देते हैं।[2]

जन्म कुण्डली में बृहस्पति जिस राशि का हो, वही राशि वर्षलग्न में आ जाए, अथवा वह राशि शुभ ग्रह अथवा स्वामी ग्रह से युक्त या दृष्ट हो, तो जातक वर्ष में निरोगता (स्वस्थता) भूमि का सुख और समुचित धन का सुख देता है।[3]

धनलाभ और नाश योग :-

यदि वर्ष कुण्डली में लग्नेश व धनेश ग्रहों का मित्र दृष्टि से मुथशिल (लग्नेश व कार्येश) का (इत्थशाल) योग हो, तो वर्ष में अचानक धन प्राप्ति के साधन बनें। यदि उक्त ग्रहों में परस्पर मुशरिफ (इसराफ) योग हो तो धन का नाश होता है और कुमार्ग से बर्ताव करने के कारण वह सदा भयभीत रहता अर्थात् धनहानि एवं शत्रुभय होता है।[4]

यदि किसी जातक की जन्म कुण्डली में सूर्य लग्न में तथा वर्षकुण्डली में दूसरे भाव में आ जाए, तो उस वर्ष जातक को धन प्राप्ति के पर्याप्त अवसर मिलते हैं। यदि धनभाव में शनि हो तो कार्य नष्ट करता है और थोड़ा लाभ देकर धन खर्च करा देता है।[5]

यदि धनभाव में स्थित शनैश्चर बृहस्पति से युक्त हो तो उसको अपने भाई बन्धुओं से सुख

---

1. (क) जन्मषष्ठाधिपः सौम्यः षष्ठोऽब्दे स्वल्पलाभदः
   पार्पादते गुरौ रन्ध्रेऽर्थे वा दण्डःपतेद्ध्रुवम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ ५)
   (ख) रन्ध्रेवित्तेदेवतानाममात्ये पापैर्युक्ते राजदण्डः प्रचण्डः।
   वित्तेवास्मिन्साधुखेटैः प्रदृष्टे संयुक्ते वासेव्यमानोनरः स्यात्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १२६, श्लो॰ ६३)
2. (क) एवं बुधे सवीर्ये स्याल्लिपिज्ञानोद्यमैर्धनम्।
   जन्मलग्नगताः सौम्या वर्षेऽर्थे धनलाभदाः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ १९८ श्लो॰ ८)
   (ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११७
3. (क) जन्मनीज्योऽस्ति यद्राशौ स राशिर्वर्षलग्नगः।
   शुभस्वामीक्षितयुतो नैरूज्यस्वाम्यवित्तदः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ १९९, श्लो॰ १२)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११७
4. (क) मित्रदृष्टया मुथशिलेऽर्थाङ्गयोः सुखतो धनम्।
   तयोर्मूसरिफे वित्तनाशदुर्नयभीतयः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ १९८, श्लो॰ ११)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११७
5. (क) सुतौ लग्ने रविर्वर्षे धनस्थो धनसौख्यदः।
   शनौ वित्ते कार्यनाशो लाभोऽपोऽथ धनव्ययः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ १३)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११७

होता है। यदि धनलाभ कारक ग्रह पापग्रहों से युक्त व दृष्ट हों तो सम्पूर्ण फल नष्ट हो जाता है। अर्थात् धन की हानि होती है।[1]

भ्रातृ सुख योग :-

यदि वर्ष कुण्डली में तृतीयेश पाँच अधिकारों में से किसी अधिकार में हो तथा तीसरे भाव में बैठा हो और उसके साथ वर्षेश तथा लग्नेश इनमें से किसी के साथ इत्थशाल योग हो तो उसके भाईयों को सुख मिले।[2]

कहने का अभिप्राय है कि स्वयं भी उस व्यक्ति को भाई-बन्धुओं से अतुलसुख प्राप्त होता है। तृतीयेश तृतीय स्थान में वर्षलग्नेश से युक्त होकर स्थित होने से भी भाईयों से पूर्ण सुख प्राप्त होता है।

भ्रातृ दुःख कारक योग :-

यदि जातक की वर्ष कुण्डली में तीसरा भाव पापग्रहों से युक्त हो उस प्राणी के भाईयों को दुःख होता है। यदि भ्रातृ सहम पापग्रहों से युक्त हो और उसको उसका स्वामी तथा तीसरे भाव का स्वामी ये दोनों न देखते हों तो भी भाईयों को कष्ट होता है। यदि भ्रातृ सहमेश व पराक्रमेश दोनों अस्तङ्गत होकर दुष्ट (६, ८, १२) स्थान में बैठे हों तो उसके भाईयों की हानि होती है।

अगर तृतीयेश से सातवें भाव में वर्षेश अथवा लग्न स्वामी तीसरे घर के स्वामी से सातवें भाव में बैठा हो तो उसका भाईयों के साथ युद्ध (लड़ाई) होता है। यदि तीसरे घर का स्वामी पापग्रह युक्त हो तो भी पूर्वोक्त फल होता है।

यदि तृतीय स्थान का स्वामी सहज भाव में स्थित हो और उसको शुभग्रह देखते हों तो भाईयों को सब तरह से सन्तोष होता है।[3]

चतुर्थ भाव फल :-

यदि वर्षकुण्डली में वर्ष प्रवेश के समय सूर्य पापग्रहों से युक्त व दृष्ट होकर चौथे भाव में हो तो उसके पिता को कष्ट होता है। यदि चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त व दृष्ट होकर चौथे भाव में स्थित हो तो केवल माता को पीड़ा (कष्ट) होती है। यदि सूर्य-चन्द्र दोनों पापयुक्त व पापदृष्ट होकर चतुर्थ स्थान में विद्यमान हों तो माता-पिता दोनों को दुःख होता है। यदि जन्मसमय में सूर्य के साथ शनि भी विराजमान हो तो उसका अपमान होता है और वह मनुष्य पिता के साथ वैर और कलह करता है।

जिस राशि में चन्द्रमा हो और उसी राशि में शनैश्चर भी विद्यमान हो तो उसका माता के साथ वैर और कल्ह हो। यदि चौथे स्थान का स्वामी चतुर्थ घर में बैठा हो तो उस प्राणी के माता-पिता को

---

1. (क) भ्रातृसौख्यं गुरुयुते भूतयः स्युः शुभेक्षणात्।
   क्रूरयोगेक्षणात्सर्वं विपरितं फलं भवेत्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰, १४)
   (ख) वर्षफलचन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ११७
2. (क) सहजे सहजाधीशेऽधिकारिणि समापतेः।
   लग्नपो वा मुथशिले मिथः सौख्यं सहोत्थयोः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ ४, पृ॰ २०१)
   (ख) सहोत्थभावे सहजाधिराजे वर्षाधिराजेन विराजमाने।
   विलग्नराजेन च संयुतेन सुखं सहोत्थैरतुलम्प्रकल्प्यम्।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२७, श्लो॰ ६४)
3. (क) पापान्विते तु सहजे सहमेशभावनाथेक्षणेन रहिते सहजस्य दुःखम्
   एवं सहोत्थसहमेऽपि वदेत्तदीशौदग्धौ यदा सहजनाशकरौ विचिन्त्यौ।।
   तृतीयपादब्दपतौ द्युनस्थे लग्नेश्वरे वा सहजैर्ववादः।
   तृतीयपो जन्मनि तादृगब्दे शुभेक्षितस्तत्र सहोत्थतुष्ट्यै।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०२, श्लो ८, ९)
   (ख) स्वामी नाच सहजेश्वरेण वा नेजितेच सहजे खलैर्युते।
   भ्रातृवर्ग परिदुःखितो नरःक्रूरयुक्त सहजेश्वरेपि वा।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२७ श्लो॰ ६५)

सुख प्राप्त होता है। यदि चतुर्थ स्थान का स्वामी उत्तम बली होकर लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करता हो तो वह माता-पिता को सुखदायक होता है।[1]

जिस मनुष्य के जन्मकाल का सुखेश नष्टबली हो तो उसके माता-पिता को दुःख होता है। यदि मातृ-पितृ सहम भी पापग्रहों से पीड़ित होकर चौथे स्थान में स्थित हो तो उसके माता-पिता का नाश होता है। यदि मातृ-पितृ ये दोनों सहम नष्ट अथवा अस्तादि दोषों से युक्त हों तो भी माता-पिता को कष्ट होता है। यदि चौथे या चतुर्थेश के साथ शनि और मंगल हों और वे शुभ ग्रहों से युक्त व दृष्ट न हों तो वे उसके माता-पिता को कष्ट देते हैं। यदि शनि और मंगल सुखेश के साथ हों और उन्हें शुभग्रह देखते हों तो माता-पिता को कष्ट होता है।[2]

पंचम भाव फल :-

वर्षकुण्डली में यदि बृहस्पति वर्षेश होकर पाँचवें व ग्याहरवें स्थान में हों अथवा सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र इनमें से कोई भी वर्षेश होता हुआ पाँचवे तथा ग्यारहवें भाव में हो तो वह पुत्रों को सुखकारी होता है। यदि बृहस्पति, सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र ये पाँचों ग्रह पापग्रहों से पीड़ित हों तो पुत्रों को दुःख देते हैं।

बृहस्पति जिस राशि में हो वह राशि यदि बलिष्ठ हो और गुरु, पाँचवें घर में हो तो पुत्रों को सुख देता है। वर्ष में मंगल तथा बुध इनमें से कोई भी ग्रह वर्षेश होता हुआ पाँचवें भाव में हो तो पुत्रदायक होता है। जन्म समय में बृहस्पति जिस स्थान में हो, वही स्थान यदि वर्षलग्न में हो तो पुत्र प्राप्त होता है। इस तरह बुध-शुक्र के स्थान से भी पुत्र प्राप्त हो। जन्म समय में शनि तथा मंगल जिस राशि में बैठे हों वह राशि वर्ष प्रवेश समय में व पञ्चम भाव में हो तो निश्चय करके पुत्रों की प्राप्ति हो।[3]

---

1. (क) तुर्ये रविन्दू पितृमातृपीडा पापान्वितौ पापनिरीक्षितौ च।
जन्मस्थसूर्यर्क्षगतेऽर्कपुत्रेऽवमाननावैरकली च पित्रा।।
चन्द्रे जननयैवमुशन्ति बन्धौ सुखाधिपे प्राप्तिसुखानिपित्रोः।
तुर्याधिपे लग्नपतीत्थशाले वीर्यान्विते सौख्यमुशन्ति पित्रोः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०३, श्लो॰ १, २)

(ख) स चन्द्रसूर्ये सति तुर्यभावे पापेक्षिते दुःखमुशन्ति पित्रा।
भानोस्तथेन्दोर्भवनेर्कसूनुः पित्रा च मात्रा क्रमशो विवादम्।।
यद्राशिगो जन्मनियामिनोशस्तत्स्थशनिश्चेद्भयदो जनन्याः।
सुखतुषारांशुसितौ सपापौ स्याताम्महाक्लेशकरौ च पित्रोः।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२८ श्लो॰ ६७)

2. (क) सौख्याधिपो जनुषि नष्टबलोऽब्दसूत्योः पित्रोरनिष्टकृदथो सहमे तयोस्तु।
दग्धे तुरीयगृहगे च यदीन्थिहायां नाशस्तयोः सहमयोरपिदग्धयोः स्यात्।।
जन्मन्यम्बुगृहं यच्च तत्पतिस्तत्पदोपगौ।
शन्यारौ क्लेशदौ पित्रोर्न चेत्सौम्यनिरीक्षितौ।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०३, श्लो॰ ३-४)

3. (क) पुत्रायगो वर्षपतिर्गुरूश्चेत्सूर्यारसौम्योशनसोऽथवेत्थम्।
सत्पुत्रसौख्याय खलार्दितास्ते दुःखप्रदाः पुत्रत एव चिन्त्याः।।
जीवो जन्मनि यद्राशावब्देऽसौ सुतगो बली।
पुत्रसौख्याय भौमो ज्ञो वर्षेशोऽत्र सुताप्तिदः।।
यत्रेज्यो जनुषि गृहे विलग्नमेतत्पुत्राप्त्यै बुधसितयोरपीत्थमूह्यम्।
यद्राशो जनुषि शनिः कुजश्च सौऽब्दे पुत्राप्तिं तनुसुतगः करोति नूनम्।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०५, श्लो॰ १, ३, ४)

(ख) बृहस्पतो वर्षपतौ सुतस्थे लाभेऽथवा वीर्ययुते सुतेभ्यः।
सौख्यं कुजे वा रविजेम्बुवाप्येवं विलोमात्फलमामनन्ति।।
यस्मिन राशौ गोष्पतिर्जन्म काले वर्षेराशिस्सोपि चेत्पञ्चमस्थः।
धात्रीपुत्रे तत्र संस्थे बुधे वा वर्षाधीशे चापि पुत्रोद्भवः स्यात्।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२९ श्लो॰ ६८-६९)

यदि पुण्यसहम शुभग्रहों की दृष्टि से युक्त होकर पंचम भाव में हो तो पुत्र की प्राप्ति हो। यदि लग्नेश और पंचमेश बली होकर पंचमभाव में स्थित हों तो भी पुत्रदायक होते हैं। यदि चन्द्रमा, गुरु अथवा शुक्र अपने से उच्च राशि में प्राप्त होकर पञ्चम भाव में स्थित हों तो पुत्र देते हैं। यदि वक्री मंगल सुतभाव में हो तो पुत्र का नाश करता है। पंचम भाव का स्वामी शुक्र यदि पंचम भाव में बैठा हो तो वर्षलग्न के साथ इत्थशाल योग करे तो पुत्र देंता है। यदि शनि का स्थान पाँचवाँ हो और पंचाधिकारियों में स्थित कोई पापग्रह देखता हो तो पुत्रों को पीड़ा कष्ट होवे।[1]

षष्ठभाव फल :-

यदि वक्री शनि वर्षेश होकर पापग्रहों से युक्त होता हुआ छठे स्थान में बैठा हो तो जातक सन्निपात से उत्पन्न मरण समान क्लेश, शूल, पीड़ा, उदररोग, नेत्र रोग, विषमज्वर ये रोगे होते हैं। यदि वर्षेश बृहस्पति वक्री ग्रह व पापग्रहों से पीड़ित होता हुआ छठें भाव में बैठा हो और बृहस्पति चन्द्रमा के साथ कम्बूल योग न करता हो तो उसको वातविकार से उत्पन्न रोग होते हैं और उसे पाण्डु (कमला) रोग भी होता है।

यदि मंगल वर्षेश होकर पापग्रहों से पीड़ित वक्री होता हुआ छठे घर में बैठा हो तो रुधिरविकार से उत्पन्न रोग होता है। यदि सूर्य वर्ष का स्वामी होकर पापग्रहों से पीड़ित होकर छठे भाव में हो तो पित्त रोग होता है। यदि उक्त रूप से बाहरवें स्थान में सूर्य बैठा हो तो नेत्रों में पीड़ा हो। यदि शुक्र वर्षेश होकर पापग्रहों से पीड़ित होता हुआ छठें भाव में स्थित हो और उसको षष्ठेश देखता हो अथवा शुक्र छठे भाव में बैठा हो तो कफ सम्बन्धी रोग होते हैं। यदि वर्ष का स्वामी बुध पापग्रहयुक्त छठे स्थान में पड़े तो वात रोग होता है। यदि जन्मकालीन लग्नेश पापग्रह होकर वर्तमान वर्षेश से क्षुतदृष्टि से देखा जाता हो तो वह रोग दायक होता है। यदि वही पापग्रह होकर पापग्रहों से युक्त हो और उसको वर्षेश क्षुतदृष्टि से देखता हो तो वह मृत्युकारक होता है।[2]

---

1. (क) पुत्रे पुण्यस्य सहमं पुत्राप्त्यै शुभदृष्टियुक्। लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे पुत्रदौ बलिनौ यदि।।
चन्द्रो जीवोऽथ वा शुक्रः स्वोच्चगः सुतदः सुते। वक्री भौमः सुतस्थश्चेदुत्पन्नसुतनाशनः।।
पुत्राधियो जन्मनि भार्गवोऽब्दे पुत्रे विलग्नाधिपतीत्यशाली।
सुत्ताधियो मन्दपदस्थपुत्रे पापधिकारीक्षित आत्मजार्तः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०५, श्लो॰ ५, ६, ७)
(ख) पुत्रक्षेत्राधीश्वरे पुत्रसंस्थे वीर्योपेते पुत्र सौख्यं बहुस्यात्।
क्रूराक्रान्तेऽस्तंगते वा सुतानां पीड़ा गाढां प्रौढविद्यावदन्ति।।
येद्राशिगो जनमनि भानुसुनुस्सएवराशिर्यदि पंचस्थः।
चिन्तासुतानां विषमे सुतस्थे महीसुते व्यस्तगते सुर्तातः।।(वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १२९ श्लो॰ ७०-७१)
2. (क) विलोमगामी यदि मन्दगामी स्वामी सवर्षेकुरूतेऽत्रदोषम्। शत्रुस्थितेस्मिन्नुधिरज्वर्रातशशूलोद्भवश्चापि विचिन्तनीयः।।
एवं सुरेज्ये च कुजेर्कजेर्केवाततिपित्ताक्षिगदैः प्रपीडा। शुक्रेब्ययेमृत्युसमानरोगः श्लेष्मातिबाधाबहुधारिपुस्थे।।
वर्षाधिराजेशशिजे रिपुस्थे पार्पदतेवातगदप्रकोपः।
तथैवचन्द्रेरिपुरंध्रसंस्थेश्लेष्मप्रकोपोमरणेनतुल्यः।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३०, श्लो॰ ७२-७३-७४)
(ख) मन्देऽब्दपेऽनृजुगतौ पतिते रूर्गातःस्यात्सन्निपातभवभीररिगेऽत्रशूलम्।
गुल्माक्षिरोगविशमज्वरभीर्गुरौ तु पार्पादतेऽनिलरूजोऽपिकबूलशून्ये।।
स्यात्कामलाख्यरूगपीत्थमसृज्यसृग्भीः पित्तं च रिःफगरवौदृशिशूलरोगः।
पित्तं पुना रिपुगृहेऽत्र भृगौ नृभेऽरौ श्लेष्मा भवेक्षितयुतेऽपि कफोऽरिगेन्दौ।।
एवं बुधे पापयुतेऽब्दपेऽरौ बातोत्थरोगोजनिलग्ननाथः।
पापोऽब्दपेन क्षुतदृष्टिदृष्टो रोगप्रदो मृत्यु करः सपापः।।
सूर्त्याकभे लग्नगते रूक्षशीतोष्णरूभयम्।
शनीक्षिते याप्यता स्यात्सपापे मृत्युमादिशेत्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०७, श्लो॰ १, २, ३, ४)

मंगल जन्म के समय जिस राशि में बैठा हो, वह राशि यदि वर्ष प्रवेश समय में वर्ष लग्न हो और उसको मंगल शत्रु (१/४ / ७/१०) दृष्टि से देखता हो तो उस मनुष्य को रक्त विकार, वित्तदोष से उत्पन्न रोग, अग्निभय तथा अन्य बहुत से रोग होते हैं। यदि उस लग्नराशि को शुभग्रह देखते हों तो उसके शरीर में अल्प रोग होते हैं।[1]

यदि वर्ष प्रवेश के समय पापयुक्त बृहस्पति वर्षलग्न में आठवें स्थान में हो और मंगल वर्षलग्न में हो तो उसको अपस्मार रोग से मूर्च्छा हो। चन्द्रयुक्त मंगल यदि लग्न में हो और पापग्रह युक्त गुरु आठवें हो तो उसको अंग रोग हो। जन्मसमय में यदि पापग्रह केन्द्र में हो और वर्ष प्रवेश के समय वे ही पापग्रह लग्न में हो तो भी रोग करते हैं। यदि शुक्र को पुरुष राशि में विद्यमान पापग्रह देखते हों तो कफजनित रोग उत्पन्न होते हैं।

यदि वर्ष प्रवेश लग्न के चौथे और सातवें स्थान में मुन्थहा बैठी हो और शनि उसे क्रूर दृष्टि से देखता हो तो शूल रोग हो।

यदि जन्मकाल का बृहस्पति तथा शुक्र की राशि में मंगल सूर्य के नवांशों में हो तो शरीर में छोटी-छोटी फुन्सियाँ व शीतला आदि रोग और जूड़ीबुखार, गंड आदि रोगे होते हैं। जन्म के समय जिस राशि में गुरु वा शुक्र हों उसी राशि में चन्द्रमा के सहित बुध हो तो उसको कुष्ठ, भगन्दर तथा गण्डमाला आदि रोग होते हैं।[2]

सप्तम भाव फल :-

वर्षकुण्डली में यदि बली शुक्र वर्षेश होकर सातवें भाव में विद्यमान हो तो उसको स्त्री पक्ष से सुख मिलता है। यदि शुक्र को गुरु देखे तो वह उस मनुष्य को अत्यंत ही स्त्रीसुख दे। यदि पंचधिकारियों में से किसी अधिकार में स्थित मंगल शुक्र को देखता हो तो उस मनुष्य की भार्या और उसमें परस्पर बहुत प्रीति होती है।

यदि वही शुक्र वर्षेश होकर सातवें भाव में हो और उसको बुध देखे तो उस प्राणी की थोड़ी अवस्थावली स्त्री के साथ यारी (सम्बन्ध) होती है। यदि शुक्र को गुरु देखे तो उसका नवविवाहिता अपनी स्त्री के साथ प्रेम होता है और उससे अतिशीघ्र बालक होता है।[3]

जन्मकाल का स्वामी बली होकर यदि वर्ष लग्न से सातवें भाव में स्थित हो तो उसको स्त्री से

---

1. (क) एवं भौमे क्षुतदृशा रक्तपित्तरूजोऽग्निभीः।
ततोऽन्ये बहुला रोगाः शुभदृष्टौ रूगल्पता।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २०७, श्लो॰ ५)
(ख) भूनन्दनोजन्मनिभानुजोवा राशौस्थितौयत्रसएव राशिः।
वर्षेतनुस्यश्शनिना प्रदृष्टः शीतोष्णयक्ष्मान्वितपित्त बाधा।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १३१ श्लो॰ ७५)

2. (क) सपापे गुरौ रन्ध्रगे लग्न आरे सतन्द्राऽस्तिमूर्च्छाऽङ्गनाशः सचन्द्रे।
खलाः सूतिकेन्द्रेऽब्दलग्ने रूगाप्त्यै कफो द्वर्यघ्रिगैरीक्ष्यमार्णासिते स्यात्।।
चतुर्थेऽस्ते च मुथहा क्षुतदृष्टया शनीक्षिता। शूलपीडा पापखगैः दृष्टा तत्परिणामजा।।
जन्मस्थजीवसितराशिगतेमहीजेसूर्यांशुगे पिटकशीतलिकादिमान्द्यम्।
शीतोष्णगण्डभवरूक्मबुधे च सेन्दौ कुष्ठं भगन्दररूजोऽपि सगण्डमालाः।। (ता॰नी॰,अ॰ ५, श्लो॰ ७, ११, १२)
(ख) बृहस्पतौ पापयुतेऽष्टमस्थे साब्जेकुजेलग्नगतेसमूर्च्छा। तन्द्राभवेद्वाऽथकलत्रसंस्थे सिंहीसुतेऽनन्तगदंवदन्ति।।
योदुष्टखेटोजनिकण्टकस्थो वर्षेविलग्नेसवनो शुभाय। मुन्था कलत्रे चर सातलेच करोतिशूलंशनिंदृष्टदेहा।।
सुरासुरेज्यास्पदगेमहीजेचास्तंगतेशीतलताक्षिरोगः।
बुधेन्दुयुक्तेसतिकंठगण्डंस्फोटादिवाधा बहुधावबोध्या।। (वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १३१, श्लो॰ ७६, ७७, ७८)

3. (क) बली सितोऽब्दाधिपतिः स्मरस्थः स्त्रीपक्षतः सौख्यकरोविचिन्त्यः।
ईज्येक्षितोऽत्यन्तसुखं कुजेनाऽधिकारिणा प्रीतिकरो मिथः स्यात्।।
बुधेक्षिते जारता स्याल्लध्व्या मन्देन वृद्धया। गुरुदृष्टया नवा भार्या सन्ततिस्त्वरितं ततः।।(ता॰नी॰ ५/१-२)
(ख) विशेषतोजीवदशाधिकारीक्ष्माजेक्षणात्प्रीतिरलम्मिथः स्यात्।।
वर्षाऽधिराजेभृगुजेमनोज्ञे जायाविलासादिसुखानिनूनम्। बालाविलासान्बुधदृग्यतिभ्यां जारंजरत्याशनियोगदृग्भ्यां। वागीशयोगेनलसद्विभूषां नवीनयोषांलभतेमनुष्यः।।
(वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १३३, श्लो॰ ७९, ८०)

सुख मिलता है, जन्म के समय शुक्र जिस राशि में हो, वह राशि यदि वर्षप्रवेश की लग्न से सातवें हो और शुक्र वर्षेश हो तो स्त्री का लाभ होता है और यदि सातवें भाव में सूर्य और मंगल के साथ मुन्थहा विद्यमान हो तो उसको स्त्री तथा पुत्रों से कष्ट होता है। यदि पापग्रह मुन्थहा को देखते हों तो स्त्री व पुत्रों से विशेष कष्ट होता है।[1]

अष्टम भाव फल :-

वर्षकुण्डली में मंगल वर्षेश होता हुआ यदि क्रूर ग्रहों से पीड़ित व निर्बल होकर किसी भाव में स्थित हो तो उसके अंग में लोहे का घाव लगता है। मंगल अग्नितत्त्व की राशि में हो तो अग्निभय हो और द्विपद राशि में स्थित हो तो उग्र स्वभाव (चौरादिदुष्ट) वालों से मृत्यु होती है।

यदि वर्षेश मंगल निर्बल तथा पीड़ित होकर दशम स्थान में हो तो राजा, राजा के मन्त्री, शत्रु और चोरों से भय हो। और ऐसा ही मंगल यदि चतुर्थ भाव में बैठा हो तो उसको माता, पिता, चाचा, मामा और गुरु इन से भय हो। यदि वर्षलग्नेश, मुन्थेश और वर्षेश ये तीनों आठवें भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल योग करते हों तो वे मृत्युकारक होते हैं। यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो और सूर्य-मंगल साथ हों तो राजभय होता है। यदि सूर्य सहित शनि मंगल के साथ वर्ष लग्न से आठवें भाव में हो तो सवारी से पतन हो।[2]

जिस राशि में मंगल हो उस रशि पर यदि अधिकार युक्त चन्द्रमा बैठा हो तो गुप्त राजभय और रोग होता है। शनैश्चर यदि अधिकार में प्राप्त होकर दशमभाव में विराजमान हो तो लोह के प्रहार से कष्ट (पीड़ा) होता है।

यदि वर्षलग्न से आठवें भाव में मंगल हो तो अग्नि, हथियार और राजा से भय होता है। वर्ष लग्न से दशम भाव में यदि मंगल हो तो वह किसी चौपाये घोड़ा आदि से गिरकर दुःख को प्राप्त हो और रक्त विकार (रुधिर सम्बन्धी) रोग होते हैं।[3]

नवम भाव फल :-

वर्षकुण्डली में यदि मंगल वर्षेश होता हुआ बलवान हो और वर्षलग्न से तीसरे अथवा नवें भाव

---

1. (क) जन्मलग्नाधिपेऽस्तस्थे दारसौख्यं बलान्विते। जन्मशुक्रर्क्षमस्तेऽब्दे स्त्रीलाभाय सितेऽब्दपे।।
इन्थिहाकरियुग्द्यूने क्रूरिते सहमे स्त्रियाः।
स्त्रीपुत्रेभ्यो भवेत्कष्टं पापादृष्ट्या विशेषतः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २११, श्लो॰ ३, ८)
(ख) प्रसूतिलग्नाधिपतिर्बलीयान्वर्षेकलत्रेचकलत्रसौख्यम्। लग्नेविलग्नेभृगुजेविवाहो वीर्यान्वितेवाऽस्तपतेतदीये।।
भूनन्दनश्चेद्भृगुनन्दनस्यस्थानंगतोस्तेमुथहाखलोवा।
खलस्यदृष्टौहिकलत्रचिन्ताभवेन्नितान्तं हिसुतादिकानाम्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३३, श्लो॰ ८१, ८३)
2. (क) भौमेऽब्दपे क्रूरहतेऽयसा घातो बलोज्झिते। अग्निभीरग्निभे क्रूरनराद द्विपदभे मृतिः।।
वियत्यवनिपामात्यरिपुतेस्करजं भयम्। तुर्ये मातुः पितृव्याद्वा मातुलात्पितृतो गुरोः।।
लग्नेन्थिहापतिसमापतयो मृतीशाश्चेदित्थशालिन इमे निधनप्रदास्युः।
चेत्पाकरिष्टसमयेमृतिरेव तत्र सार्के कुजे नृपभयंदिवसेऽब्वेशे।।
सार्के शनौ भौमयुते खाष्टस्थे वाहनाद्भयम्। सार्के भौमेऽष्टमस्थे तु पतनं वाहनाद् भवेत्।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २१३, श्लो॰ १, २, ३, १६)
(ख) भौमेसमास्वमिनिहीनवीर्ये कुर्याद्विघातंशशिभेऽग्निभीतिम्। नृयुग्मगेचौरनरेन्द्रबाधा भौमेऽष्टमे चन्द्रयुतेप्यरिष्टम्।।
कुजहिमांशुजयुक्तदिवाकरो मृतिगोविषयान्तरे। रविसुतेदशमोपगतेतथा ज्वलतोऽनलतोऽपिभयंभवेत्।।
(वर्षपत्रीदीपक पृ॰ १३४, श्लो॰ ८४, ८५)
3. (क) भौमस्थानेऽधिकारीन्दौ गुप्तं नृपभयं रूजः। मन्दोऽधिकारी खे लोहहतेः पीड़ाकरः स्मृतः।।
भौमेऽष्टमे भयं वह्नेः प्रहारो वा नृपाद् भयम्।
आरे खस्थे चतुष्पाद्भ्यः पातो दुःखं रूजोऽसृजा।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २१४, श्लो॰ ५, ६)
(ख) रवियुतेकुसुतेदशमस्थिते भवति वाहनतः पतनंविधौ।
कुजपदेनृपतोऽसुखमर्कजे बलयुतेम्बरगेभयमस्रतः।। वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३४, श्लो॰ ८६

में हो तो उस मनुष्य को मार्ग (सफर) चलने से लाभ हो और चिरस्थायी कार्य होता है। यदि वर्षेश सूर्य कम्बूल योग करता हुआ वर्षलग्न से तीसरे व नवें घर में हो तो यात्रा में सुखदायक होता है। यदि सूर्य किसी स्वग्रहादि अधिकार में न हो तो किसी अन्य पुरुष द्वारा यात्रा होती है।[1]

यदि शुक्र वर्षेश होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे या नवम स्थान में हो तो यात्रा करने से मार्ग में सुख होता है। यदि यात्रा समय शुक्र वक्री हो अथवा सूर्य सा निध्यवश अस्त हो जाये तो उसका गमन (यात्रा) ठीक नहीं होता। यदि वर्षेश बुध पापरहित बलवान होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे या नवें भाव में स्थित हो तो तीर्थ वा देवता सम्बन्धी देवदर्शन के उद्देश्य से यात्रा होती है। यदि देवगुरु बृहस्पति वर्षेश होकर वर्षलग्न से तीसरे या नवें स्थान में स्थित हो तो भी यात्रा हो और गुरू वर्षेश होकर पाप पीड़ित वा पापयुक्त हो तो कुयात्रा होती है। वर्ष लग्नेश के साथ नवम भाव के स्वामी का परस्पर इत्थशाल योग हो तो अकस्मात गमन होवे अर्थात् जहाँ का स्मरण नहीं वहाँ की यात्रा होती है।[2]

दशम भाव फल :–

वर्ष कुण्डली में यदि वर्षेश बली होकर दशम भाव में हो तो राज्य, धन, सुख, कीर्त और आनन्द वृद्धि होती है। अन्यग्रह केन्द्र (१, ४, ७, १०) में बैठे हों तो घर की प्राप्ति और गृह सुख मिलता है और यदि सूर्य बली होकर चतुर्थ स्थान में हो तो राजा से मान, यश और मित्रता होती है। यदि जन्म समय में सूर्य स्थित राशि लग्न में हो और मुन्थहा दशम भाव में बैठी हो तो उस समय मनुष्य को राज्य सुख प्राप्त होता है।

यदि सूर्य नीचराशि (तुला) में पापग्रहों से युक्त होकर दशमस्थान में स्थित हो तो राजा की आज्ञा से उस मनुष्य का बन्धन और बध होता है। यदि वर्ष में पाँचवी लग्न सिंह राशि हो और उसमें सूर्य ग्रह बलवान होकर स्थित हो तो मनुष्य को राज्यपदवी प्राप्त होती है। अर्थात् उच्च पद का लाभ और राजा का आश्रय मिलता है। यदि जन्मसमय में बलवान चन्द्रमा स्थित हो तो अन्य स्थान में अधिकार प्राप्त होता है।[3]

---

1. (क) भौमेऽब्दपे त्रिनवगे क्रूरायुक्ते बलान्विते। गुणावहस्तदा मार्गश्चिरं कार्यं स्थिरं ततः।।
त्रिधर्मस्थोऽब्दपः सूर्यः कम्बूली मार्ग सौख्यदः।
अन्यप्रेषणयानं स्यात्स चेन्नाधिकृतो भवेत्। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २१७, श्लो॰ १, २)
(ख) वर्षस्वामी भूमिपश्चाथसौम्यो धर्मेसंस्थोवातृतीये बलीयान्। भागी देवाभीष्टसिद्धिश्चलंयत्कार्यंस्तब्धंबुद्धिमर्द्भिवचार्यम्।।
राज्येऽनुजेवाऽवनिजेऽब्दराजे सत्खचरैर्युक्तनिरीक्षमाणे।
गुणः प्रयाणेष्टपतौप्रयुक्ते धर्मत्रिगेऽर्के गमनोद्गस्स्यात्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३६, श्लो॰ ८९, ९०)

2. (क) शुक्रेऽब्दपे त्रिनवगे मार्गे सौख्यं विलोमगे। अस्ते वा कुगतिः सौम्ये देवयात्रा तथा विधे।।
क्रूरादते कुयानं स्याद् गुरावेवं विचिन्तयेत्।
इत्थशाले लग्नधर्मपत्योर्यात्रास्त्यचिन्तिता।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २१८, श्लो॰ ३, ४)
(ख) वीर्योपेतेपुण्यगेविक्रमेवा वर्षाधीशेभार्गवेमार्गसौख्यम्।
सौन्येप्येवं तीर्थयानेऽभिमानो वीर्येन्यूनेदृष्टयानन्निरूक्तम्।।
तनुपनवम योगेस्यादकस्मात्प्रयाणं सुकृतकृतनिवासेवाक्पतौ दूर यात्रा। (वर्षपत्रीदीपक, श्लो॰ ९१, ९२)

3. (क) सबलेऽब्दपतौ खस्थे राज्यार्थ सुखकीर्तयः। स्थानान्तराप्तिरन्यस्मिन्केन्द्रे गृहसुखाप्तयः।।
इत्थं बली रविर्भूस्थः पूर्वाजतपदाप्तिकृत। एकादशेऽस्मिन्सख्यं स्यान्नृपामात्यगणोत्तमैः।।
रविस्थानेन्थिहा लग्ने खे वा राज्याप्ति सौख्यदा। नीचेऽर्कः पापसंयुक्तो भूपाद् बन्धवधं दिशेत्।।
सिंहे रविबली खस्थः स्थानलाभो नृपाश्रयः।
स्थानान्तराधिकाराप्तिरिन्दुरारपदे बली।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २२०, श्लो॰ १, २, ३, ४)
(ख) वर्षेशेदशमस्थितेबलयुते राज्याप्तिहर्षोदयः तस्माच्चापरकेन्द्रगे शुभयुतेस्थानांतराप्तिर्नृणाम्।
सूर्भेतुर्यगतेतुवीर्यसहिते पूर्वाधिकारागमः कामंलाभगतेऽथवाभवपते स्सञ्जायतेगौरवम्।।
सिंहेप्रसूतौ समुदारसारोदिवाकरोराज्यकरोनराणाम्।
नीचस्थितः पापयुतः खयातः पृथ्वीपतेर्बन्धनमातनाति।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३८ श्लो॰ ९४, ९५)

लाभ भाव फल :-

वर्षकुण्डली में यदि लग्नेश और लाभेश इन दोनों का परस्पर इत्थशाल योग हो तो उस मनुष्य को लाभ हो और अपने जनों में मान मिलता है और यदि सब ग्रह बलवान होकर लाभ स्थान में हो तो द्रव्य की प्राप्ति होती है।

यदि सबग्रह निर्बल होकर लाभस्थान में विद्यमान हों तो धन की प्राप्ति नहीं होती।

वर्ष कुण्डली में यदि वर्ष लग्नेश एकादश भाव में हो और एकादशेश लग्न भाव में हो अथवा दोनों केन्द्र-त्रिकोण भाव या एकादश भाव में शुभ ग्रह युक्त या दृष्ट हों तो वर्ष में तरक्की व धन लाभ होता है।[1]

व्यय भाव फल :-

वर्ष कुण्डली में लग्नेश तथा वर्षेश बलहीन छठे, आठवें, बारहवें स्थान में चतुष्पदादि जैसी राशि में हो उसके अनुसार फल देते हैं, यदि चतुष्पद राशि षष्ठ, अष्टम, द्वादश स्थानों में हो तो चौपायों (गाय, बकरी, घोड़ा आदि) का नाश हो। यह इस भाव का सामान्य विचार है और विशेष शुक्र बल रहित छठे स्थान में पापग्रहों की क्रूर १, ४, ७, १० दृष्टि दृष्ट से युक्त द्विपद राशि (मनुष्य राशि) में हो तो सेवकों की हानि होवे तथा ऐसा ही शुक्र चतुष्पद राशि में हो तो गाय, हाथी, घोड़े आदि चौपायों की हानि करता है, ऐसे ही वर्षेश अष्टम, द्वादश स्थानगत होने का फल विचार किया जाता है और वर्षेश मंगल, चन्द्रमा सहित दशम स्थान में हो तो घोड़े आदि का नाश करता है तथा मन में व्याकुलता भी करता है तथा पाप पीड़ित मंगल षष्ठ स्थान में होने से भी ऐसा ही फल होता है।[2]

वर्षेश का फल :-

वर्ष का स्वामी यदि षष्ठ, अष्टम और द्वादश स्थान को छोड़कर किसी अन्य स्थान में स्थित हो अर्थात् ६ । ८ । १२ में न हो तथा जन्म समय और वर्ष समय उदय हो अस्त न हो पूर्णबली हो, तो सम्पूर्ण उत्तम फल देता है अर्थात् शारीरिक आरोग्य, राज्यलाभ तथा अत्यधिक सुख प्रदान करता है। यदि गणितागत रीति के अनुसार वर्षेश पूर्ण बली हो तो समस्त वर्ष सुख, धनप्राप्ति, यशलाभ देता है। यदि वर्षेश मध्यबली हो तो मध्यम फल देता है। यदि हीनबली हो तो दुःख, रोग, भय आदि विविध प्रकार की विपत्तियाँ उत्पन्न करता है।[3]

---

1. (क) लग्नायेशेत्थशाले स्याल्लाभः स्वजनगौरवम्।
सर्वेऽपि लाभे वित्ताप्त्यै सबला निर्बला न तु।। (ता॰ नी॰, अ॰ ५, पृ॰ २२२, श्लो॰ ४)
(ख) खलैंवहीना बलिनश्शुभाख्या लाभालयेलाभकराभवन्ति।
हानिस्सपापास्तगलाभनाथे दंडस्तथाचित्रशिखण्डिसूनौ।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १३९ श्लो॰ ९६)
(ग) वर्षफलचन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ १२५

2. (क) लग्नाब्दपौ हतबलौ व्ययषण्मृतिस्थो यद्राशिगौ तदनुसारि फलं विचिन्त्यम्।
षष्ठऽब्दपे भृगुसतेऽथ विनष्टवीर्ये दृष्टे खलैः क्षुतदृशा द्वियदर्क्षसंस्थे।।
भृत्यक्षतिस्तुरगहा चतुरंघ्रिभस्थेऽन्यस्मिन्नपीदमुदितं फलमब्दनाथे।
खस्थे कुजे शशियुते तुरगादिनाशः स्याद्वयाकुलत्वमशुभोपहते व्यये वा।।(ता॰ नी॰, अ॰ ५,श्लो॰ १, २)
(ख) मनुष्यराशौव्ययभावसंस्थे वर्षाधिराजेभृगुजेक्षिनस्यात्।
भृत्याश्रितानां चतुष्पदस्थे चतुष्पदानां विबलेविशेषात्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १४० श्लो॰ ९९)

3. (क) अब्दाधिपो व्ययषडष्टमभिन्नसंस्थो लब्धोदयोऽब्दजनुषोः सदृशोबलेन।
निःशेषमुत्तमफलं विदधाति काये नैरूज्यराज्य बललब्धिरतीव सौख्यम्।।
बलपूर्णेऽब्दे पूर्णं शुभं मध्ये च मध्यमम्। अधमे दुःखशोकारिभयानि विविधाः शुचः।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ५, श्लो॰ १३,१४)
(ख) वर्षेशो निधनव्ययारिसदने यातोऽथवा पापकैः खेटैस्संयुतवीक्षितो न शुभदोऽरिष्टं च कष्टं दिशेत्।
केन्द्रे चेन्गृहसौख्यदः सहि भवेदन्यत्र चेदन्यथा, सौख्यं सौख्यमतीव भूमिपतिना लाभादि कुर्यादयम्।।
(वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ ९४, श्लो॰ ६)

वर्षेश सूर्य का फल :-

पूर्ण बली सूर्य वर्षेश हो तो प्रतिष्ठा, लाभ, राज्य, पुत्र, धन, कुल-परिवार, यश, कींत, गृहसुख, भूमिलाभ होता है और मान-सम्मान की वृद्धि होती है। उसके सभी शत्रु अनायास नष्ट हो जाते हैं। किन्तु यह फल तभी घटता है तब सूर्य जन्मकाल में भी बलवान हो; जो ग्रह जन्मसमय में निर्बल होता है उसका फल मध्यम मिलता है। यदि सूर्य मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो मध्यम फल मिलता है; पुत्र से, राजा से, मित्र से, मनुष्यों को थोड़ा सुख मिलता है। दरिद्रता बरोग भय, लोगों से विवाद तथा राजा से भय बना रहता है। यदि वर्षस्वामी सूर्य हीन बली हो तो विदेश यात्रा, धन का नाश, शोक, शत्रुभय, आलस्य, लोकापवाद, भय, कोई बड़ा रोग, अत्यन्त दुःख, पिता आदि से निराशा और पुत्र तथा मित्र से भय बना रहता है।[1]

वर्षेश चन्द्रमा का फल :-

वर्षेश चन्द्रमा पूर्णबली हो तो धन, स्त्री, पुत्र, गृह-विलाससिता की सामग्री, नाना प्रकार के वैभव और उच्च पद आदि की प्राप्ति होती है। चन्द्रमा के प्रभाव से व्यक्ति सुखी, माला, सुगन्धित चन्दन, इत्र, मोती, वस्त्र तथा परमैश्वर्यवान् होकर कुल के उचित पद को प्राप्त होता हुआ राजाओं का मित्र बनता है। यदि चन्द्रमा मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो अपने पुत्र व मित्र से शत्रुता, अपने स्थान से भ्रष्ट होकर दूसरे स्थान को प्राप्त होता हुआ, स्वास्थ हानि, रोग, पीड़ा प्राप्त होती है। पापग्रह के साथ चन्द्रमा हो तो कफ, खाँसी और श्वास रोग से पीड़ित होकर ज्वर तथा कफ से दुःखी रहता है।

यदि नष्ट या हीन बली चन्द्रमा हो तो वह प्राणी शीत, वात कफ आदि रोगों से पीड़ित व चोर आदि दुष्टों से भय, अपने बन्धुओं के साथ कलह क्लेश पाता है। यदि चन्द्रमा जन्म एवं वर्ष में अत्यन्त नीच होकर वर्षेश हो ता वह प्राणी दूर देश जाने वाला, स्त्री, पुत्रादियों के दुःख से दुःखी तथा मृत्यु के समान कष्ट भोगता है।[2]

---

1. (क) सूर्येऽब्दपे बलिनि राज्य सुखात्मजार्थलाभः कुलोचितविभुः परिवार सौख्यम्।
पुष्टं यशो गृह सुखं विविधा प्रतिष्ठा शर्त्रुवनश्यति फलं जनिखेट युक्त्या।।
स्यान्मध्यमें फलमिदं निखिलं तु मध्यं स्वल्पं सुखं स्वजनतोऽपि विवाद माहुः।
स्थानच्युतिर्न च सुखं कृशता शरीरे भीतिर्नृपान्मुथशिलो न शुभेन चेत्स्यात्।
सूर्ये बलेन रहितेऽब्दपतौ विदेश यानं धनक्षयशुचोऽरिभयं च तन्द्राः।
लोकापवादभयमुग्ररूजोऽतिदुःखं पित्रादितोऽपि न सुखं सुतमित्र भीतिः।। (ता॰ नी॰, अ॰ १/१५, १६, १७)
(ख) अब्दाऽधिपेऽम्बरमणौ सबले प्रतिष्ठा प्राप्तिस्ततो निजकुले बहुराज्यलाभः।
स्थानान्तराद्भवतिभूधनकींतमित्र लाभस्तथा बहुसुखानिरिपोंवनाशः।।
पुत्रान्नृपात्सुजनतोऽपसुखं नराणां स्यान्मध्यविर्य सहितेद्युम्रणौदशायाम्।
कुर्याद्दरिद्रमपि रोगभयं विवादं लोकैस्तथा नृप जनैः सह चाल्पवैरम्।।
नष्टेर वौ भवति वैरिजनाद्विरोधो रोगागमो निजजनाद्भयमुग्रकं स्यात्।
द्रव्यक्षयश्च सततं कलहः स्यामित्रात् दाधे च दूरगति दौस्थ्यजनाऽपवादः।। (वर्षपत्री दीपक, श्लो॰ ८५-८७)
2. (क) वीर्यान्विते शशिनी वित्तकलत्रपुत्रमित्रालयस्य विविधं सुखमाहुरार्याः।
स्रग्गन्धमौक्तिकदुकूलसुखानुभूति र्लाभः कुलोचितपदस्य नृपैःसाखित्व्।।
वर्षाधिये शशिनि मध्यबले फलानि मध्यान्यमूनिरिपुता सुतमित्रवर्गैः।
स्थानान्तरे गतिरथो कृशता शरीरे श्लेष्मोद्भवश्चयदि पापकृतेसराफः।।
नष्टेऽब्दपे शशिनिशीतकफादिरोगश्चौर्यादिभीः स्वजनविग्रहहमप्युशन्ति।
दूरे गतिः सुतकलत्रसुखाप्तयश्च स्यान्मृत्युतुल्यमतिहीनबलेशशाङ्के।। (ता॰नी॰, अ॰ १, श्लो॰ १९-२१)
(ख) पृथ्वीपालात्स्यादवाप्तिंवशालानानासौख्यं स्त्रीषुलीलाविलासः।
मुक्तायुक्तश्वेतवस्तुपलब्धिर्वर्षाधीशे यामिनीशेऽधिसत्त्वे।।
कान्तासौख्यंस्वल्पमेवप्रकल्प्यं वैकल्यंस्यात्स्वीयवर्गेऽथदैन्यम्।
काश्यम्भूपश्याऽतिकोपान्निशेशेवर्षाऽधीशेमध्यमत्त्वोपपन्ने।।
विकल्ताऽनिलूतश्च कलिःकुले प्रचलनं हि निजस्थलतो भवेत्।
नरपतेःकफतोपि महद्भयं शशिनि हायनपेऽल्पबलान्विते।। (वर्षपत्रीदीपक, श्लो॰ ८८- ९०)

नोट :- यद्यपि हमने चन्द्रमा को वर्षेश नहीं माना है परन्तु कई आचार्यों के मत से चन्द्रमा भी वर्षेश हो सकता है।

वर्षेश मङ्गल का फल :-

जब वर्षेश मंगल पूर्णबली हो तो यश कीर्त, जय तथा शत्रु का नाश होता है, मनुष्य सेनापति होता है, संग्राम (युद्ध) में अग्रणी होता है, लोगों में प्रतिष्ठा होती है, अपने कुल के अनुसार धन का लाभ होता है, लोग आदर करते हैं मित्र, पुत्र, धन तथा स्त्री का सुख मिलता है।

यदि वर्षेश मंगल मध्यम बली हो तो – जब मंगल वर्षेश होकर मध्यम बली हो तो शरीर से रूधिर निकलता है, फोड़ा–फुन्सी आदि रोग होते हैं। क्रोध अधिक होता है, झगड़े में हथियार से चोट लगती है, अथवा घाव होता है, अपने लोगों में प्रभुता मिलती है, बल तथा आदर की प्राप्ति होती है, पूर्वोक्त सब फल मध्यम होते हैं।

वर्षेश मंगल बलहीन हो तो – जब वर्षेश मंगल बलहीन हो तो शत्रु, चोर अथवा अग्नि का भय होता है; लोग कलंक लगाते हैं अपनी बुद्धि का नाश होता है, जो काम आदमी करे उसमें विघ्न आते हैं। रोग होते हैं, विदेश यात्रा करता है, यदि बृहस्पति की दृष्टि उस पर न पड़े तो कुचाल से नष्ट हो जाता है।[1]

वर्षेश बुध का फल :-

वर्षेश बुध पूर्णबली हो तो – जब वर्ष कुण्डली में बुध पूर्ण बली होकर वर्षेश हो तो मनुष्य को लिखने–पढ़ने से, अच्छे शास्त्र पढ़ने से, अच्छे व्यापार से धन का लाभ होता है, तथा विजय मिलती है। कला, गणित तथा वैद्य–विद्या का ज्ञान होता है, लोगों में प्रतिष्ठा तथा राजा की सहायता से राज्य मिलता है अथवा मनुष्य राजा का मन्त्री होता है।

वर्षेश बुध मध्यबली हो तो – जब वर्षेश बुध मध्यमबली हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होता है और वह प्राणी यात्रा द्वारा व्यापार करता है, पुत्र तथा मित्र से सुख मिलता है। बुध यदि शुभ ग्रहों से इत्थशाल योग करे तो शुभ फल होते हैं, अन्यथा अशुभ फल मिलते हैं।

वर्षेश बुध बलहीन हो तो – जब वर्षेश बुध बलहीन हो तो बल तथा बुद्धि की हानि होती है, धर्म का नाश होता है, अपने वचन के दोष से अनादर सहना पड़ता है, चित्त से विक्षेप होने से बड़ी आपत्ति होती है, झूठी गवाही देनी पड़ती है, किसी मनुष्य के कारण पुत्र, धन तथा मित्र की हानि होती है।[2]

---

1. (क) भौमेऽब्दपे बलिनि कीर्तजयारिनाशः सेनापतित्वरणनायकता प्रदिष्टा।
लाभःकुलोचितधनस्य नमस्यता च लोकेषु मित्रसुत वित्तकलत्र सौख्यम्।।
मध्येऽब्दपेऽवनिसुते रूधिरस्रुतिश्च कोपोऽधिको झकटशस्त्रहतिक्षतानि।
स्वामित्वमात्मगणतो बलगौरवं च मध्यं सुखं निखिलमुक्तफलं विचिन्त्यम्।।
हीनेऽब्दपेऽसृजि भयं रिपुतस्कराग्निलोकापवादभयमात्मधियां विनाशः।
कार्यस्य विघ्नमतिरोगभयं विदेशयानं क्षयोऽपनयतो गुरुदृष्टयभावे।। (ता॰ नी॰, अ॰ १, श्लो॰ २२-२४)

(ख) रिपुगणाद्विजजयोऽपिरणाङ्गणे भ्रमणतश्चमहद्द्रविणागमः।
नरपतेरपि वापि चमूपतेः क्षितिसुतेऽब्दपतौ बलवत्यलम्।।
गदं विवादं विविधं विरोधं धनव्ययं चौरभयं करोति।
अराकतिभीतिंक्षितिपादिभीतिं वर्षाधिपो मध्यबलो महीजः।।
दुष्टादभीष्टाच्चकरोतिकष्टं गदंचपादाननलोचनेषु
खलाभूपालाज्जवलनादनर्थं व र्षाऽधिराजोवनिजोऽल्पसत्त्वः।। (वर्षपत्री दीपक, श्लो॰ ९१, ९२, ९३)

(ग) वर्षफल विचार डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' पृ॰ १७३

2. (क) सौम्येऽब्दपे बलवति प्रतिवादलेख्यसच्छास्त्रसद्व्यवहतौ विजयोऽर्थलाभः।
ज्ञानं कलागणितवैद्यभवं गुरुत्वं राजाश्रयेण नृपतानृपमन्त्रिता वा।।
अब्दाधिपे शशिसुते खलु मध्यवीर्ये स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथाध्वयानम्।
वाणिज्यवर्तनमथात्मजमित्रसौख्यं सौम्येत्थशालवशतोऽपरथा न सम्यक्।।
सौम्येऽब्दपेऽधमबले बलबुद्धिहानिधर्मक्षयः परिभवो निजवाक्यदोषात्।
निक्षेपतो विपदतीव मृषैव साक्ष्यं हानिः परव्यवहतेः सुतवित्तमित्रैः।।(ता॰ नी॰ अ॰ १, श्लो॰ २५, २६, २७)

वर्षेश बृहस्पति का फल :-

वर्षेश गुरु पूर्णबली हो तो – जब वर्षकुण्डली में वर्षेश गुरु बलवान हो तो परिवार से सुख मिलता है, धार्मक कार्यों में मन लगता है, दूसरे के गुणों को ग्रहण करने की इच्छा होती है, धन, यश तथा पुत्र का लाभ होता है। लोग विश्वास करते हैं, अच्छी बुद्धि तथा पराक्रम की प्राप्ति होती है, धन का लाभ होता है, राजा से आदर मिलता है, तथा शत्रुओं का नाश होता है।

वर्षेश गुरु मध्यबली हो तो – जब वर्षेश, बृहस्पति मध्यम बली हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, राजा से मिलन होता है, पांडित्यता होती है, शास्त्र में प्रीति होती है, परन्तु यदि अशुभ ईसराफ योग हो तो गरीबी का फल, धन का नाश तथा स्त्री को पीड़ा होती है।

वर्षेश गुरु बलहीन हो तो – जब बृहस्पति बलहीन होकर वर्ष का स्वामी हो तो धन, धर्म तथा सुख की हानि होती है, अपने पुत्र, मित्र तथा स्त्री उस मनुष्य को छोड़ देते हैं। लोगों से मिथ्या कलंक लगने का भय होता है, चित्त व्याकुल रहता है, अत्यन्त कष्ट से निर्वाह होता है, शरीर में कफ रोग होता है, शत्रु से भय होता है तथा लोगों से झगड़ा होता है।[1]

वर्षेश शुक्र का फल :-

वर्षेश शुक्र पूर्णबली हो तो – जब वर्षकुण्डली में वर्षेश शुक्र उत्तम बली हो तो प्राणी रोग रहित हो जाता है, अनेक प्रकार के भोग विलास मिलते है, अच्छे शास्त्र को पढ़ने में प्रीति होती है, रत्न मीठे भोजन आदि से सन्तोष प्राप्त होता है, कल्याण होता है, प्रताप बढ़ता है, प्रसन्नता प्राप्त होती है, राजा के सहारे से धन तथा सुख मिलते हैं।

वर्षेश शुक्र मध्यबली हो तो – जब वर्षेश शुक्र मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, आजीविका कम होती है, गुप्त दुःख होता है, मितव्यय करना पड़ता है, यदि पापग्रह अथवा शत्रु ग्रहों से शुक्र युत या दृष्ट हो तो अनेक प्रकार की आपत्तियाँ होती हैं तथा धन का नाश होता है।

वर्षेश शुक्र बलहीन हो तो – जब वर्षेश शुक्र बलहीन हो तो चित्त में अत्यन्त सन्ताप होता है, लोगों में हंसी होती है, अपनी आजीविका का नाश होता है, स्त्री, पुत्र, मित्रों में द्वेषभाव होता है, कष्ट से भोजन मिलता है और हर कार्य में विफलता होने से निराशा बढ़ती है।[2]

---

1. (क) जीवेऽब्दपे बलयुते परिवारसौख्यं, धर्मो गुणग्रहिलता धनकीर्तपुत्राः।
विश्वास्यताजगतिसन्मतिविक्रमाप्ति, र्लाभो निधेर्नृपतिगौरवमप्यरिघ्नम्।।
अब्दाधिपे सुरगुरौ किल मध्यवीर्ये स्यान्मध्यमं फलमिदं नृपसङ्गमश्च।
विज्ञानशास्त्रपरताऽप्यशुभेसराफे दारिद्रियमर्थविलयश्च कलत्रपीडा।।
जीवेऽब्दपेऽधमबले धनधर्मसौख्यहानिस्त्यजन्तिसंतमित्रजनाः सभार्याः।
लोकापवादभयमाकुलताऽतिकष्टं वृत्तिस्तनौ कफरूजोरिपुभीःकलिश्च।।(ता॰ नी॰, अ॰ १, श्लो॰ २८-३०)

(ख) ज्ञानं कीर्तन्निधिसहचराल्हादनन्देवतानामर्च्चा चर्चा त्रिधधनचयैर्लोकावश्वासितैव।
धर्मेप्रीतिर्नृपतिकुलतोत्पन्नवित्तोन्नतिस्याच्चञ्चत्कीर्तश्शरदधिपतौ वाक् पतौसर्व्ववीर्य्ये।।
लोकैस्मार्द्धं वैमनस्यं विवादं मान्द्यं बुद्धेश्शत्रु सम्बर्द्धनञ्च। भूपाशङ्कातङ्कतःकार्श्यमङ्गेदेवाचार्य्ये मध्यवीर्येऽब्दपेस्यात्।।
जघनलोचनगुल्फपदोदरे हरहराऽतितरां परिपीऽनम्।
विकलतानिलतःखलतो भय सुरगुरौ विकलेऽब्दपतौ भवेत्।।(वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९१, श्लो॰ ९७, ९८, ९९)

2. (क) शुक्रेऽब्दपे बलिनि नीरूजता विलाससच्छास्त्ररत्नमधुराशनभोगतोषाः।
क्षेमप्रतापविजया वनिताविलासो हास्यं नृपाश्रयवशेन धनं सुखं च।।
अब्दाधिपे भृगुसुते खलु मध्यवीर्ये स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथाल्पवृत्तिः।
गुप्तं च दुःखमखिलं सुनिबद्धवृत्तिः पापारिवीक्षितयुते विपदोऽर्थनाशः।।
शुक्रेऽब्दपेऽधमबले मनसोऽतितापो लोकोपहासविपदो निजवृत्तिनाशः।
द्वेषःकलत्रसुतमित्रजनेषु कष्टादन्नाशनं च विफलक्रियता न सौख्यम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ३१-३३)

वर्षेश शनि का फल :-

वर्षेश शनि पूर्णबली हो तो – जब शनि उत्तम बली हो तो नई भूमि, नये घर अथवा क्षेत्र की प्राप्ति होती है, म्लेच्छ राजा के द्वारा धन-संग्रह होता है, उद्यान तथा जलाशय बनाने से सुख मिलता है, शरीर पुष्ट होता है, अपने कुल के अनुसार पदवी की प्राप्ति होती है, तथा विद्वानों में सम्मान मिलता है।

वर्षेश शनि मध्यम बली हो तो – जब वर्षेश शनि मध्यम बली हो तो सब पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, कष्ट से भोजन मिलता है, दास और चौपायों से प्रीति तथा लाभ होता है। यदि पापग्रह से शनि युत या दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है।

वर्षेश शनि बलहीन हो तो – जब शनि वर्षेश होकर बलहीन हो तो मनुष्य जो कुछ काम करे वह निष्फल होता है धन का नाश होता है, शत्रुभय होता है स्त्री, पुत्र तथा मित्रों से विरोध होता है, खाने को अच्छा भोजन नहीं मिलता है, यदि अच्छे ग्रह के साथ इत्थशाल हो तो थोड़ा सुख मिलता है।[1]

द्वादश भावों में मुन्था का फल –

वर्ष लग्न से चौथे, छठे, सातवें, आठवें और १२वें भाव में स्थित मुन्था का फल अशुभ होता है। वर्षलग्न से नवम, दशम और एकादश भाव में स्थित मुन्था का फल अत्यन्त शुभ होता है। वर्ष लग्न से प्रथम, द्वितीय, तृतीय और पाँचवें भाव में स्थित मुन्था से उद्यम (परिश्रम) करने से ही शुभ फल की प्राप्ति होती है।[2]

लग्न भावस्थ मुन्था का फल –

वर्ष कुण्डली में लग्न में स्थित मुन्था हो तो शत्रु नाश, सम्मान, मन में प्रसन्नता कारक, राजा के आश्रय से धन लाभ, प्रताप की वृद्धि, राज्यलाभ, शरीर की पुष्टि और अनेक प्रकार के उद्योगों से धन वृद्धि होती है।[3]

द्वितीय भावस्थ मुन्था का फल –

मुन्था द्वितीय स्थान में होने से उत्साह से धन प्राप्ति, यश लाभ, अपने परिजनों से सम्मान प्राप्ति, मधुर भोजन प्राप्ति, अनिष्ट का नाश, सुख, निरोग्यता और राजपक्ष से लाभ होता है।[4]

---

1. (क) मन्देऽब्दपे बलिनि नूतनभूमिवेश्मक्षेत्राप्तिरर्थनिचयो यवनावनीशात्।
आराममिर्मितजलाशयसौख्यमङ्गपुष्टिः कुलोचितपदाप्तिगुणान्गुणित्वम्।।
अब्दाधिपे रविसुते खलु मध्यवीर्ये स्यान्मध्यमं निखिलमन्नभुजिस्तु कष्टात्।
दासोष्ट्रमाहिषकुलान्यरितस्तु लाभः पापं फलं भवति पापसयुगीक्षणेन।।
मन्दे बलेन रहितेऽब्दपतौ क्रियाणां बन्ध्यत्वमर्थविलयो विपदोऽरिभीतिः।
स्त्रीपुत्रमित्रजनवैरकदन्नमुक्तिः सौम्येत्थशालयुजि सौख्यमपीषदाहुः।। (ता॰ नी॰, अ॰ १, श्लो॰ ३४-३६)
(ख) शैलकाननवणिक् कृषिक्रियाम्लेच्छतोनिजमानसमोप्सितम्। स्यान्मतिर्द्रुमलताऽभिरोपणी पूर्णसत्त्वसहितेऽब्दपे शनौ।।
क्रोडपृष्ठगगलेक्षणपीड़ा जायते हि निबिडा पवर्नातः। मूतरप्यतिकृशा बहुशेषा वर्षपे रविसुतेर्द्वबलाढ्ये।।
अग्निलतोबलकान्तिविहीनता विफलतापिनिजेप्सितसाधने।
निजजनात्मजकष्टचयो भवे द्रविसुते विबले शरदीश्वरे।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९४, श्लो॰ ३४, ३५)
2. (क) वर्षलग्नात्सुखास्तान्त्यरिपुरन्ध्रेष्वशोभना।
पुण्यकर्मायगा स्वाम्यं दत्तेऽन्यत्रोद्यमाद्धनम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७७, श्लो॰ ४)
(ख) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६२
3. (क) शत्रुक्षयं मनसतुष्टि लाभं प्रतापसवृद्धिं नृपतेः प्रसादम्।
शरीरपुष्टिं विविधोद्यमाश्ंच ददातिवित्तं मुथहा तनुस्था।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७७, श्लो॰ ५)
(ख) बरसभारसभागवनीपते रतिकलातिकलापसगन्वितः।
सुजनताजनतापहरो नरस्तनुगतानुगता यदि मुन्थहा।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९५, श्लो॰ ७)
4. (क) उत्साहतोऽर्थागमनं यशश्च स्वबन्धुसम्माननृपाश्रयाश्च।
मिष्टान्नभोगो बलपुष्टि सौख्यं स्यादर्थभावे मुथहा यदाब्दे।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७७, श्लो॰ ६)
(ख) मद बलादबलादिसुखोनरः सुकृतगः कृतर्गहतवारणः।
अधिकताऽधिकतापरो द्विषां सुख धनस्सधनास्थतया तया। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९५, श्लो॰ ८)

तृतीय भावस्थमुन्था का फल –

तृतीयभाव में मुन्था से प्राणी को यश प्राप्ति, पराक्रम से धन लाभ, सुखलाभ सहोदर भाईयों से सुख, गो, ब्राह्मण, देवपूजन में श्रद्धा, परोपकारी बुद्धि, शरीर पुष्टि, कीर्त, लाभ और राज्य से आश्रय तथा मनुष्यों में बढ़ाई होती है।[1]

चतुर्थ भावस्थ मुन्था का फल –

चतुर्थ भाव में मुन्था होने से शरीर कष्ट, शत्रुभय, अपने-परायों से विरोध, बन्धुजनों में अप्रीति, मानसिक सन्ताप, व्यापारिक हानि, लोकापवादभय, रोगभय, राजा से भय तथा हर प्रकार से चिन्ताप्रद स्थिति बनती है।[2]

पंचम भावस्थ मुन्था का फल –

वर्ष प्रवेश के समय मुन्था पाँचवें स्थान में स्थित हो तो सुन्दर बुद्धि, सत्कर्मद्वारा शरीर की पवित्रता होती है। सुख प्राप्ति, पुत्र व धनलाभ, प्रताप की बृद्धि, भोग-विलास से सुख, देवता और ब्राह्मण में भक्ति, राजसभा में सम्मान, मन की व्यथा दूर हो तथा राजा की कृपा होती है।[3]

षष्ठभावस्थ मुन्था का फल –

मुन्था शत्रुभाव में होने स देह में दुर्बलता, शत्रुओं से भय, रोग भय, चोरभय, राजभय, कार्य में हानि, धनहानि, कुसंगति, दुर्बुद्धि तथा अपने ही किये कार्यों से पश्चाताप भी होता है।[4]

सप्तम भावस्थ मुन्था का फल –

वर्ष प्रवेश समय यदि मुन्था सप्तम भाव में स्थित हो तो पुरुष बन्धुवर्ग से पृथक् होकर स्त्री से भी वियोग भाव को प्राप्त होताहै। शत्रुभय, उत्साह भङ्ग, धर्म हानि, धन व कार्यों की हानि, शरीर में रोग, मन में मोह, नीति का नाश और विपरीत कार्य करने की कुचेष्टा होती है।[5]

---

1. (क) पराक्रमाद्वित्तयशः सुखानि सौन्दर्यसौख्यं द्विजदेवपूजा।
   सर्वोपकारस्तनुष्टिकीर्तिर्नृपाश्रयश्चेन्मुथहा तृतीया।। (ताजिक नीलकण्ठी, अ॰ २, पृ॰ १७७, श्लो॰ ७)
   (ख) निजयशोजयशोभितनुर्नरः सुकृतकृत्कृतकृत्यतयोन्नतः।
   नययुतोऽप्ययुतो मुथहा यदाऽनुजगताजगता कृतवर्णनः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ६६, श्लो॰ ९)
2. (क) स्वधनसाधनसाहस दुःखितो भयमतोयमितोऽपगितारतः
   नृपनयापनयादपि नो कथारससुखस्सुखर्सस्थितमुन्थहे।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ६६, श्लो॰ ११०)
   (ख) शरीर पीड़ा रिपुभिः स्ववर्ग्यवैरंमनस्तापनिरूध्यमत्वे।
   स्यान्मुन्थहायां सुखभावगायांजनापबादामयवृद्धिदुःखम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७८, श्लो॰ ८)
3. (क) यदीन्थिहा पञ्चमगाब्दवेशे सद्बुद्धिसौख्यात्मजवित्तलाभः।
   प्रतापवृद्धिर्विविधाविलासा देवद्विजार्चानृपतेः प्रसादः।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७८, श्लो॰ ९)
   (ख) सु जनपूजनपूततर्नुनराकरणधीरणधीरतयाद्विषाम्।
   अधिनिराधिनिरामुथहायदा तनय गानयगामितयान्वितः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९६, श्लो॰ ११)
   (ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६३
4. (क) स्वसहितस्सहितस्थितवैरतोऽनुगतरोगतरोऽरिभयान्वितः।
   निजपतेर्जपतेपि महद्भयं परिगताऽरिगता मुथहा यदा।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९७, श्लो॰ १२)
   (ख) कृशत्वमङ्गेषु रिपूदयश्च भयं रूजस्तस्करतो नृपाद्वा।
   कार्यर्थनाशो मुथहाऽरिगा चेद् दुर्बुद्धिवृद्धिःस्वकृतोऽनुतापः।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७८, श्लो॰ १०)
   (ग) वर्षफल चन्द्रिका पं॰ पन्ना लाल ज्योतिष, पृ॰ ४८ (घ) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६३
5. (क) कलत्रबन्धुव्यसनारिभीतिरूत्साहभङ्गोधनधर्मनाशः।
   द्यूतोपगा चेन्मुथहा तनोः स्याद्रुजामनोमोहविरूद्धचेष्टा।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७८, श्लो॰ ११)
   (ख) निपुरुषः पुरुषश्च वियोगितां प्रमदयामदयातरिमुन्थहा।
   धनयशोनयशोकरूजो लभेत् निजसमाजसमाक्रमनाशनम्।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९७, श्लो॰ १३)
   (ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४

अष्टम भावस्थ मुन्था का फल :-

मुन्था आठवें भाव में हो तो शत्रु व चोर से भय, धन व धर्म की हानि, दुर्व्यसनों में आसक्ति, कठिन रोग, बल की हानि, दूर देश की यात्रा और वर्ष पर्यन्त अशुभ फल होता है।[1]

नवम भावस्थ मुन्था का फ़ल :-

मुन्था नवम स्थान में होने से राजा द्वारा सम्मान प्राप्त होता है। सभी कार्यों में ऐच्छिक अधिकार, धार्मक कार्यों में उत्साह, पुत्र सुख, यश की वृद्धि, धार्मक उत्सव, देवता और ब्राह्मण पूजन, पुण्य अर्जत और भाग्य उदय करती है।[2]

दशम भावस्थ मुन्था फल :-

दशम मुन्था हो तो राजा की प्रसन्नता और स्वंजनों पर उपकार, बुद्धि का सदुपयोग, अच्छे कार्यों की सिद्धि, धार्मक कार्यों में रूचि, धन की वृद्धि, यश प्राप्ति, ऐश्वर्य सुख तथा अनेक प्रकार के धनों का लाभ होता है।[3]

एकादश भावस्थ मुन्था का फल :-

ग्यारहवें भाव में यदि मुन्था हो तो सुख-सौभाग्य-आरोग्य, मानसिक प्रसन्नता, राजा के आश्रय से धन की प्राप्ति, बृहस्पति के समान बुद्धि, ज्ञान, मित्र का लाभ, पुत्र और विविध प्रकार के धनों का लाभ होकर मनोरथ की प्राप्ति होती है।[4]

बारहवें भावस्थ मुन्था का फल :-

बारहवें स्थान में यदि मुन्था हो तो खर्च में वृद्धि, दुष्ट मनुष्यों का संग, शरीर में रोगोत्पति, अपने पराक्रम से भी कार्य की असिद्धि, धर्म व धन की हानि, अपने या अन्य जनों से वैर आदि अशुभ फल होते है।[5]

---

1. (क) भयं रिपोस्तस्करतो विनाशो धर्मार्थयोर्दुर्व्यसनामयश्च।
मृत्युस्थिता चेन्मुथहा नराणां बलक्षयः स्याद् गमनं च दूरे।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७९, श्लो॰ १२)
(ख) व्यसनतस्सनतः कलहाकुलः स्वधनरोधनरोगयुतोनरः।
अहिततो हिततोषविर्वजतःत्वशुभगोशुभगो यदि मुन्थहा।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९७, श्लो॰ १४)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
2. (क) स्वामित्वमर्थोपगमो नृपेभ्यो धर्मोत्सवःपुत्रकलत्रसौख्यम्।
देवद्विजार्चा परमं यशश्च भाग्योदयो भाग्यगतेन्थिहायाम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७९, श्लो॰ १३)
(ख) नृपकृतोपकृतोत्सवर्गवतःप्रचलताचलतातियशोन्वितः।
स्वहितवृद्धिउकृन्मनुजो भवेत् ससुकृतस्सुकृतस्थितयामुथा।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९७, श्लो॰ १५)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
3. (क) नृपप्रसादं स्वजनोपकारं सत्कर्मसिद्धिं द्विजदेवभक्तिम्।
यशोऽभिवृद्धिं विविधार्थलाभं दत्तेऽम्बरस्था मुथहा पदाप्तिम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७९, श्लो॰ १४)
(ख) निजमनोजमनोरथगौरवन्ननुभुवेनु भवेद्धि भवैर्युतः।
कमलयामलयापि यदीन्थिहा दशमगासुभगाद्भुतबुद्धिभाक्।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९७, श्लो॰ १६)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
4. (क) यदिन्थिहा लाभगता विलास सौभाग्यनैरूज्यमनः प्रसादः।
भवन्ति राजाश्रयतो धनानि सन्मित्रपुत्राभिमताप्तयश्च।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७९, श्लो॰ १५)
(ख) सुधिषणोधिपणोपमतम्व्रजेत्तनुजतोऽनुजतोपिसुखन्नरः।
नृपसुखोपसुखोमुथहा यदा हरमितारमितात्मजनव्रजः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९९, श्लो॰ १७)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
5. (क) व्ययोऽधिको दुष्टजनैश्च सङ्गो रूजा तनौ विक्रमतोऽप्यसिद्धिः।
धर्मार्थहानिर्मुथहा व्ययस्था यदा तदा स्याज्जनतोऽपि वैरम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १७९, श्लो॰ १६)
(ख) धनविधानविधापरिर्वजतो हतनयस्तनयस्वजनासुखः।
मनुजपेनुजपेविरतिर्भवेद्व्ययमितायमिता यदि मुन्थहा।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ ९९, श्लो॰ १८)

स्वामीयुत् दृष्ट मुन्था फल –

वर्ष कुण्डली में यदि मुन्था शुभ ग्रह व अपने स्वामी ग्रह से युक्त हो या देखी जाती हो अथवा पञ्चवर्गी में उत्तम बलवाली हो अथवा शुभ ग्रह या अपने स्वामी के साथ इत्थशाल योग करे तो वह उस भाव सम्बन्धी फल को बढ़ाती है और अशुभ फल का नाश करती है। अन्यथा जो मुन्था शुभ स्वामी से युक्त न हों और शुभ ग्रहों के साथ इत्थशाल न करती हो, पापग्रहों से दृष्ट होकर पापग्रहों के साथ मिलाप करती हो तो वह अपने पाप सम्बन्धी अशुभ फल बढ़ाती हुई शुभ फल का नाश करती है। वह भाव अपने भाव सम्बन्धी अशुभ फल बढ़ाता हुआ शुभ फल का नाश करता है। मुन्था यदि शुभ वा पापग्रह से दृष्ट होकर शुभ व पापग्रहों से मिलाप करती हो तो उस ग्रह का बल विचार कर शुभ व अशुभ फल कहना चाहिए।[1]

सूर्य ग्रह के साथ मुन्था का फल – जब वर्ष कुण्डली में मुन्था सूर्य के साथ हो, सूर्य की राशि में या किसी भी भाव में सूर्य से दृष्ट मुन्था हो तो राज्य लाभ, राजा का सहचर्य, गुणों की वृद्धि, धन की प्राप्ति, राज्य-सुख, रोज़गार में तरक्की, स्त्री, वस्त्र तथा भूषणादि का लाभ होता है।[2]

चन्द्रमा के साथ मुन्था का फल – यदि मुन्था चन्द्रमा से युक्त हो या चन्द्रमा की राशि (कर्क) में स्थित हो या चन्द्रमा से दृष्ट मुन्था हो तो उस प्राणी के अर्थ तथा यश की वृद्धि, आरोग्यता, सन्तोष देह सुख, सज्जनों से समागम उत्तम बुद्धि, विभव तथा राजा से मान हो। यदि मुन्था पापग्रह से दृष्ट हो तो अति दुःख दायक होती है।[3]

मंगल के साथ मुन्था का फल – वर्ष प्रवेश समय में यदि मुन्था से युक्त हो, मंगल की राशि (मेष-वृश्चिक) में हो अथवा मंगल से दृष्ट हो तो पित्त वृद्धि शरीर व रक्त में गर्मी का प्रकोप और शस्त्र से चोट लगने का भय होता है। उक्त स्थिति में मुन्था शनिग्रह के घर (मकर, कुम्भ) में हो या शनि ग्रह से दृष्ट हो तो पित्त प्रकोप, चोट-चपेट व अग्नि, विद्युत का भय होता है।[4]

बुध-शुक्र ग्रह के साथ मुन्था का फल – यदि मुन्था बुध-शुक्र सेयुत वा दृष्ट हो अथवा

---

1. (क) शुभस्वामीयुक्तेक्षितावीर्ययुक्तेन्थिहास्वामिसौम्येत्थशालंप्रपन्ना।
शुभं भावजं पोषयेन्नाशुभं साऽन्यथात्वेऽन्यथा भाव उह्योविमृश्य।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८०, श्लो॰ १८)
(ख) स्वस्वामिना तत्सुहृदा शुभेन वलोपन्नेन युते क्षितावा।
स्यान्मुंथहा सर्वमनोरथाप्त्यै नराधिपालादपि गौरवार्थम्।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १००, श्लो॰ २२)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६२
2. (क) यदीन्थिहा सूर्यगृहेयुता वा सूर्येण राज्यं नृपसङ्गमं च।
दत्ते गुणानां परमामवाप्तिं स्थानान्तरस्येति फलं दृशोऽपि।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८२, श्लो॰ २४)
(ख) नृविभुतोविभुतोत्थसुखान्वितःसुकृतमाकृतमानसमुन्नतिः।
नियमनायमनामुथहा यदा रवि युता वियुताऽरिगणोतरः। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १०२, श्लो॰ २४)
(ग) वर्षफलचन्द्रिका पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ ५०
3. (क) चन्द्रेणयुक्तेन्दुगृहेऽथ दृष्टेन्दुनाऽपि वा धर्मयशोऽभिवृद्धिम्।
नैरूज्यसन्तोषमतिप्रवृत्तिं ददाति पापेक्षणतोऽतिदुःखम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ २८२, श्लो॰ २५)
(ख) अविकृतोविकृतोज्झितसंगती रूचिरधीश्चिरधो रतयान्वितः।
विभवतो भवतोषयितेन्थिहा भविभुना विभुनाकृतगौरवः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १०२, श्लो॰ २५)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
4. (क) कुजेन युक्ता कुजभे कुजेन दृष्टा च पित्तोष्णरूजं करोति।
शास्त्राभिघातं रूधिरप्रकोपं सौरीक्षिता सौरिगृहे विशेषात्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८२, श्लो॰ २६)
(ख) कुमतिनामतिनाशमसृग्रुजं विनतया नतया पचयन्दिशेत्।
सदनतोदनतोसुखमिन्थिहा कुसुयुक् स्वजनारूचिः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १०२, श्लो॰ २६)
(ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४

इनकी राशि (मिथुन, कन्या, वृष, तुला) में स्थित हो तो स्त्रियों से सुख, ऐश्वर्य धनलाभ, उदार बुद्धि, सुख, धर्म और यश प्राप्त होता है। यदि मुन्था पर पापग्रहों की दृष्टि या योग से अति कष्ट होता है।[1]

बृहस्पति के साथ मुन्था का फल – यदि मुन्था बृहस्पति से युक्त या दृष्ट अथवा गुरु की राशि (धनु, मीन) में स्थित हो तो पुत्र सुख, स्त्री का सुख और सुवर्ण, वस्त्र, रत्न तथा भोग भी प्रधान करती है। उक्त मुन्था का शुभ ग्रह से यदि इत्थशाल योग होता है तो राज्य लाभ भी होता है। पाप ग्रहों से दृष्ट होने पर शुभ फलों में कमी आती है।[2]

शनिग्रह के साथ मुन्था का फल – यदि मुन्था शनि की राशि मकर–कुम्भ में हो व शनि ग्रह से युत या दृष्ट हो तो वात रोग से शरीर पीड़ा, अपमान भय, अग्निभय, और धन की हानि होती है। यदि बृहस्पति ग्रह से उक्त स्थिति में इत्थशाल योग होता है तो शुभफल की प्राप्ति होती है।[3]

वर्ष–अरिष्ट योग– व्यक्ति की वर्ष कुण्डली में यदि लग्न का स्वामी आठवें स्थान में हो या आठवें घर कास्वामी लग्न में हो और मंगल की दृष्टि भी पड़ रही हो तथा बुध और बृहस्पति ये दोनों अस्त हों अर्थात् सूर्य के साथ अस्तांश को प्राप्त हों तो वह किसी हथियार के लगने तथा अनेक विपत्तियों से मृत्यु होती है।[4]

वर्ष कुण्डली में यदि जन्म लग्न का स्वामी निर्बल हो और वर्षलग्न से अष्टम स्थान का स्वामी वर्ष लग्न से सातवें घर में विद्यमान होकर सूर्य से दृष्ट हो तो प्राणी को मृत्यु, कुष्ठ, खुजली तथा अनेक कष्ट देता है। और यदि क्रूर ग्रह अधिक बली हों और शुभग्रह निर्बल हों या छठें तथा आठवें स्थान में स्थित हों तो वह व्यक्ति को आधि, व्याधि, कलह, हानि तथा विपत्ति आती है।[5]

---

1. (क) बुधेन शुक्रेण युतेक्षिता वा सद्भेऽपि वा स्त्रीमतिलाभ सौख्यम्।
   धर्म यशश्चाप्यतुलं विधत्ते कष्टं च पापेक्षणयोगतः स्यात्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८२, श्लो॰ २७)
   (ख) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
   (ग) सुजनतो .... आत्मजनव्रजः।। श्लो॰ २७
   सुरारिगुरुणा .... एतत्पदे।। श्लो॰ ३० (वर्षपत्री दीपक)
2. (क) युतेक्षिता वा गुरुणा गुरोर्भे यदीन्थिहा पुत्रकलत्रसौख्यम्।
   ददाति हेमाम्बररत्नभोगं शुभेत्थशालादिह राज्यलाभः।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८३, श्लो॰ २८)
   (ख) सुरमणी रमणीयविलासभाक्तनयमानयमानसुखैर्युतः।
   सुकृतिभिःकृतिभिर्मुथहा यदा सधिषणा धिषणाभ्युदयान्वितः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १०३, श्लो॰ २८)
   (ग) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६४
3. (क) शनेर्गृहेतेन युतेक्षिता वा यदीन्थिहा वातरूजं विधत्ते।
   मानक्षयं वह्निभयं धनस्य हानिं च जीवेक्षणतः शुभाप्तिम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ २, पृ॰ १८३, श्लो॰ २९)
   (ख) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १६५
   (ग) स्वकलितः कलितप्रभवो भवेदविभवो विभवोद्धतपुरुषात्।
   स्वसनतस्सनतश्च यदीन्थिहा शनियुता नियुतार्थदुराशयः।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १०३, श्लो॰ २९)
4. (क) लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनुस्थे वा कुजेक्षिते।
   ज्ञजीवयोरस्तगयोः शस्त्रघातो विपन्मृतिः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८५, श्लो॰ ९)
   (ख) क्ष्मायुतेक्षितयुतस्तनुभर्तास्यान्मृतिस्थितिकरो मृति कर्ता।
   सूर्य लिप्तकिरणौधिषणज्ञौ शस्त्र पीडन करौहि नराणाम्।। (वर्षपत्री दीपक, पृ॰ १८३, श्लो॰ २०)
5. (क) जन्मलग्नाधिपोऽवीर्यो मृतीशोऽब्देऽस्तगो यदा। सूर्य दृष्टो मृतिं दत्ते कुष्ठं कण्डूं तथाऽऽपदः।।
   क्रूरा वीर्याधिकाः सौम्या निर्बला रिपुरन्ध्रगाः।
   तदाऽऽधित्याधिभीतिः स्यात्कलिर्हानिस्तथाविपत्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८६, श्लो॰ ३, ६)
   (ख) वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९३, श्लो॰ ५५, ५७

यदि वर्ष प्रवेश में मुन्थहा लग्न स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी, ये दोनों सूर्य के सान्निध्यवश अस्त को प्राप्त हों और शनैश्चर से देखे जाते हों तो उस व्यक्ति के द्रव्य (धन) स्त्री, पुत्र आदि का नाश, मृत्यु, कष्ट, आधि (मानसिक पीड़ा), व्याधि (शरीर पीड़ा), भय, रोग आदि होते हैं। इसके अतिरिक्त यदि वर्ष कुण्डली में शुक्र नीच राशि में बैठा हो और बृहस्पति शत्रु के नवांश में हो तो तनिक भी सुख नहीं होता है। और यदि वर्षलग्न का स्वामी आठवें स्थान में हो तथा आठवें स्थान का स्वामी वर्षलग्न में हो तो उस प्राणी की मृत्यु हो जाती है।[1]

यदि वर्ष में नवम और द्वितीय भाव का स्वामी निर्बल हो और पापग्रह लग्न में हों तो बहुत काल की संचय की हुई लक्ष्मी का नाश हो यदि इन्द्र भी रक्षा करे तो उस लक्ष्मी की रक्षा नहीं होती अर्थात् धन नष्ट हो जाता है।[2]

यदि वर्ष कुण्डली में चन्द्रमा नीच राशि (वृश्चिक राशि) में हो और बुध, गुरु तथा शुक्र ये शुभ ग्रह अस्त हों तो वह प्राणी अपनों (स्वजनों) से पृथक् होता हुआ शरीर पीड़ा युक्त हो तथा विविध रोगों से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त होता है और जन्म राशि से या जन्मलग्न से आठवाँ वर्ष लग्न हो तो कष्ट तथा बहुत रोगों का भय रहता है। यदि वह वर्ष लग्न पापग्रहों से भी युक्त हो या पापग्रह देखते हों तो मृत्यु होती है।[3]

चन्द्रमा का अरिष्ट –

यदि वर्ष कुण्डली में चन्द्रमा लग्न (प्रथम), षष्ठ, सप्तम, अष्टम तथा द्वादश इनमें से किसी स्थान में हो और उसको पापग्रह देखते हों अर्थात् बृहस्पति आदि शुभ ग्रह नहीं देखते हों, तो वह चन्द्रमा उस प्राणी को अरिष्ट अथवा मृत्यु देता है। यदि चन्द्रमा मंगल से देखा जाता हो तो उस प्राणी को अग्नि का भय होता है या किसी हथियार से भय रहता है। शनि, राहु और केतु इनसे देखा जाता हुआ चन्द्रमा शत्रुभय देने वाला होता है और यदि केवल सूर्य से देखा जाता हुआ चन्द्रमा वात आदि रोग तथा निर्धनता प्रदान करता है। यदि गुरु शुभ-ग्रह चन्द्रमा को देखता हो तो शुभ फल देता है।[4]

---

1. (क) अस्तगौ मुथहालग्ननाथौ मन्देक्षितौ यदा। सर्वनाशो मृतिः कष्टमाधिव्याधिभयं रूजः।।
नीचे शुक्रौ गुरुः शत्रुभागे सौख्यवोऽपि न।
लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनौ वा मृतिमादिशेत।। (ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८६, श्लो॰ ४, ७
(ख) देवेज्यासुरेपूजितौ हतरूचौनीचेऽथचेच्चन्द्रमा ना नारोगभयवियोग वहुलं स्याद्वर्षकालेनृणाम्।
आयुः स्थानपतिस्तनौतनुपतिःसंस्थोयदानैधनेनन्वेतौ खलखेचरेक्षितयुतौशस्त्रेणमृत्युप्रदो।।
दिनकरकरलुप्तौजन्मलग्नेन्थिहेशौदिनपतियुत दृष्टौरिष्टदौतौभवेताम्।
जननसमयलग्नादष्टमं वर्षलग्नंयुतमधमुथहेशेनेक्षितरिष्टहेतु।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १८२, श्लो॰ १७, १८)
2. (क) निर्बल धर्मवित्तेशौ दुष्टखेटास्तनौ स्थिताः।
लक्ष्मीश्चिरर्जिता नश्येद्यदि शक्रोऽपि रक्षिता।। (ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८७, श्लो॰ ८)
(ख) वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९४, श्लो॰ ५९
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३९७
(घ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ १६५
3. (क) नीचे चन्द्रेऽस्तगाः सौम्या वियोगः स्वजनैः सह। शरीरपीडामृत्युर्वा साधिव्याधिभयं द्रुतम्।।
अब्दलग्नं जन्मलग्नराशिभ्यामष्टकं यदा। कष्टं महाव्याधिभयं मृत्युः पापयुतेक्षणात्।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८७, श्लो॰ ९, १०)
(ख) शरीरपीडा .... मृतिः।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९४, श्लो॰ ६०, ६१)
4. (क) चन्द्रो रिःफषऽष्टभूद्युनगते दृष्टोऽशुभैर्नो शुभैः सोऽरिष्टं विदधाति मृत्युमथवा भौमक्षणादग्निभीः।
शस्त्राद्वा शनिराहुकेतुभिररेर्भीतिं रूजं वायुजां दारिद्रयं रविणा शुभं शुभदृशेयालोकनादिशेत्।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८९, श्लो॰ १९)
(ख) निधनतनुमदारि प्रान्त्यगश्शीतरश्मिर्नहिगुरुयुतदृष्टोरिष्टकृत्सम्प्रदिष्टः।
यदिकुजयुतदृष्टः कष्टदो वह्निशस्त्रैदनकरतनयेनात्त्यन्तवातप्रकोपः।। (वर्षपत्रीदीपक, श्लो॰ १९)

वर्ष प्रवेश समय यदि चन्द्रमा सूर्य के मण्डलस्थ हो अर्थात् अस्तंगत होकर वर्षलग्न से छठे, बारहवें, आठवें, चौथे इनमें से किसी स्थान में स्थित हो तो उस मनुष्य को वात-पित्त-कफ" से उत्पन्न अनेक रोग होते हैं और नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। परन्तु यदि चन्द्रमा को बृहस्पति देखता हो तो उस मनुष्य के लिए शुभ फल होता है।[1]

मुन्थाकृत अरिष्ट –

यदि वर्ष कुण्डली में मुन्था पापग्रह से युक्त होकर षष्ठ, अष्टम और द्वादश स्थान में स्थित हो तो शस्त्र और अग्नि से भय होता है और यदि दो पापग्रहों से युक्त मुन्था को शनैश्चर देखता हो अथवा युक्त हो तो उस प्राणी को मानसी व्याधि और वांत प्रकोप आदि रोग होते हैं। यदि मुन्था जन्म समय में बारहवें, चौथे, छठें और सातवें इनमें से किसी स्थान में स्थित हो अथवा वर्ष लग्न से आठवें स्थान में विराजमान हो और उसको पापग्रह देखते हों तो उस प्राणी की मृत्यु होती है और यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो उसका अरिष्ट फल न्यून हो जाता है।[2]

वर्ष अरिष्ट भंग योग –

वर्ष कुण्डली में यदि लग्न का स्वामी पञ्चवर्गी के बल से बलवान (उत्तम बली) हो और शुभ ग्रह देखते हों या शुभग्रह युक्त हो और केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थान अथवा त्रिकोण (५, ९) स्थान में स्थित हो तो वह सम्पूर्ण अरिष्टों को नष्ट करके सुख और धन देता है और यदि बृहस्पति केन्द्र (१, ४, ७, १०) तथा त्रिकोण (५, ९) स्थान में हो बलवान हो, शुभ ग्रह उसे देखते हों, पापग्रहों की दृष्टि से रहित हो, तो वह उस प्राणी के लग्नं, चन्द्रमा और मुन्था इनसे उत्पन्न अरिष्ट नष्ट करके धन व सुख प्रदान करता है अर्थात् अरिष्ट फल को नष्ट करता है।[3]

यदि वर्षकुण्डली में सप्तम स्थान का स्वामी वर्ष लग्न में स्थित हो, और उसी लग्न में बृहस्पति भी हो परन्तु उन दोनों (सप्तमेश तथा बृहस्पति) को पापग्रह नहीं देखते हों किन्तु उसे शुभग्रह वा मित्रग्रह देखते हों तो वे उस प्राणी के अरिष्टों को दूर कर देते और अपनी दशा में राजा की प्रसन्नता से धन, यश तथा सुख प्राप्त कराते हैं।

यदि नवमेश और धनेश ये दोनों पञ्चवर्गी बल से बली होकर पापग्रहों की दृष्टि से हीन वर्ष लग्न में हों तो उस प्राणी का अरिष्ट नष्ट हो जाता है और वह प्राणी हाथी, घोड़ा,

1. (क) चन्द्रोऽर्कमण्डलगतो रिपुरिःफाष्टबन्धुगः।
त्रिदोषतस्तस्य रूजा विविधेज्यदृशा शुभम्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ३, पृ॰ १८७, श्लो॰ १५)
(ख) रात्रीश्वरे भास्कर मण्डलस्थे षष्टे व्यय वा मृतिभावसंस्थे।
त्रिदोषतोऽसौ वहुभिः प्रकारैः करोतिरिष्टं विविधं दशायाम्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १८५, श्लो॰ २६)
2. (क) चेदिन्थिहा पापयुताषडष्ट व्ययोपगाहेति हुताशभीतिम्।
करोति वर्षे रविनन्दनेन युतेक्षिता वा पवन प्रकोपम्।।
मदननिधनबन्धुप्रान्त्यशत्रुस्थिता वा जनन समयलग्नादिन्थिहाऽद्वेष्टमस्था।
खलगगनतलस्थैर्युक्तं दृष्टातिरिष्ठं जनयति शुभदृष्टोत्पन्नरिष्टाल्पतास्यात्।। (वर्षपत्रीदीपक,श्लो॰ २२-२३)
(ख) क्रूरान्वितेक्षितयुता शनिनेन्थिहाधिव्यधिप्रदा जनूषि रिष्फसुखारिन्ध्रे।
घूने च वर्षतनुनैधनगा मृतिं सादत्ते खलेक्षितयुतेत्यपि चिन्त्यमार्यैः।।(ता॰ नी॰, अ॰ ३, श्लो॰ २०)
3. (क) लग्नाधिपो बलयुतः शुभेक्षितयुतोऽपि वा। केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत्सुखवित्तदः।।
गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षितः।
लग्नचन्द्रेन्थिहारिष्टं विनाश्यार्थसुखं दिशेत्।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९०, श्लो॰ १, २)
(ख) केन्द्रत्रिकोणोपगताश्शुभाख्यास्सलग्ननाथानिधननिहन्युः। केन्द्रेसुरेन्द्रस्यगुरुर्बलीयानमङ्गलं मङ्गलमातनोति।।
विलग्नयेसौम्ययुतेक्षिते यत्खलुदिष्टमुक्तम्।
वलोयपन्नेन तनु स्थितेननिरूहयते वाक्पतिनापरिष्टम्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९७, श्लो॰ ६५, ६७)
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३९७

कपड़े व रत्नों से परिपूर्ण राज्य और अनुपम यश को प्राप्त करता है।[1]

यदि वर्ष में लग्न व चन्द्रमा से तीसरे, छठें, ग्यारहवें इनमें से किसी स्थान में पापग्रह हों और केन्द्र (१, ४, ७, १०) तथा त्रिकोण (५/९) इनमें से किसी भी स्थान में बृहस्पति, शुक्र आदि शुभ ग्रह हों तो निश्चित रूप से अरिष्ट का नाश होता है और वह प्राणी रत्न, कपड़े, सोना और यश प्राप्त करता है। उसके अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं और उसका शरीर ष्टि-पुष्ट रहता है।[2]

यदि वर्ष लग्नेश या जन्मलग्नेश या मुन्थेश ये तीनों पञ्चवर्गी के बल से पूर्ण बलवान होकर केन्द्र (१, ४, ७, १०) त्रिकोण (९, ५) ग्याहरवें और दूसरे इन स्थानों में से किसी भी स्थान में स्थित हों तो, वह प्राणी सुख, धन, सुवर्ण और वस्त्र प्राप्त करता है अर्थात् सुख-साधनों को प्राप्त करता है।[3]

वर्षकुण्डली में यदि सूर्य, गुरु और शुक्र तीनों ग्रह परस्पर इत्थशाल योग करें तो उस प्राणी को राज्य, यश, सुख और धन प्राप्त होता है। यदि वर्ष कुण्डली में जिस-किसी भी स्थान में मुन्था स्थित हो उस स्थान से उपचय (३ । ६ । १० । ११) स्थानों से किसी भी स्थान में सूर्य या मंगल स्थित हो तो उसको कल्याण, यश और मंगल का अवसर प्राप्त होता है।[4]

यदि शुक्र, बुध, चन्द्रमा और गुरु ये शुभ ग्रह अपनी हद्दा में हों और सूर्य, मंगल, शनैश्चर ये तीनों पापी ग्रह तीसरे व ग्यारहवें स्थान में स्थित हों तो वह मनुष्य अपने पराक्रम से सुवर्ण, सुख और कींत इनको प्राप्त करता है।[5]

मासप्रवेश दिन प्रवेश साधन -

मास प्रवेश और दिन प्रवेश निकालने लिए जन्मकालीन सूर्य जितनी राशि संख्यावाला हो, उसको ग्यारह स्थानों में रखना चाहिए और इनमें क्रमशः एक-एक राशि जोड़ने से मास प्रवेश का इष्टकाल आता है। तात्पर्य यह है कि जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य और राशि आदि मिलने पर ही वर्षप्रवेश होता है। जितने समय में सूर्य जन्म काल के सूर्य के बराबर अंश, कला तथा विकला पर होता है, वही वर्ष का इष्ट समय होता है। यदि एक राशि में अधिक

---

1. (क) लग्ने द्युनेशस्तनुगः सुरेज्यः क्रूरैरदृष्टः शुभमित्रदृष्टः।
रिष्टं निहन्त्यर्थयशः सुखाप्तिं दिशेत्स्वपाके नृपतिप्रसादम्।
बलान्वितौ धर्मधनाधिनाथौ क्रूरैरदृष्टौ तनुगौ यदाऽऽस्ताम्।
राज्यं गजाश्वाम्बररत्नपूर्णं रिष्टस्य नाशोऽप्यतुलं यशश्च। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९१, श्लो॰ ४, ५)
(ख) वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९९, श्लो॰ ७३, ७४
2. (क) त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैःकेन्द्रत्रिकोणोपगतैश्चसौम्यैः।
रत्नाम्बरस्वर्णयशःसुखाप्तिर्नाशोऽप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९१, श्लो॰ ६)
(ख) होरायाश्चनिशाकरादिविचरः क्रूरास्त्रिलाभारिगा ननंपापमपा करोति बहुलम्।
वालग्नपातीवली सौम्येस्सम्मिलितः करोति दलनं रिस्यष्टदृष्टस्तथा सौम्येर्जन्मनिदेवदेवसचिवो वा भार्गवः केन्द्रगः।।
(वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९७, श्लो॰ ६६)
3. (क) यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपोवा।
केन्द्रत्रिकोणाय धनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९१, श्लो॰ ७)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११५
4. (क) सूर्येज्यशुक्रामिथ इत्थशाल कुर्यस्तदा राज्ययशः सुखार्थाः।
सूर्यःकुजो वोपचये ददाति भद्रं यशो मङ्गलमिन्थिहायाः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९२, श्लो॰ ९)
(ख) मुथहायाउपचयेसूर्येवाधरणीसुतः।
तस्मिन्वर्षेशुभंसर्वंसफलं भद्रदायकम्।। (वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ २०९, श्लो॰ ७७)
5. (क) शुक्रज्ञचन्द्रा हद्दे स्वे पापस्त्र्यायगमा यदि।
स्वबाहुबलतो हेमसुखकींत नरोऽश्नुते।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १९२, श्लो॰ १०)
(ख) वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १९९, श्लो॰ ७२

सूर्य उसी स्पष्ट के बराबर मिले तो वह मास प्रवेश का इष्ट होता है। एक-एक राशि बढ़ाते जाने से बारह महीनों का इष्ट होता है और कला-विकला में समानता रहती है। उक्त स्पष्ट सूर्य में एक-एक अंश बढ़ाते जाने से दिन प्रवेश का इष्ट और दिन प्रवेश दोनों निकल आते हैं।[1]

मासेश साधन :-

वर्षेश की भाँति मासेश का निर्णय करते समय निम्नलिखित छः अधिकारियों को ध्यान में रखना चाहिए :-

१. मास लग्न पति
२. मुन्थाधिपति (मुन्था प्रतिमास २॥ अंश आगे बढ़ती है)
३. जन्म लग्न का स्वामी
४. त्रिराशि पति
५. दिन में मास प्रवेश हो तो सूर्याधिष्ठित राशि का स्वामी एवं रात्री में मास प्रवेश हो तो चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी
६. वर्ष लग्न का स्वामी।

उपरोक्त छः ग्रहों में जो सर्वाधिक बलवान होकर मास लग्न को देखता हो, वही मासाधिपति होता है। इस मास स्वामी के शुभाशुभ के अनुसार ही मास फल स्पष्ट करना चाहिए।[2]

मास फल –

मास प्रवेश कुण्डली का फलादेश भी वर्ष कुण्डली के फलादेश की भाँति ही अनुशीलन करना चाहिए।

जब वर्ष लग्नेश, मासेश, मुंथेश व लग्नेश बलवान होकर केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) तथा त्रिकोण (५/९) और एकादश स्थान, इन में से किसी स्थान में स्थित हों तो वे मनुष्यों को आरोग्यता, शत्रुक्षय, राज्यलाभ, धनलाभ, मान-सम्मान, और यश, कीर्त प्रदान करते हैं। और मास लग्न का नवांशेश यदि मास लग्न का स्वामी, तथा नवांश स्वामी के साथ मित्रता करता हुआ, दिखता हो अथवा युक्त हो और उन दोनों स्वामियों को चन्द्रमा मित्रदृष्टि से देखे तो उस मास में नाना प्रकार का सुख मिलता है और शरीर में निरोग्यता रहती है। इस प्रकार मास फल तभी तक होता है। जब तक यह योग रहता है। उसके बाद राशि संचार क्रम से शुभाशुभ फल होता है।[3]

---

1. (क) एकैकराशिवृद्धया चेत्तुल्यांशाद्यैर्यदा रविः।
तदा मास प्रवेशो द्यूप्रवेशश्चेत्कलासमः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ४, पृ॰ १५३, श्लो॰ ६)
(ख) एकैभान्वितजनुर्भव भानु तुल्ये भानौऽभवत्स्फुट तरः खलुमास वेशः।
एकैकभाग युत भानु समान भागैः गस्नप्रवृक्ति रथतन्नयनं बदामः।। (वर्षपत्रीदीपक, श्लो॰ ८४)
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, अ॰ ४, पृ॰ ३९२

2. (क) मास प्रवेशकाले ज्ञो ग्रहान्भावांश्च साधयेत्। तत्र मासतनोर्नाथो मुथरा जन्मपस्तथा।।
त्रिराशियो दिननिशो रवीन्दुभपतिस्तथा। अब्दप्रवेश लग्नेश एषां वीर्याधिकस्तनुम्।।
पश्यन्मासपतिर्ज्ञेयस्तनो वाच्यं शुभाऽशुभम्।
अपरे मासलग्नेशं मासाधिपतिमूचिरे।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ २३८, श्लो॰ १, २, ३)

3. (क) केन्द्रत्रिकोणायगां तास्तु लग्नमासाऽब्दपा वीर्ययुतानरांणाम्।
नैरूज्यशत्रुक्षयराज्यलाभमानोदयात्वद्भुतकीर्तदाः स्युः।।
लग्नांशाधिपर्तिवलग्नपनवांशेशेन मैत्रीदृशा दृष्टो वा सहितः शशी च यदि तौ मैत्रीदृशाऽऽलोकते।
तस्मिन्मसि तनौ सुखं बहुविधं नैरूज्यमित्थं फलं तावद्यावदिमे स्युरित्थमथ तान् संचार्य वाच्यं फलम्।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ८, श्लो॰ ११, ५)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी,, पृ॰ १०९
(ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्री माली, पृ॰ १०३, १०४

मास अनिष्ट फल –

यदि लग्नेश और लग्नेशांशेश दोनों परस्पर शत्रुदृष्टि से देखते हों और चन्द्रमा भी उन दोनों को शत्रुदृष्टि से देखता हो तो मनोदुःख देते हुए रोग, परेशानी देते हैं। यदि पूर्वोक्त दो स्वामियों के बीच में कोई एक नीच राशि को प्राप्त हो अथवा अस्त हो तो पहले वह कष्ट और पीछे से सौख्य देता है। वे दोनों नीच राशि में स्थित हों व अस्तङ्गत हों अथवा एक नीच राशि में स्थित हों व अस्तङ्गत हो तो मृत्यु अथवा मृत्यु समान कष्ट होता है।

यदि मासपति, वर्ष पति, वर्ष लग्न पति और मास मुन्थापति ये चारों ही ग्रह पाप ग्रहों से युक्त होकर यदि छठें, आठवें स्थान में हों और चारों को पापग्रह शत्रुदृष्टि से देख रहे हों तो उस मास में विशेष कष्ट, परेशानी, व्याधि तथा शत्रु भय होता है।[1]

मास तथा लग्न सम्बन्धी शुभाशुभ फल –

मास लग्न कुण्डली में जिस भाव के नवांश का स्वामी अपने स्वामी के नावांश का स्वामी अपने स्वामी के नवांश स्वामी द्वारा मित्रदृष्टि से देखा जाता हो अथवा युक्त हो और वही चन्द्रमा भी यदि भाव नवांश स्वामी और भावेशनवांश स्वामी को मित्रदृष्टि से देखे तो उस भाव से उत्पन्न सुख उसी महीने में होता है। यदि इसके विपरीत हो तो विपरीत फल होता है और नीच, अस्त आदि का फल लग्न के समान ही होता है। जैसे भाव नवांशेश, भावेश का नवांशेश इन दोनों में से एक भी यदि नीच राशि में हो, एक शुभ हो अथवा एक अस्तङ्गत हो और एक शुभ हो तो उस भाव सम्बन्धी कष्ट को करने के बाद पीछे सुख करता है। दोनों नीचास्तादि में हों तो उस भाव में उत्पन्न कष्ट देते हैं।[2]

मास में भावों का सौख्य वर्णन –

वर्ष लग्नेश, मास लग्नेश, वर्षेश और मास लग्न नवांशेश ये चारों जिस किसी भाव अथवा भावेश तथा नवांशेश के द्वारा मित्रदृष्टि से देखे जाते हों अथवा युक्त हों तो उस भाव का सौख्य होता है। यदि अनिष्ट न हो तो तभी अच्छा फल होता है अन्यथा शुभ फल में न्यूनता आ जाती है और यदि बारहवें, छठें तथा आठवें इन भावों के नवांश स्वामी यदि निर्बल हों तो शुभ फल के देने वाले होते हैं। इनसे शेष भावों के नवांश स्वामी यदि बलिष्ठ हों तो शुभफल देने वाले होते हैं। अन्यथा उल्टा फल होता है।[3]

---

1. (क) तौ चेच्छत्रुदृशा मिथश्च शशिना दृष्टौ मनोदुःखदौ रोगाधिक्यकरौच कश्चिदनयोर्नीचोऽस्तगो वा यदि।
कष्टात्सौख्यमिह द्वयं यदि पुनर्नीचास्तगं स्यान्मृतिः सूत्यब्दोद्भवरिष्टतो मृतिसमं स्यादन्यथेत्यूचिरे।।
लग्नेशमासेशसमेशमुन्था धीशाः षडष्टोपगताः सपापाः।
दृष्टाः खलः शत्रुदृशाऽत्र मासे व्याध्यादिद्विड्भयदुःखदाः स्युः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ श्लो॰ ६, १०)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १०९
(ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ १०३, १०४
2. (क) भावांशाधिपतिः स्वभावपनवांशेशेन मैत्रीदृशा दृष्टो वा सहितः शशी च यदि तौ मैत्रीदृशाऽऽलोकते।
भावांशाधिपतिः ... कीर्ततं नीचास्तादि फलं च लग्नवदिदं विद्वद्भिरूह्यं धिया।।
तदभावोत्थसुखं विलोक्यमथवाद्वयत्यासतः
(ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ श्लो॰ ६)
(ख) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्री माली, पृ॰ १०४
3. (क) लग्नेशमासेशसमेश्वरांशनाथा यदंशाधिपमित्रदृष्टया।
दृष्टा युवा वा शशिना च तत्तद्भावोत्थसौख्याय न चेदनिष्टम्।
निर्बला व्ययषष्ठांशपाः सत्फलदायकाः।
अन्ये सबीर्याः शुभदा व्यत्यये व्यत्ययः स्मृतः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ श्लो॰ ८, ९)
(ख) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ १०४

दिन प्रवेश फल साधन :-

जिस प्रकार वर्ष एवं मास कुण्डली बनती है, उसी प्रकार दिन प्रवेश की कुण्डली भी बनाई जाती है, जिससे प्रत्येक दिन का शुभाशुभ ज्ञान किया जाता है। वर्ष प्रवेश समय के सूर्य स्पष्ट के अंशकला, विकला के समान ही प्रथम दिन प्रवेश काल होगा। अतएव प्रथम वर्षेष्ट ही प्रथम दिन की कुण्डली का इष्ट होगा। दूसरे दिन की कुण्डली तैयार करने के लिए वर्षेष्ट सूर्य के अंशों में १ जोड़ देने से दूसरे दिन प्रवेश कालिक सूर्य स्पष्ट प्राप्त हो जायेगा। इसी प्रकार प्रतिदिन १ कला जोड़ते जाने से प्रतिदिन का प्रवेश कालिक सूर्य स्पष्ट होगा। दूसरे दिन के प्रवेश का इष्ट (दिनेष्ट) जानने की गणित प्रक्रिया द्वितीय मास प्रवेश लग्न की भाँति ही की जाती है। तदुपरांत इस समय के ग्रह स्पष्ट भाव स्पष्ट करके उस दिन प्रवेश में चन्द्रमा तथा लग्न के नवांशों से शुभाशुभ फलादेश का निर्णय पंड़ितों को कहना चाहिए।[1]

दिनेश का निर्णय :-

दिनेश का निर्णय भी मासेश एवं वर्षेश की भाँति ही किया जाता है - मुन्थेश, जन्मलग्नेश, त्रिराशिश और दिनरात्रीश ये चार और दिनलग्नेश, मासलग्नेश तथा वर्षलग्नेश, इनमें जो बलवान् होकर दिन लग्न को देखता हो तो उसी को दिनेश अर्थात् दिन का स्वामी कहना चाहिए।[2]

दिन प्रवेश के समय शुभाशुभ फल :-

यदि दिनेश, वर्षेश, मासेश, मुंथेश, शुभ ग्रहों से बली होकर चन्द्रमा तथा लग्नेश त्रिकोण (५/९) या केन्द्र (१, ४, ७, १०) तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित हों और पापग्रह तीसरे, छठें तथा ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठे हों तो दिन में विलास, मान, धन और यश इनसे युक्त सुख प्रदान करते हैं।

इसी प्रकार यदि दिनेश, वर्षेश, मासेश तथा मुन्थेश ये चारों पापग्रहों से युक्त होकर छठे, आठवें और बारहवें इनमें से किसी स्थान में बैठें हों तो वे रोग देते हुए मान तथा यश का नाश करते हैं, अर्थात् उस दिन स्वास्थ खराब, धनहानि व चिन्ता रहती है अतः वह दिन खराब गुज़ेरता है। उक्त चारों केन्द्र या त्रिकोण तथा ग्यारहवें, इनमें से किसी स्थान में स्थित हों तो सुख मिलता है अर्थात् दिन अच्छा गुज़रता है।[3]

---

1. (क) दिनेशं दिनलग्नेशं तथा प्रोर्चुवचक्षणाः। मासघस्नेशयोर्वाच्यं फलं वर्षेशवद् बुधैः।।
दिनृवेशकालेऽपि खेटान्भावांश्च साधयेत्। चन्द्रलग्नांशकाभ्यां तु फलं तत्र वदेद बुधः।।
(ता॰ नी॰, अ॰ ८, श्लो॰ १४)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११०
(ग) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ११०
(घ) भारतीय कुण्डली विज्ञान, पृ॰ २२, भा॰ कुं॰ वि॰ भाग-३
2. (क) चतुष्कमिन्थिहेशादि दिनमासाब्दलग्नपाः।
एषां बली तनुं पश्यन् दिनेशः परिकीर्तितः।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ २४१, श्लो॰ १५)
(ख) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ११०
(ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११०
3. (क) त्रिकोणकेन्द्रायगताः शुभाश्चेच्चन्द्रात्तनोर्वा बलिनः खलास्तु।
षट्त्र्यायगास्तत्र दिने सुखानि विलासमानार्थयशोयुतानि।।
षडष्टरिष्फोपगता दिनाऽब्दमासेन्थिहेशाःखलखेटयुक्ताः।
गदप्रदा मानयशोहराश्च केन्द्र त्रिकोणयगताः सुखाप्त्यै।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ २४१, श्लो॰ १६, १७)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ११०

चन्द्रमा की अवस्था साधन और फल :-

चन्द्रमा की बारह अवस्थाएँ होती हैं इनको जानने के लिए दिन प्रवेश के समय स्पष्ट चन्द्रमा की राशि को छोड़कर अंशादिकों को दो से गुणाकर पाँच का भाग देने पर जो लब्ध हो उसका फल इस प्रकार होता है –

१. प्रवासावस्था में चन्द्रमा हो तो प्रवास हो २. नष्टावस्था में द्रव्य का नाश हो ३. मृतावस्था में मृत्यु हो ४. जया में जय मिले ५. हास्य में विलास, मौज-शौक ६. रतिअवस्था में रतिपर्याप्त विषयसुख मिलता है। ७. क्रीडितावस्था में विशेषसुख ८. प्रसूता अवस्था में नींद और कलह हो ९. भुक्ति अवस्था में शारीरिक कष्ट १०. ज्वर अवस्था में भय बीमारी ११. कम्पित अवस्था में ताप (ज्वर) मानसिक चिन्ता और हानि १२. तथा सुस्थितावस्था में सुख होता है। दिन प्रवेश के समय में चन्द्रमा जिस अवस्था में हो उसी अवस्था के तुल्य फल देता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।[1]

त्रिपताकी चक्र से शुभाशुभफल विचार :-

त्रिप्ताकी चक्र से ग्रहों के वेध का ज्ञान होता है। त्रिप्ताकी में १२ कोण हैं, जिनके आगे राशि अंक लिखे होते हैं। एक कोण पर जो ग्रह स्थित हो, उस रेखा के दूसरे सिरे पर जो ग्रह हो, उन दोनों ग्रहों का परस्पर वेध कहलाता है। इसमें विशेषतया चन्द्रमा को महत्ता दी गई है अर्थात् यह देखा जाता है कि चन्द्रमा का किस ग्रह से वेध है।

चन्द्रमा का यदि क्रूर ग्रह से वेध हो तो फल अशुभ होता है। इस ग्रह की दशा में अरिष्ट होगा। यदि शुभ ग्रह से वेध हो तो लाभ और सुख की प्राप्ति होगी। त्रिप्ताकी चक्र में यदि एक पापग्रह का वेध हो तो वर्ष में अरिष्ट हो, यदि दो पाप ग्रहों कावेध हो तो कष्ट और भी ज्यादा और यदि तीन पापग्रहों का वेध हो तो मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

१. चन्द्र का सूर्य से वेध हो तो मुद्दादशा में मन में अस्थिरता, चिन्ता से परेशानी, रक्तविकार, पित्तविकार, बुखार, अपव्यय, असफलता और मन में सन्ताप रहता है।
२. चन्द्र का मंगल से वेध हो तो मंगल की दशा में रक्त विकार, चित्त में व्याकुलता, शत्रुभय चोट-चपेट, शरीर-पीड़ा, मानसिक कष्ट एवं मन में उदासी रहती है।
३. चन्द्र का बुध से वेध हो तो बुध की दशा में कुटुम्भ में कलह, शत्रु से कष्ट, भाईयों से वाद-विवाद व बंटवारा होता है लेकिन धन की प्राप्ति भी होती है।
४. चन्द्र का गुरू से वेध हो तो गुरु की दशा में अनायास धन लाभ तीर्थ यात्रा शुभकार्यों में धन का व्यय, वाद-विवाद में विजय एवं मांगलिक कार्य हों या उनमें शामिल होना पड़े। उन्नति, मकान व सन्तान की प्राप्ति भी होती है।
५. चन्द्रमा का शुक्र से वेध हो तो शुक्र की दशा में शत्रु पर विजय, परीक्षा में सफलता, विद्या प्राप्ति, विलासिता में रूचि बढ़े, आलस्य वातविकार एवं जल से अरिष्ट होता है। धन लाभ

---

1. (क) दिनप्रवेशेऽस्ति विधुरवस्थायां तु यादृशी। तदवस्थातुल्यमसौ फलं दत्ते न शंशयः।।
विहाय राशिं चन्द्रस्य भागा द्विघ्नाः शरोद्धृताः। लब्धं गता अवस्थाः स्युर्भोग्यायाः फलमादिशेत्।।
प्रवासः प्रवासोपगे रात्रिनाथेऽर्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः।
मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः।।
रतौस्वाद्रतिःक्रीडितासौख्यदात्री प्रसुप्ताऽपि निद्रां कलिंदेहपीडां।
भयंतापहानी सुखं स्यातु भुक्ताज्वराकम्पिता सुस्थितासुक्रमेण।। (ता॰ नी॰, अ॰ ८, श्लो॰ २८-३१)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ १०६

और राज्य से लाभ होता है।

६. चन्द्र का शनि से वेध हो तो शनि दशा में वातविकार अपनों से विश्वास घात मिले, क्लेश, वाद-विवाद, धन-हानि और नीच लोगों का संग मिलता है।

७. चन्द्र का राहु से वेध हो तो राहु की दशा में असफलता, कठिनाईयाँ, बुरे विचार, अनेक रोग, कीर्त-क्षय, पेट दर्द, चित्त में मलिनता और अनेक कष्ट प्राप्त होते हैं।

८. चन्द्र का केतु से वेध हो तो केतु की दशा में अस्वस्थता, उदासी, उदर विकार, दुःख, चिन्ता, मन्दाग्नि मन में मलिनता, दूषित विचार और अपयश होता है।[1]

---

1. (क) स्वर्भानुविद्धे हिमगोत्वरिष्टं तापोऽर्कविद्धेरूगिनात्मजेन।।
महीजविद्धे तु शरीरपीड़ा शुभैश्चविद्धे जयसौख्यलाभः।
शुभाशुभं व्योमगवीर्यतोऽत्र फलं तु वेधस्यवदेत्सुधीमान्।।
वेधस्य चैकरेखायां राहुचन्द्रनरस्य च।
तदा कष्टं विजानीयात् तत्र वर्षेषु निश्चितम्।।

(वर्षपत्रीदीपक, पृ॰ १०७, १०८, श्लो॰ ३६, ३७)

(ख) वर्षफलविचार, डॉ॰ उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर', पृ॰ १०७
(ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल ज्योतिषी, पृ॰ ६७
(घ) वर्षफल दर्पण, डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली, पृ॰ ६७
(ङ) ता॰ नी॰, अ॰ ८, पृ॰ ३२८

षष्ठ अध्याय

प्रश्न तन्त्र

प्रश्नशास्त्र का महत्त्व :-

प्रश्नशास्त्र फलित ज्योतिष का महत्त्वपूर्ण अंग है। प्रश्नकर्त्ता की जिज्ञासा, इच्छा, उत्कंठा, शंका या चिन्ता का समाधान इस शास्त्र में जन्मपत्री आदि की लम्बी-चौड़ी गणित के बिना ही किया जाता है। तात्कालिक प्रश्नों का फल बतलाने में यह शास्त्र अपना विशेष महत्त्व रखता है।

जिस समय किसी भी कार्य के लाभालाभ, शुभाशुभ जानने के लिये कोई आवे, उस समय का इष्टकाल बनाकर प्रश्नकुण्डली ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, नवमांश कुण्डली और चलित कुण्डली बनाकर विचार करना चाहिए।

ज्योतिषी की क्षमता और लक्षण :-

सर्वप्रथम ज्योतिषी जी को स्वयं दूरदर्शी, सरस्वती देवी अथवा अपने इष्ट देव का उपासक, स्वस्थ मन और निरोगी होना चाहिए। ज्योतिषी यदि दैवबल से शुभाशुभ फल कहना चाहे तो ग्रहों के संचार से मनुष्यों का सब शुभाशुभ फल कह सकता है पर दैवज्ञ को गणित, फलित और अनेक शास्त्रों में विचारशील एवं अपने गुरु के चरण कमल के ध्यान में निष्ठ, ज्योतिषी हो तो वह अवश्य ही प्रश्न विद्या में प्रवीण (समर्थ) हो सकता है तथा ऐसे पण्डित की वाणी कभी मिथ्या नहीं हो पाती।[1]

प्रश्न पूछने का नियम :-

राजा आदि जनों अथवा प्रश्नकर्त्ता को चाहिए कि प्रश्न करने के समय शान्त चित्त और विचारशील एवं स्वच्छ हृदय युक्त दाहिने हाथ में फूल, सुवर्ण-मणि-नारिकेल फल आदि वस्तु लेकर प्रातःकाल के समय नारायण को प्रणाम करके पूर्व मुख बैठे और होराङ्गशास्त्र में कुशल और हितचिन्तक ज्योतिषी पण्डितों को बुलाकर थोड़े शब्दों में केवल एक प्रश्न करे।[2]

प्रश्नकर्ता की परीक्षा :-

कभी-कभी पृच्छक धोखा देने, उपहास करने या परीक्षा लेने के लिए भी आते हैं। अतः मूक प्रश्न का विचार करने से पूर्व प्रश्नकर्त्ता का सावधानीपूर्वक विचार कर लेना चाहिए। पण्डित को चाहिए कि वह पहले लग्नबल से प्रश्नकर्त्ता की परीक्षा करे कि यह सीधा है या कुटिल। यह परीक्षा करने के बाद प्रश्न फल कहे। लग्न बल से प्रश्नकर्त्ता के चित्त की गति और दैव (कर्मपाक) प्रकट हो जाता है। प्रश्न शास्त्र में पृच्छक का विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। विभिन्न प्रश्न ग्रन्थों में इसका निर्णय करने के लिए अनेक योग बतलाये गए हैं जैसे - प्रश्न लग्न में चन्द्रमा और शनि हो तथा कुम्भ राशि में रवि हो तथा बुध अस्त हो तो प्रश्नकर्त्ता कपट रूप से या शरारत के लिए आता है।

---

1. (क) दैवज्ञस्य हिदैवेन सदसत्फलवाञ्छया। अवश्यं गोचरे मर्त्यः सर्वः समुपनीयते।।
दशभेदग्रहगणितं जातकमबलोक्य निरवशेषमपि।
यः कथयति शुभमशुभं तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी।। (ताजिक नीलकण्ठी, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १, ४)
(ख) द्विविधगणितविद्यातत्त्वनैपुण्ययुक्तो बहुविधविषयाणां चातुरीणां घुरीणः।
गुरुचरणसरोजध्यानयोगानुरक्तो भवति यदि तदाऽसौ प्रश्नविद्याप्रवीणः।।(प्रश्नभूषणम्, संज्ञाध्याय, श्लो॰ ३)
(ग) वर्षफलचन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ १८८

2. (क) तस्मान्नृपःकुसुमरत्नफलाग्रहस्तः प्रातः प्रणम्य वरयेदपि प्राङ्मुखस्थः।
होराङ्गशास्त्र कुशलान् हितकारिणश्चसंहृत्य। दैवगणकान्सकृदेव पृच्देत्।। (ता॰ नी॰ प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३)
(ख) शान्तो विवेकी शुद्धात्मा हिरण्यमणिसत्फलैः। दैवज्ञं प्रेमभावेन सम्पूज्यार्थे निवेदयेत्।।
(प्रश्नभूषण, संज्ञाध्याय, श्लो॰ ४)

प्रश्न लग्न में स्थित चन्द्रमा को मंगल और बुध समान दृष्टि से देखते हों तो पृच्छक कपटी होता है।

प्रश्न लग्न में चन्द्रमा, केन्द्र में शनि और बुध अस्त हो तो प्रश्नकर्त्ता धूर्त होता है।

यदि लग्न में शुभ ग्रह हों तो प्रश्नकर्त्ता का चित्त सरल और यदि क्रूर ग्रह हों तो कुटिल जानें।

प्रश्न लग्न में चन्द्रमा हो तथा सूर्य, बुध एवं शनि एक साथ केन्द्र स्थान में हों तो पृच्छक धूर्त होता है।

लग्न या सप्तम स्थान अथवा लग्नेश या सप्तमेश पर गुरु और चन्द्रमा की शत्रु दृष्टि (१, ४, ७, १०) हो तो प्रश्नकर्त्ता धूर्त होता है। बुध और गुरु ये दोनों सप्तमेश को शत्रु दृष्टि से देखते हों तो प्रश्नकर्त्ता पाखण्डी होता है।

यदि प्रश्न कुण्डली में उक्त योगों में से कोई एक योग हो तो ज्योतिषी को प्रश्नकर्त्ता के साथ सावधानीपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। प्रश्न तन्त्र के प्रणेता आचार्य नीलकण्ठ ने कहा है कि क्षुद्र, पाखण्डी, धूर्त, श्रद्धाहीन एवं हंसी उड़ाने वाले किसी भी व्यक्ति के प्रश्न का विचार नहीं करना चाहिए।[1]

सरल हृदय वाला पृच्छक :-

कुछ पृच्छक श्रद्धालु, आस्थावान एवं सज्जन होते हैं ज्योतिषी का यह कर्त्तव्य है कि वह भक्त, दुःखी, म्लानमुख ऐसे लोगों के प्रश्नों का मनन कर फलादेश करे। इस विषय में निम्नलिखित योग हैं :-

१. लग्न या सप्तम में शुभ ग्रह हों अथवा लग्न या सप्तम स्थान पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो पृच्छक सरल हृदय वाला होता है।
२. चन्द्रमा और गुरु दोनों शुभ स्थान में मित्र राशि में बैठे हों तो पृच्छक श्रद्धावान होता है।
३. बुध या गुरु लग्न, सप्तम, लग्नेश या सप्तमेश को मित्र दृष्टि (३, ५, ९, ११) से देखते हों तो प्रश्नकर्त्ता सज्जन होता है।
४. चन्द्रमा और लग्नेश को बुध समदृष्टि (२, ६, ८, १२ में स्थित ग्रह) से देखता हो तो प्रश्नकर्त्ता जिज्ञासु होता है अर्थात् प्रश्नकर्त्ता को सरल स्वभाव का जानना चाहिए, जो ज्योतिषी अच्छे प्रकार से शास्त्रानुसार लग्न को विचार कर केवल एक ही प्रश्न का उत्तर कहता है, उसकी वाणी कभी मिथ्या नहीं होती।[2]

अधिक प्रश्नों में उत्तर देने की विधि :-

यदि प्रश्न करने वाला एक ही समय में बहुत से प्रश्न कर डाले तो उसकी विधि शास्त्रानुसार इस प्रकार है —

---

1. (क) प्रश्नलग्नोपगौ चन्द्रमन्दौ यदा वासरेशो घटेरश्मिहीनो बुधः।
पृच्छकस्त्वागतो दुष्टभावादसौ प्रश्नमित्थं विचिन्त्यात्रधीरो भवेत्।। (प्रश्नभूषण, सर्वप्रश्नाध्याय, श्लो॰ २)
(ख) पृच्छालग्ने यदि चन्द्रशनी स्यातां तथाकुम्भेरविः बुधोऽस्तमितश्च तदा ज्ञेयमपं पृच्छकः, कपटतयाऽऽगतोऽस्ति, अन्यथा सत्यतये। (मूक प्रश्न विचार, पृ॰ ३२)
(ग) ऋजुरयमनृजुर्वाऽयं प्रष्टा पूर्व परीक्ष्य लग्नबलात्। गणकेन फलं वाच्यं दैवं तच्चित्तगं स्फुरति।।
लग्नस्थे शशिनी शनौ केन्द्रस्थे ज्ञे दिःशरश्मिगते।द भौमज्ञयो समदृशा लग्नगचन्द्रेऽनृजुः प्रष्टा।।
लग्ने शुभग्रहयुते सरलः क्रूरान्निवते भवेत्कटिलः। क्षुद्रपाखण्डधूर्तेषु श्रद्धा हीनोपहासके।
ज्ञानं न तथ्यतामेति यदि शम्भूः स्वयं वदेत्।। (ताजिक नीलकण्ठी, प्रश्नतन्त्र, श्लोक ७, ८, ५)
(घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल, ज्योतिषी, पृ॰ १८८
2. (क) भक्तार्तदीनवदने दैवज्ञो न दिशेद्यदि। विफलं भवति ज्ञानं तस्मात्तेभ्यः सदा भवेत्।।
लग्नेऽस्ते सौम्यदृशा विधुगुरुदृष्टया च सरलोऽयम। सम्यग्विचार्य लग्नं बूयात् प्रश्नं सकृद्यथाशास्त्रम्।
यस्त्वेकं ब्रूतेऽसौ तस्य न मिथ्याभवेद्वाणी।। (ताजिकनीलकण्ठी, प्रश्नतन्त्र, श्लोक ६, १०, ११)
(ख) मूक प्रश्नविचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ३४

ज्योतिषी को चाहिए कि हमारा पहला प्रश्न लग्न से चन्द्रमा की राशि से दूसरे प्रश्न का उत्तर, तीसरा सूर्य के स्थान से, चौथा बृहस्पति के स्थान से, पाँचवाँ प्रश्न बुध और शुक्र इनमें से जो बली हो उससे कहना चाहिए प्रश्न का उत्तर लग्न राशि अनुसार धातु, रूप, रंग, आकार तथा गुण आदि के प्रभाव से प्रश्न का शुभाशुभ फल कहना चाहिए।[1]

लग्न से विचारणीय बातें :-

सुख, आयु अवस्था, जाति, आरोग्यता, शरीर के लक्षण, गुण, क्लेश, स्वरूप, रूप, रंग आदि इन सबका लग्न से विचार करना चाहिए।[2]

धनभाव से विचारणीय बातें :-

मोती, माणिक, रत्न, धातु, धन, वस्त्र, अस्त्र, अश्व, कर्म तथा मार्ग सम्बन्धी कार्य और कोष आदि का विचार धन भाव से होता है।[3]

तृतीय भाव से विचारणीय बातें :-

बहन, भाई, सेवक (नौकर) और सेवाकर्म, व्यापारादि कर्म, साहस, पराक्रम इन सब बातों को विद्वान तीसरे घर से विचारें।[4]

चतुर्थ भाव से विचारणीय बातें :-

बगीचा, कुआँ, तालाब आदि जलाशय, खेती (कृषि), औषधी, निधि (खज़ाना), कोष और कन्दरादिक (गुफा सूरंग) आदि में प्रवेश इनका निरीक्षण विद्वान चौथे भाव से करें।[5]

---

1. (क) बहूनि यदि प्रश्नानि युगपद्यदि पृच्छति। प्रष्टा तेषां विधिं वक्ष्ये शस्त्रतो लोकतुष्टये।।
आदिमं लग्नतो ज्ञानं चन्द्रस्थानाद् द्वितीयकम्। सूर्यसथिनात्ततृतीयं स्याच्चतुर्थं जीवगृहाद भवेत्।।
बुधभृग्वोर्बली यः स्यात्तद्गृहात्पञ्चमं पुनः। राश्यनुरूपं कथयेत्संज्ञाध्यायोक्तवद् बुधः।।
(ताजिकनीलकण्ठी, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १२, १३, १४)
(ख) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ १८८
2. (क) सौख्यमायुर्वयो जातिरारोग्यं लक्षणं गुणम्।
क्लेशाकृति रूपवर्णस्तानोश्चिन्त्या विचक्षणैः।। (ताजिकनीलकण्ठी, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३३)
(ख) रूपलक्षणवर्णानां कलेशदोषसुखायुषाम्।
वयः प्रमाणजातीनां तनुस्थानान्निरीक्षयेत्।। (भुवन दीपक, श्लो॰ ४३)
(ग) स्वरूपलक्षणं चापि वर्णभेदं सुखासुखम्।
प्रश्नकुर्तुर्वयोमानं लग्नात्सर्वं विचिन्तयेत्।। (प्रश्नभूषण, संज्ञाध्याय, श्लो॰ ७)
(घ) सुखानि दुखान्यपि साहसं च लग्ने विलारेक्यं। (वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ २५)
3. (क) मुक्ताफलं च माणिक्यं रत्नधातुधनाम्बरम्।
हयकार्याध्निविज्ञानं वित्तस्थानाद्विलोकयेत्।। (ता॰ नीं॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३४)
(ख) मणिमुक्ताफलं स्वर्णं रत्नधातुकदम्बकम्।
क्रयाणकार्धज्ञानानि धनस्थानान्निरीक्षयेत्।। (भुवनदीपक, श्लो॰ ४४)
(ग) रत्नकाञ्चनमुक्तानां लाभालाभौ विचक्षणः।
धातूनाञ्चधनस्थानाच्चिन्तयेत्क्रयविक्रयो।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ ८)
4. (क) भगिनीभ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि।
कुर्वीत वीक्षणं विद्वान् सम्यग्दुश्चिक्यवेश्मतः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३५)
(ख) पराक्रमं सहोत्थानां सुखं साहसकर्मणाम्।
दासानां च भगिन्यादेस्तृतीयात्परिचिन्तयेत्।। (प्र॰ भू॰, श्लो॰ ९)
5. (क) वाटिकाख्यकूपक्षेत्रमहौषधिनिधीनपि।
बिवरादिप्रवेशं च पश्येत्पातालतो बुधः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३६)
(ख) मित्रालयग्रामलाभो वाहनानां सुखं सुखात्।
मातापित्रोःसुखं क्षेत्रवाटिकादि सुखं तथा। (प्र॰ भू॰, श्लो॰ १०)
(ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ४६
(घ) सुहृद् गृहग्राम चतुष्पदो वा क्षेत्राद्यथालोकनायकं चतुर्थे। (वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ २६)

पंचम स्थान से विचारणीय बातें :-

पंचम भाव से गर्भ स्थिति, सन्तान, विनय, शिष्य, मन्त्र साधन, आध्यात्मविद्या, बुद्धि बढ़ाने का प्रबन्ध, ग्रन्थ रचना, इन सब बातों का विचार पाँचवें स्थान से करें।[1]

षष्ठ भाव द्वारा विचारणीय बातें :-

चोरी से भय, शत्रुओं से लड़ाई, गाय, भैंस, गधा, ऊँट तथा हिंसा आदि क्रूर कर्म, मामा का पक्ष, रोग और सेवक, व्रण आदि इन सबका विचार छठे स्थान से करें।[2]

सातवें भाव से विचारणीय बातें :-

इस भाव से व्यापार, लेन-देन, व्यवसाय का चुनाव, दूसरे के साथ विवाद एवं मिलाप, आवागमन (आना-जाना), स्त्री सम्बन्धी विचार, प्रणय सम्बन्ध आदि यह सब बातों का विचार बुद्धिमान सातवें घर से करें।[3]

अष्टम भाव से विचारने योग्य बातें :-

नदी में तैरना, यात्रा में आपत्ति, मार्ग सम्बन्धी विचार, विषम स्थान, किला, शत्रु द्वारा भय, चोर आदि दुष्ट जन, युद्ध, रोग और गृहच्छिद्र आदि का विचार करना हो तो सब आठवें स्थान से करें।[4]

नवम भाव से विचारणीय बातें :-

यह भाव धर्मभाव कहलाता है। अतः जनकल्याण के लिए बनाये गये कुआँ, बावली, तालाब, घाट एवं प्याऊ आदि। गौशाला, देव मन्दिर, तीर्थ यात्रा, मठ और धर्मक कार्यों का विचार नवम भाव से किया जाता है।[5]

---

1. (क) गर्भापत्यनयानां वै मन्त्रसन्धानयोस्तथा।
 बुद्धिप्रधानशास्त्राणां विचारः पञ्चमालयात्।। (प्र॰ भू॰, श्लो॰ ११)
 (ख) गर्भापत्यविनयानां मन्त्रसन्धानयोरपि।
 विद्याबुद्धिप्रबन्धानां सुतस्थाने विनिर्णयः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३७)
 (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ४९
 (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्नालाल, पृ॰ २६
2. (क) चौरभीरिसङ्ग्रामखरोष्ट्रक्रूरकर्मणाम्।
 मातुलातङ्कभृत्यानांरिपुस्थानाद्विनिर्णयः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३८)
 (ख) मातुलानां रिपुणां च महिष्याः क्रूरकर्मणा।
 रोगातङ्कव्रणादीणां विचारो रिपुभावतः।। (प्र॰ भू॰, श्लो॰ १२)
 (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ४८
 (घ) वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ २६
3. (क) वाणिज्यं व्यवहारं च विवादं च समं परैः।
 गमागमकलत्राणि पश्येत्प्राज्ञः कलत्रतः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३९)
 (ख) परैः समं विवादञ्च वाणिज्यं व्यसनं तथा।
 गमागमौ कलत्रञ्च चिन्तयेत्सप्तमालयात्।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ १३)
 (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ४९
4. (क) रिपुसङ्ग्रामदुष्टानां मार्मस्यापि गदस्य च।
 नद्युत्तारभयानाञ्च क्षिप्रं छिद्र विचिन्तयेत्।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ १४)
 (ख) नद्युत्तारेऽध्ववैषम्ये दुर्गे शास्त्रवसङ्कटे।
 नष्टे दुष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रे निरीक्षयेत्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४०)
 (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ५०
5. (क) वापीकूपतडागादिप्रपादेवगृहाणि च।
 दीक्षां यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निश्चिन्त्यकीर्तयेत्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४१)
 (ख) वापीकूपतडागानां निर्माणं देवताऽऽलयम्।
 यात्रादीक्षाऽध्वकम्माणि चिन्तयेन्नवमालयात्।। (प्रश्नभूषण संज्ञाध्याय, श्लो॰ १५)
 (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ५१

दशम भाव द्वारा विचारणीय बातें :-

इस भाव से राज्य, राजगद्दी, राजमुद्रा (मोहर), पुण्य, स्थान, पिता, पैतृक दायित्व, वर्षा आदि एवं आकाश सम्बन्धी बातें दशम भाव से विचारें।[1]

एकादश भाव से विचारणीय बातें :-

इस भाव से हाथी, घोड़ा, मोटर, पालकी आदि यान, वस्त्र-आभूषण, धान्य, अन्न, सुवर्ण, कन्या, विद्या और अर्थ लाभ इनका विचार ग्यारहवें स्थान से करें।[2]

द्वादश स्थान से विचारने योग्य बातें :-

यह भाव व्यय का प्रतिनिधि है। त्याग, भोगोपभोग, दूसरे से कलह, दान, इच्छित कार्य, खेती और सब प्रकार के खर्च का विचार बारहवें स्थान से करें।[3]

प्रश्न कुण्डली में भाव फल विचार :-

जिस भाव का स्वामी अपने भाव में या शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो उस भाव के फल की वृद्धि होती है। जैसे यदि प्रश्न लग्न का स्वामी नवम भाव में पड़कर लग्न भाव को पंचम (मित्र दृष्टि) से देखता हो। तो उस भाव सम्बनधी जो प्रश्न किया है उसका लाभ होता है।

इसी भान्ति जो भाव पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, उस भाव के फल की हानि होती है। शुभ एवं पापी दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त अथवा शुभ ग्रह से युक्त व क्रूर ग्रह से दृष्ट हो तो मिश्रित फल अर्थात् शुभाशुभ दोनों प्रकार के फल होंगे।

नीच व शत्रु क्षेत्रगत ग्रह भाव का नाश करता है। अपने मित्र के या उच्च ग्रह में स्थित ग्रह भाव की वृद्धि करता है।

जिस भाव से ६, ८, १२ (त्रिक) स्थानों में पाप ग्रह हों उन भावों की हानि होती है। त्रिकेश जिन भावों में हों उनकी व जो भावेश त्रिकगत हों उन भावों की हानि होती है। जिस भावसे द्वितीय, केन्द्र व त्रिकोण स्थान शुभ ग्रहों से युक्त हों व शुभ स्थानों (६, ८, १२ के अतिरिक्त) के स्वामियों से दृष्ट हो तो उसकी वृद्धि होती है। यह प्रश्न समय तथा जन्म समय से विचार करने योग्य बातें हैं।[4]

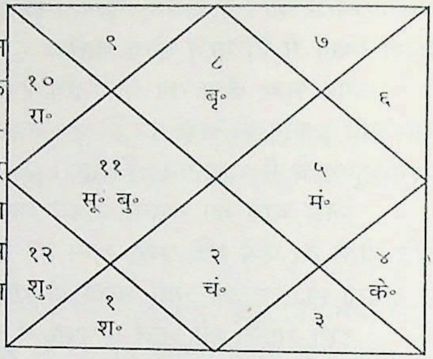
---

1. (क) राज्यं मुद्रां परं पुण्यं स्थानं तातं प्रयोजनम्।
वृष्टयादिव्योमवृत्तान्तं व्योमस्थानान्निरीक्षयेत्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४२)
(ख) पितुः सुखं तथा राज्यं व्यापारं राजकर्म च।
पुण्यं मुद्रासुखं सर्वं चिन्तयेद्दशमालयात्।। (प्रश्नभूषण, संज्ञातन्त्र, श्लो॰ १६) (ग) भुवनदीपक, श्लो॰ ५२
2. (क) गजाश्वयानवस्त्राणि सस्यकञ्चकन्यकाः।
विद्वान् विद्यार्थयोर्लाभं लक्षयेल्लाभभावतः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४३)
(ख) कन्याकाञ्चनसस्यानां वाहनानां च लाभतः।
विद्याव्यापारवित्तानां कर्त्तव्याचिन्तना बुधैः।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ १७) (ग) भुवनदीपक, श्लो॰ ५३
3. (क) विवाहत्यागभोगानां दानादिकृषिकर्म्मणाम्। व्ययं व्यये निरोधञ्च रिपूणां प्रविलोकयेत्।।(प्रश्नभूषण, श्लो॰ १८)
(ख) त्यागभोगविवादेषु दानेष्टकृषिकर्मसु।
व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वान्! व्ययं व्ययात्।।(ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰४४)(ग) भुवनदीपक,श्लो॰५४
4. (क) यो योभावः स्वामिदृष्टो युतो वा सौम्यैर्वास्यात्तस्यतस्यास्तिवृद्धिः।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानिंनिर्देष्टव्यापृच्छतो जन्मतो वा।। (ता॰ नी॰, भावप्रश्नाध्याय, श्लो॰ १)
(ख) यो यो भाव, स्वामिसौम्यैः दृष्टोयुक्तोऽयमेधते।
पापदृष्टयुतेर्नाशो मिश्रैः मिश्र फलंवदेत्।। (वर्षफल चन्द्रिका, पृ॰ १११)
(ग) यो भावः स्वस्वामिशुभैर्युक्तो दृष्टो वातस्य वृद्धिः पापैर्हानिर्मिश्रैर्मिश्रम्।।
नीचरिस्थो ग्रहो भावनाशकः। स्वसुहृततुंगस्थो भाववृद्धिकरः।।
यस्मात्त्रिके पापास्तद्भावनाशः। यद्भावेशस्त्रिके त्रिकेशो वा, यद्भावेतद्भाव विनाशः।।
यद्भावीयकेन्द्रार्थकोण स्थानानि शुभपतिःयुतानितद्भावपुष्टिःपापयुतानि चेद्धानिर्मिश्रयुतानिमिश्रम्।।
यद्भावेशोऽरिनीचास्तगः शुभैरयुतेक्षितश्चेत् तद्भावनाशः।।
यद्भावीय रन्ध्रेश सूर्यशनिगुलिकेशगुलिकांशेशानां मध्ये योऽधिकबलीतत्पाके मृतक्तिादिनाशः।।
(जातकतत्त्वम्, प्रथमविवेक (१-८))

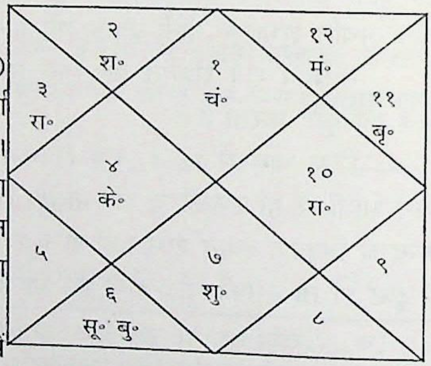
कार्यसिद्धि विचार :-

यदि प्रश्न कुण्डली में निम्नलिखित योगों में से कोई एक योग हो, तो पृच्छक को अपने पूछे गये कार्य में सफलता मिलती है- यदि लग्नेश लग्न को और कार्येश कार्य भाव को देखता हो (अथवा) लग्न स्वामी कार्य भाव को और कार्यभाव का स्वामी लग्न को देखता हो (अथवा) लग्न का स्वामी कार्यभाव के स्वामी को और कार्यभाव का स्वामी लग्न स्वामी को देखता हो और चन्द्रमा की भी दृष्टि हो तो कार्य की पूर्ण सिद्धि होती है।[1]

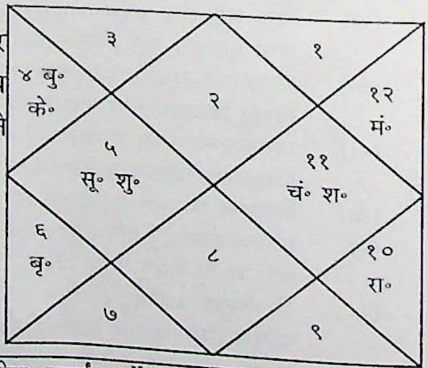
१. **उदाहरण :-** किसी प्रश्नकर्त्ता ने सन्तति सम्बन्धी प्रश्न किया। प्रश्न काल में वृश्चिक लग्न और तात्कालिक ग्रह स्थिति के आधार पर प्रश्न कुण्डी इस प्रकार है- इस कुण्डली में लग्नेश मंगल की लग्न पर और पंचमेश गुरु की कार्यभाव (पंचम) पर पूर्ण दृष्टि है तथा सप्तम स्थान में स्थित चन्द्रमा की गुरु पर दृष्टि है। इस प्रकार यहाँ उक्त योगों में से प्रथम योग पूर्णतः बनता है। अतः पृच्छक को शीघ्र सन्तति लाभ होगा।



२. एक अन्य ने विवाह का प्रश्न मेष लग्न में किया। ग्रह स्थिति के अनुसार कुण्डली बनाई गई।
इस कुण्डली में लग्नेश मंगल की कार्यभाव (सप्तम) पर पूर्ण दृष्टि है और कार्येश शुक्र की लग्न पर पूर्ण दृष्टि है तथा चन्द्रमा की भी शुक्र पर पूर्ण दृष्टि है। अतः यहाँ पूर्वोक्त योगों में "द्वितीय", योग पूर्ण रूपेण घटता है। इस स्थिति को देखकर सम्पन्न एवं कुलीन परिवार की सुन्दर कन्या से विवाह होगा यह फलादेश कहना चाहिए।



३. एक सुशिक्षित किन्तु बेरोज़गार युवक ने वृष लग्न में नौकरी का प्रश्न किया। प्रश्न कुण्डली इस प्रकार है-
इस कुण्डली में लग्नेश शुक्र और कार्येश शनि की परस्पर दृष्टि है तथा चन्द्रमा की शुक्र पर पूर्ण दृष्टि है। यहाँ तृतीय योग के अनुसार अच्छे पद पर शीघ्र सरकारी नौकरी लगने का फल कहना।



1. (क) लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम्। लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम्।।
लग्नेशः कार्येशं विलोकयेल्लग्नपतुकार्येशः। शीगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यसिद्धिः।।
(ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३, ४)

(ख) प्रश्नलग्नाधिपो लग्नगेहं यदा कार्यनाथोऽपिकार्यालयं पश्यति।
कार्यःाङ्गाधिपः कार्यपोऽङ्गतदा सर्वथाकार्यसिद्धिर्जनानां वदेत्।।
चेन्मिथो वीक्षणं लग्नकार्येशयोरात्मभावस्थयोः कार्यसिद्धिस्तदा।
पूर्णविम्बेन चन्द्रेण दृष्टाविमौ सत्त्वरं कार्यसिद्धिः प्रयासं बिना।। (प्रश्नभूषण, सर्वप्रश्नाध्याय श्लो॰ ३, ४)

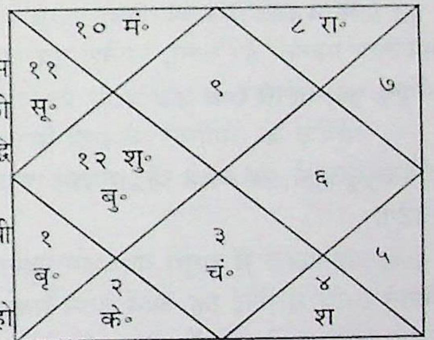
(ग) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ६०, ६१ (घ) मूक प्रश्नविचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १२०

कार्य में असफलता के योग :-

प्रश्न कुण्डली में यदि निम्नलिखित योगों में से कोई एक योग हो तो प्रश्नकर्त्ता को विचारणीय कार्य में असफलता मिलती है –

१. यदि लगनेश अथवा कार्येश कार्य स्थान को न देखें।
२. लग्नेश या कार्येश क्रूर ग्रहों से आक्रांत हों।
३. लग्न या कार्य भाव में बलवान पाप ग्रह बैठें हों।
४. लग्नेश या कार्येश निर्बल हों और इन पर पाप ग्रहों की दृष्टि हो।
५. लग्नेश या कार्येश सूर्य के साथ अस्त हों।
६. लग्नेश छठें, ८वें एवं १२वें स्थान में चन्द्रमा के साथ हो।
७. लग्न में निर्बल बुध हो तथा क्षीण चन्द्रमा दो पाप ग्रहों के मध्य हो।
८. लग्नेश एवं चन्द्रमा नीच राशि या शत्रु राशि में पाप ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो।
९. कोई भी ग्रह पापग्रह से पीड़ित पापग्रह से युक्त, पाप दृष्ट और रश्मिरहित अर्थात् अस्त हो गया हो तो वह अनिष्ट फलदायक होता है अर्थात् कार्य में असफलता देता है।[1]

कार्य सिद्धि योग :-



यदि प्रश्नकर्ता कहे कि हमारा कार्य कब होगा? इस प्रश्न काल में यदि लग्न को लग्न स्वामी और कार्यभाव को कार्यभाव का स्वामी देखता हो तो शीघ्र ही कार्य की सिद्धि होती है।

कार्य भाव का स्वामी लग्न में हो और वह लग्न स्वामी को देखता हो तो भी शीघ्र कार्यसिद्धि होगी।

लग्नेश लग्न को और कार्येश कार्यभाव को देखता हो तो जब चन्द्रमा कार्यस्थान पर आता है तब कार्य की सिद्धि होती है।[2]

उदाहरण– पदोन्नति कब होगी के प्रश्न में निम्नलिखित कुण्डली देखिये :-

इस कुण्डली में लग्नेश गुरु की लग्न पर और भाग्येश सूर्य की भाग्य पर दृष्टि है। कर्मेश बुध भी अपने स्थान को देख रहा है। किन्तु चन्द्रमा सातवें स्थान में मिथुन राशि में स्थित है। इस ग्रह स्थिति में और चन्द्रमा का छः दिन बाद सिंह राशि में संचार देखकर उसे उत्तर दिया गया कि आपकी पदोन्नति अवश्य होगी और इसका निर्णय छः दिन बाद मिलेगा।

---

1. (क) यदि लग्नपं न पश्यति कार्याधीशो विलग्नमथतस्य। कार्यस्य हानिरूक्ता लग्नमते किमपि नो वाच्यम्।।
क्रूराक्रातः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टश्च यो ग्रहः। विरश्मिमतां प्रपन्नश्च सोऽनिष्टफलदायकः।।
(ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ९, १३)
मूक प्रश्न विचार डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १२२
(ख) मूक प्रश्न विचार, डॉ॰ शुकदेवचतुर्वेदी, पृ॰ १२०
2. (क) लग्नेशो वीक्षते लग्नं कार्येशः कार्यमीक्षते। कार्यसिद्धिर्भवेदिन्दुः कार्यमेति परं यदा।।
(भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी श्लो॰ ७९)
(ख) अमुकं ममेति कार्यं कदा भविष्यत्यमुत्र पृच्छायाम्। लग्नाधिपतिः कार्य लग्नं कार्याधिपः पश्येत्।।
(ग) लग्नस्थः कार्येशः पश्यति चेल्लग्नपंतदैव भवेत्। तत्कार्यं यद्यन्यस्थितं तदा सत्वरं न स्यात्।।
पश्यति तदा च लग्नं द्रक्ष्यति चन्द्रं विलग्नपं च यदा। लग्ने कार्ये च यदा द्वयोश्च योगे तदा सिद्धिः।।
(ता॰ नी॰ भावप्रश्नाध्याय, श्लो॰ १०-१२)

सफलता एवं असफलता में तारतम्य :-

लग्न एवं लग्नेश पर शुभ या पापग्रहों की दृष्टि होने पर सफलता एवं असफलता की मात्रा का निश्चय इस प्रकार करे :-

यदि शुभग्रह लग्न को देखता हो, किन्तु लग्न स्वामी लग्न को न देखे तो कार्य में चौथाई अर्थात् २५ प्रतिशत सफलता मिलती है।

लग्नेश लग्न को तथा शुभग्रह लग्नेश को देखता हो, तो आधा अर्थात् ५० प्रतिशत सफलता मिलती है।

लग्नेश लग्न को तथा शुभग्रह लग्न एवं लग्नेश दोनों को देखता हो, तो कार्य में ७५ प्रतिशत सफलता मिलती है।

प्रश्न लग्न को लग्नेश, शुभग्रह एवं चन्द्रमा देखते हों तथा ये स्वयं पापग्रहों से दृष्ट या युत न हों, तो कार्य में पूरी-पूरी सफलता मिलती है। लग्न या लग्नेश किसी एक पर पापग्रहों की दृष्टि हो तब कार्य सिद्धि का योग होने पर कार्य में ७५ प्रतिशत सफलता मिलती है। कार्य सिद्धि का योग हो तथा लग्न या लग्नेश दो पापग्रहों से दृष्ट हों तो ५० प्रतिशत सफलता मिलती है।

कार्य सिद्धि का योग होने पर यदि लग्न और लग्नेश दोनों पापग्रहों से दृष्ट हों, तो २५ प्रतिशत सफलता मिलती है। लग्न, लग्नेश एवं चन्द्रमा तीनों पापग्रहों से दृष्ट हों तो कार्य का नाश होता है।[1]

पथिक का आगमन :-

पथिक के आगमन सम्बन्धी प्रश्न में यदि लग्नस्वामी तथा लग्न स्थित ग्रह से इत्थशाल हो तो पथिक सुख से घर आवे यदि सप्तम तथा चतुर्थ स्थान में स्थित ग्रह से इत्थशाल हो तो कष्ट से घर लौटेगा।

प्रश्नकाल में चतुर्थ वा दशम स्थान से द्वितीय स्थान में अर्थात् पञ्चम भाव व एकादश भाव में, जितने समय में कोई ग्रह आवे उतने समय में प्रवासी का आगमन होता है।

यदि लग्नेश वक्री होकर लग्न या चन्द्रमा को देखे तथा वक्री ग्रह से मुथशिल करे तो पथिक शीघ्र आता है।

यदि लग्नेश द्वादश भाव में बैठकर चन्द्रमा से इत्थशाल करे तो पथिक शीघ्र आवे। यदि लग्न से अथवा चौथे भाव से शुभग्रह दूसरे या तीसरे हों तो पथिक शीघ्र ही आता है।[2]

---

1. (क) मूक प्रश्नविचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १२४
   (ख) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ६४-६६, पृ॰ ६५
   (ग) कथयन्तिपादयोगं पश्यति सौम्यौ न लग्नपो लग्नम्। लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगाऽत्र।।
   एकः शुभोग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नं वा। पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यससिद्धौ।।
   लग्नपतौ दृष्टे सतिशुभग्रहौ द्वौ त्रयोऽथवा लग्नम्। पश्यति यदि तदानीमाहुर्योगं त्रिभागोनम्।।
   क्रूरावेक्षणवर्ज्यश्चन्द्रः सौम्याश्च खेचरा लग्नम्। लग्नेशदर्शने सति पश्यन्तः पूर्णयोगकराः।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ५-८)
2. (क) आगमने पृच्छायां लग्नेशो लग्नमध्यसंस्थेन। कृतमुथशिले समेति हि सुखमस्ततुरीयगे कष्टात्।।
   लग्नाधिपतौ वक्रे लग्नं पश्यत्यमुत्र चन्द्रे वा। वक्रगमूथशिले सति समेति पथिकः सुखं शीघ्रम्।।
   अन्त्यस्थितलग्नपतौ शशिना कृतमुथशिले द्रतमुपैति। लग्नांद्वाऽपि चतुर्थाच्छुभा द्वितीयतृतीयगा वाऽपि।।
   कथयन्ति नष्टलाभं प्रवासिनश्चागमंत्वरितम्। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १, ४, ५)
   (ख) द्वितीये केन्द्रतोऽस्तोऽभ्येति यदा खेटस्तदागमः।
   आयायिसुं ग्रहं दृष्टा ब्रुयादिदमशंकितः।। (भुवनदीपक श्लो॰ १११)
   (ग) चतुर्थतो वा दशमाद्द्वितीयेऽभ्येति खेचरः।
   यावता तावता धीरः पथिकागमनं वदेत्।। (प्रश्नभूषण, पथिक गमनाध्याय, श्लो॰ २)
   (घ) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, पंचमाध्याय, पृ॰ ४३२

यदि लग्न चर राशि या चर नवांश हो और चन्द्रमा चौथे हो तो पथिक कार्य पूर्ण करके सुख पूर्वक घर आ रहा है। बृहस्पति व शुक्र अथवा चन्द्रमा यदि प्रश्न लग्न से चतुर्थ स्थान में हो तो पथिक को घर में प्राप्त समझना चाहिए।

यदि सप्तम स्थान को छोड़कर केन्द्र स्थानों से दूसरे स्थान में चन्द्रमा आने पर प्रवासी आता है। प्रश्न लग्न से द्वितीय स्थन व तृतीय स्थान में यदि गुरु और शुक्र रहें तो निःसन्देह प्रवासी को घर में प्राप्त समझना चाहिये।

यदि पापग्रह छठे, तीसरे अथवा ग्यारहवें स्थान में हों और शुभग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण में हों तो पथिक दूर भी हो तो सुख पूर्वक घर पहुँच जाता है। यदि केन्द्रस्थान में शुभग्रह हों और पापग्रह का अभाव हो तथा अष्टम स्थान में चन्द्रमा बैठा हो तो पथिक सुखपूर्वक लौट आता है।[1]

प्रवासी मार्ग में :–

यदि प्रश्न लग्न से चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो और नवमेश किसी राशि के उत्तरार्द्ध (१५ अंश से अधिक) में हो तो प्रवासी लौटते समय मार्ग में होता है।

यदि लग्नेश अष्टम अथवा द्वितीय स्थान में स्थित होता हुआ दशम स्थान में स्थित किसी ग्रह से इत्थशाल करे तो भी पथिक मार्ग में रहे।

यदि लग्नेश केन्द्र में स्थित दशमेश से इत्थशाल करता हो तो भी पथिक मार्ग में है, ऐसा कहें।

प्रश्न लग्न से सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो तो प्रवासी मार्ग में होता है।

प्रश्नलग्न समय यदि लग्नेश अन्यत्र रहकर लग्न को न देखे तो पथिक कदापि नहीं आयेगा ऐसा कहें।

प्रवासी की मृत्यु के योग :–

प्रश्नकुण्डली में यदि चन्द्रमा और लग्नेश षष्ठस्थान और सप्तम स्थान में वर्तमान रहकर अष्टमेश से युक्त रहें तो निश्चित रूप से पथिक का मरण होता है।

यदि शुभग्रह त्रिक स्थान में हों और निर्बल पापग्रहों से दृष्ट हों तथा सूर्य और चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हों। लग्नेश और चन्द्रमा छठे या आठवें स्थान में अष्टमेश से युक्त हों तो भी मरण होता है। पापग्रह पृष्ठोदय (१, २, ४, ९, १०) राशियों के केन्द्र, त्रिकोण, षष्ठ या अष्टम में हों तथा इन पर शुभग्रहों की दृष्टि नहीं हों।

प्रश्न लग्न में पृष्ठोदय राशि हो और उस पर पापीग्रहों की दृष्टि हो तो भी यात्री की मृत्यु होती है।[2]

---

1. (क) पापैःषष्ठत्रिलाभस्थैःकण्टकस्थैः शुभग्रहैः। प्रवासीसुखमायाति दूरस्थोऽपि सुनिश्चितम्।।
कण्टकैः सौम्यसंयुक्तैः पापग्रहविर्वजतैः।
प्रवासी सुखमायाति निधनस्थे सुधाकरे।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ९, १५)
(ख) चर लग्ने चरांशे च चतुर्थे चन्द्रमाः स्थितः। ब्रूते प्रवासिनं व्यकतं समायातं स्ववेश्मनि।।
द्वितीयमायियासुश्च चन्द्रे केन्द्राद्विशेषतः।
पथिकागमनं ब्रूते मुक्तवा सप्तमकेन्द्रकम्।। (भुवनदीपक, श्लो॰ ११२, ११४)
(ग) चराङ्गे चरभागेऽपि चतुर्थे यदि चन्द्राः। आयातितत्क्षणादेव प्रवासी पत्रिकाऽपि च।।
जीवो वा भार्गवो वाऽपि चन्द्रो वा सुखवेश्मनि।
पथिकं गृहमायन्तं जानीयात्प्रश्नवित्तदा।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ ५, ६)

2. (क) रन्ध्रेऽथ धने तस्मिन्नाकाशस्थेनमुथशिलेऽप्येवम्।
केन्द्रस्थितेत्थशाले लग्नेक्षणवर्ज्यमेति न कदापि।। ता॰ नी॰ विशेषप्रश्नाध्याय, श्लो॰ ३)
(ख) इन्दुः सप्तमगो लग्नात्पथिकं वकित मार्गगम्।
मार्गाधिपश्च राश्यर्द्धात्परभागे व्यवस्थितः।। (भुवनदीपक, श्लो॰ ११३)
(ग) सप्तमस्थो यदा चन्द्रः पथिकः पथि वर्त्तते।
मार्गाधिपो वा राश्यर्द्धात्परतो यदि संस्थितः।। (प्रश्नभूषण, श्लो॰ ४, पथिक गमनाध्यायः)

प्रवासी को कष्ट का योग :-

यदि प्रश्न काल में पापग्रह तीसरे स्थान में हों तो पथिक को एक देश से अन्य देश को चला गया समझें। यदि केन्द्र में क्रूरग्रह बैठे हों तो पथिक को चोरों से लूटा गया जानें।[1]

प्रश्न लग्न में पृष्ठोदय (१, २, ४, ९, १०) राशि हो उस पर पापग्रह की दृष्टि हो या पापग्रह केन्द्र में हो तो प्रवासी दुःख से पीड़ित होता है। यदि अष्टम स्थान में सूर्य और मंगल हों तो मार्ग में चोर आदि का भय होता है। यदि सूर्य सिंह राशि में हो तथा चन्द्रमा या मंगल अष्टम स्थान में हो तो शस्त्र भय होता है। यदि नवम स्थान में शनि शुभग्रह से दृष्ट हो तो प्रवासी रोगी होता है।

यदि केन्द्र तथा त्रिकोण में और पापराशि में पापग्रह से दृष्ट होकर शनि बैठा हो तो पथिक को बन्धन में पड़ा हुआ जानें।

यदि केन्द्र में पापग्रह शुभग्रहों की दृष्टि नहीं हो तो प्रवासी बन्धन में होता है।[2]

शत्रु गमन निवृत्ति योग :-

यदि प्रश्न लग्न से चौथे मीन, वृश्चिक, कुम्भ और कर्क राशियाँ हों तो शत्रु की पराजय होती है। यदि चतुर्थ भाव में मेष, वृष वा सिंह राशि हो तो शत्रु स्वयं भाग जाता है। यदि पापग्रह षष्ठ में बैठा हो तो शत्रु मार्ग ही से लौट जाय।

यदि चतुर्थ भाव में पापग्रह हों तो सामने पहुँचा हुआ भी शत्रु मार खाकर हट जाता है।

लग्न या चतुर्थ भाव में मेष, सिंह, धनु या वृष राशि ग्रह सहित या ग्रह रहित हो तो शत्रु मार्ग से लौट जाता है।

यदि लग्न द्विस्वभाव (३, ६, ९, १२) राशि का हो और चन्द्रमा चर (१, ४, ७, १०) राशि का हो तो शत्रु सेना दूर आकर लौट जाती है। चतुर्थ भाव में सूर्य और चन्द्र हों तो शत्रु की सेना नहीं आती है। यदि चतुर्थभाव में गुरु, बुध और शुक्र हो तो शत्रु की सेना शीघ्र आती है।[3]

---

1. (क) पृष्ठोदये पापदृष्टे शुभदृग्वर्जते बुधः।
   लग्नात्षष्ठे यदा पापा यातुश्च निधनं वदेत।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ७)
   (ख) शशाङ्क लग्नपौ षष्ठे सप्तमे वा युतौ यदि।
   अष्टमेशेन कुरूतो मरणं पथिकस्य वै।। (प्रश्नभूषण, पथिकगमनाध्याय, श्लो॰ ११)
   (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ११७
2. (क) यदा क्रूरास्तृतीयस्था देशाद्देशान्तरं गतः। चौरणैव हतस्वश्च पथिकः केन्द्रगा यदि।।
   चतुरस्रे त्रिकोणे वा पापगेहस्थितः शनिः। पापदृष्टश्च नियतं बन्धनं यातुरादिशेत्।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ८, १०)
   (ख) पृष्ठोदये यदा लग्ने सौम्यादृष्टे खलेक्षिते। प्रवासी दुःखसन्तप्तः पापैर्वा केन्द्रगैरपि।।
   सूर्यऽष्टमे कुजे वाऽपि पथि चौरभयं वदेत्। यावन्तो निधने खेटाश्चौरास्तत्सङ्ख्यकाः स्मृताः।।
   सिंहे रविः शशी भौमो निधने शनिनेक्षितः। शस्त्रकोपं वदेत्तत्र यदि लग्ने शुभो न हि।।
   (प्रश्नभूषण, पथिकगमनाध्याय, श्लो॰ १२-१४)
   (ग) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ११७
3. (क) मार्गान्निवर्तते शत्रुः पापैः शत्रुगृहाश्रितैः। चतुर्थगैरपि प्राप्तः शत्रुर्भग्नो निवर्तते।।
   झषालिकुम्भकर्कटा रसातले यदा स्थिताः। रिपोः पराजयस्तदा चतुष्पदैः पलायनम्।।
   मेषधनुः सिंहवृषा यद्युदयस्था भवन्ति हिबुके वा। शत्रुर्नवर्ततेऽत्र ग्रहसहिता वा वियुक्ता वा।।
   नागच्छति परचक्रं यदार्कचन्द्रौ चतुर्थभवनंस्थौ। गुरु बुधशुक्रा हिबुके यदा तदा शीघ्रमायाति।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ३६, ३३)
   (ख) (प्रश्नभूषण, शत्रु गमनागमन प्रश्नाध्याय, श्लो॰ १, ३)

जय-पराजय योग :-

जय-पराजय सम्बन्धि प्रश्न में शुक्र, गुरु तथा बुध यदि एक राशि में बल युक्त होकर लग्न में हों अथवा गुरु, शुक्र इन दोनों में से एक भी बली होकर लग्न में हो तो संग्राम में स्थायी राजा चढ़कर आने वाले राजा को पराजित करता है। यदि सूर्य चन्द्रमा, मंगल, शनि तथा राहु ये सब ग्रह अथवा इनमें से चार या तीन ग्रह लग्न में हों तो स्थायी राजा को यायी (आने वाला) राजा पराजित करता है। शुक्र, चन्द्रमा, बुध तथा गुरु ये सब ग्रह बलवान होकर अथवा इनमें से तीनग्रह सप्तम स्थान में हों तो यायी राजा स्थायी राजा को शीघ्र नष्ट कर देता है और चौथे स्थान में हों तो शीघ्र सन्धि हो जाती है। यदि बली पापीग्रह प्रश्न लग्न में हो तो वादी (मुद्दई) की जय होती है। यदि सप्तम में पापग्रह हो तो प्रतिवादी (स्थायी राजा) की जय होती है।[1]

वादी प्रतिवादी में सन्धि योग :-

प्रश्न कुण्डली में लग्नेश और सप्तमेश इन दोनों के मध्य में जो ग्रह अपनी राशि वा उच्च में हो तो उसके पक्ष में मनुष्यों से सन्धि (मित्रता) कराता है यदि बुध स्वगृहोच्च हो तो लेखक या पंडितों द्वारा मैत्री हो, सूर्य, चन्द्र उच्च से राजा द्वारा, मंगल से सेनापति द्वारा, बुध युवराज, बृहस्पति, शुक्र मन्त्री, शनि दास इस प्रकार इनके सम्बन्ध से सन्धि होती है।

शुभग्रह (च, बु, बृ, शु) चौथे स्थान में हों तो शीघ्र सन्धि होती है।

लग्नस्थ पापग्रह बलवान हों तो यायी की जय होती है, सप्तमस्थ पापग्रह बलवान हो तो स्थाई (मुदालह) की जय होती है। यदि वे दोनों सप्तमस्थ और लग्नस्थ, पापग्रह समान बल से युक्त हों तो दोनों (वादी और प्रतिवादी) में सन्धि (मेल) होती है।[2]

वादी और प्रतिवादी का मरण योग :-

प्रश्न कुण्डली में यदि किसी स्थान में दो पापग्रह यदि परस्पर पूर्ण दृष्टि से देखें तो अस्त्र प्रहार से वादी और प्रतिवादी दोनों का मरण होता है।

यदि चन्द्रमा मंगल के साथ इत्थशाल करता हुआ लग्न में अथवा चौथे स्थान में हो तो युद्ध में स्थायी राजा की मृत्यु हो। पूर्वोक्त चन्द्रमा यदि सातवें घर में हो तो यायी राजा की मृत्यु होती है।[3]

---

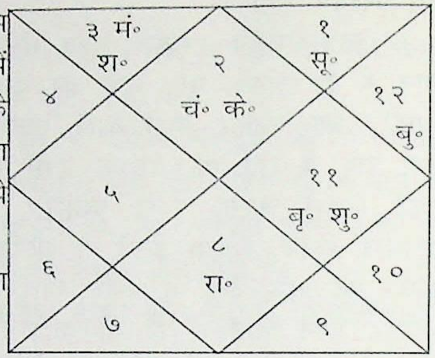
1. (क) दैत्येज्यवाचस्पतिसोमपुत्रैरेकर्क्षगैर्लग्नगतैर्बलाढ्यैः। द्वाभ्यामथेज्ये भृगुजेऽथ लग्ने हन्याद्रणे यायि नृपं पुरेशः।।
सूर्येन्दुभौमार्कजसैंहिकेयैः सर्वैश्चतुर्भस्त्रिभिरेव लग्नगैः। हन्यात्तदा स्थायिनमाशु यायी द्यूनस्थितैर्यायिनृपं पुरेशः।।
दैत्यज्यशीतांशुबुधामरेज्यैः सर्वैस्त्रिभिर्द्यूनगतैर्बलाढ्यैः।
हन्याद्रणे स्थायिनमाशु यायी सुखास्पदस्थेश्च शुभैः सुसन्धिः।।(ता॰ नी॰,विशेषप्रश्नाध्याय, श्लो॰ ४३-४५)
(ख) वादिनो विजय प्रश्ने लग्ने क्रूरे तदा जयः। यदि स्यात्सप्तमे क्रूरो विजयः प्रति वादिनः।।
चरोदये शुभः शुभं करोति यायिनामरं खलैरशोभनं तदा स्थिरेऽपि वा सुशोभनम्।
शत्रोरूपद्रवेकष्टे विवादे वा रणाजिरे। लग्ने पापे जयोऽवश्यं पापदृष्टया पराजयः।।
(प्रश्नभूषण, जयाजयप्रश्नाध्याय, श्लो॰ १, ४)

2. (क) लग्नेशजामित्रपयोश्च मध्ये भवेद् ग्रहो यः स्वगृहोच्चसंस्थः।
लग्नेशजामित्रपयोश्च सन्धिर्ज्ञेयो बुधो लेखकपण्डिताभ्याम्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४७)
तद्वर्गमत्योर्नृपयोश्च सन्धिर्ज्ञेयो बुधो लेखकपण्डिताभ्याम्।।
(ख) लग्ने च सप्तमे क्रूरावनयोर्बलिनो जयः। यदा द्वौ बलिनौ स्यातां सन्धिर्वा विग्रहोमहान्।।
(प्रश्नभूषण, जयाजयप्रश्नाध्याय, श्लो॰ २)
(ग) मूकप्रश्न विचार, डॉ॰ शुकदेव, पृ॰ १५१

3. (क) कुजेत्थशाले हिमगौ विलग्नेबन्धोऽथमृत्युर्युधनागरस्य।
भौमेत्थशाले च विधौ कलत्रे बन्धमृतिं वा लभतेऽत्र यायी।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ४६)
(ख) अथवा यत्रकुत्रस्थौ पापौ पूर्णदृशा मिथः।
पश्यतोऽस्त्रप्रहारेण वादिनोमरणं भवेत्।। (प्रश्नभूषण, जयाजय प्रश्नाध्याय, श्लो॰ ३)

रोगी की मृत्यु का योग :-

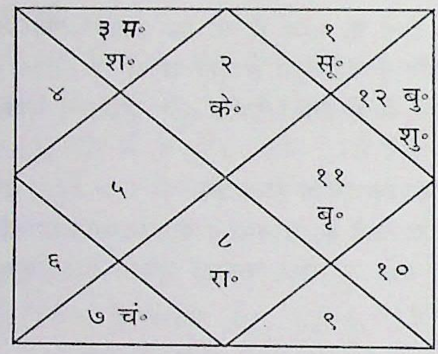
१



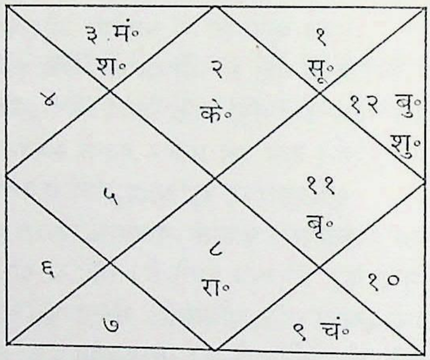
किसी रोगी के शुभाशुभ प्रश्न में यदि द्वितीय, सप्तम और द्वादश स्थान में पापग्रह तथा लग्न अष्टम या षष्ठ में चन्द्रमा हो तो रोगी की शीघ्र मृत्यु होती है। अथवा चन्द्रमा के दोनों ओर पापग्रह होने पर भी शीघ्र मृत्यु होती है।' कहने का अभिप्राय यह है कि रोगी की मृत्यु के चार योग बतलाये गये हैं, जो क्रमशः इस प्रकार है :-

१. द्वितीय, सप्तम एवं द्वादश स्थान में पापग्रह हों तथा चन्द्रमा लग्न में हो तो रोग की मृत्यु होती है।

२



३

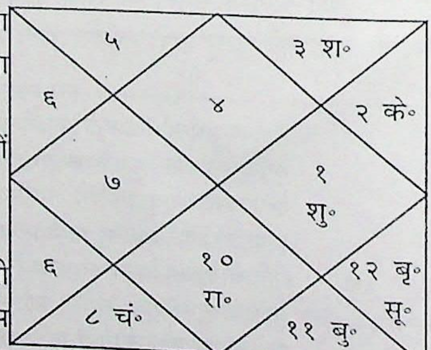


२. द्वितीय, सप्तम एवं द्वादश स्थान में पापग्रह हों तथा चन्द्रमा षष्ठ स्थान में हो तो भी रोगी का मरण होता है।

३. द्वितीय सप्तम एवं द्वादश स्थान में पापग्रह हों तथा चन्द्रमा अष्टम स्थान में हो तो भी रोगी का मरण होता है।

४. रोगी के प्रश्न समय चन्द्रमा के दोनों तरफ पाप ग्रह हों तब रोग की मृत्यु समझें।

४



रोगी की मृत्यु के अन्य योग :-

रोगी के शुभाशुभ प्रश्न में यदि छठे स्थान का स्वामी पापग्रह के लग्न में हो और जन्मराशि को देखता हो तो उस रोगी का मरण निश्चित होता है। यदि चौथे तथा आठवें स्थान में और पापग्रहों के मध्य में चन्द्रमा हो तो रोगी की अवश्य मृत्यु होती है। यदि शुभग्रह बलवान होकर

---

1. (क) समरे व्यये धने क्रूरे लग्नमृत्यौ रिपौशशि।
सद्यो मृत्युकरो योगः क्रूरे वा चन्द्रपार्श्वगे।। (भुवन दीपक, श्लो॰ ११५)

(ख) प्रश्नलग्नोपगं पापभं रोगिणः पापयुक्तेक्षितंचाष्टमक्षं यदा।
पापयोरन्तरे पापयुक्तोऽष्टमे चन्द्रमा मृत्युयोगोभवेत्सत्वरम्।।
प्रश्नलग्नक्षणे पापखेटा व्यये नैधने चन्द्रमा वा नगे लग्नभे।
नैधने शत्रुभे सत्वरं रोगिणो मृत्युयोगस्तदा व्यत्यये व्यत्ययः।। (प्रश्नभूषण, अ॰ ११, श्लो॰ १, २)

(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमि॰, अ॰ ५, पृ॰ ४२७

चन्द्रमा को देखें तो रोगी आगे चलकर रोग मुक्त हो जाय।

यदि लग्न में सूर्य और सप्तम में चन्द्रमा हो तो भी मृत्यु होती है।

यदि चन्द्रमा लग्न में, सूर्य सप्तम में, मंगल मेष राशिस्थ वृश्चिक के नवांश में, चन्द्रमा से युक्त हो तो रोगी का शीघ्र मरण होता है। अष्टमेश लग्न में तथा लग्नेश अष्टम में हो और इनको चन्द्रमा से सम्बन्ध हो तो भी रोगी की मृत्यु होती है।[1]

रोगी के जीवित रहने के योग :-

यदि लग्नेश बलवान हो और शुभ ग्रह केन्द्र अथवा अपनी उच्च राशि तथा त्रिकोण में हो तो रोगी रोग से बच जाय।

यदि एक भी बलवान शुभग्रह लग्न में हो तो वह रोगी की रक्षा करता है।

यदि शुभ ग्रह तृतीय, षष्ठ, नवम और एकादश स्थान में हों।

केन्द्र (१, ४, ७, १०), त्रिकोण (५, ९) और अष्टम में शुभग्रह हों तथा चन्द्रमा उपचय स्थान में हो। लग्न और चन्द्रमा दोनों शुभग्रह से दृष्ट हों।

लग्नेश बलवान और अष्टमेश निर्बल हो तो रोगी का रोग जल्दी अच्छा हो जाता है। प्रश्न लग्न से यदि सप्तम भाव शुभ ग्रह युक्त हो तो रोगी के जीवन रहने का फल कहना चाहिए।[2]

रोग विचार :-

रोग का विचार सामान्यतया अष्टम स्थान में स्थित ग्रह से किया जाता है। यदि अष्टम स्थान में कोई शुभ ग्रह न हो तो अष्टम स्थान पर जिस ग्रह की दृष्टि हो उससे रोग विचार करना चाहिए। यदि दृष्टि भी न हो तो अष्टमेश से रोग का विचार करना चाहिए। इस प्रकार जो ग्रह रोगकारक हो वह जिन रोगों का प्रतिनिधित्व करता है, उसके अनुसार रोग का निश्चिय सरलतापूर्वक किया जा सकता है। ग्रह और उनके रोगों का विवरण इस प्रकार है[3] :-

---

1. (क) विलग्ने षष्ठपः पापो जन्मराशिं निरीक्षिते। रोगिणस्तस्य मरणं निश्चयेन वदेद् बुधः।।
चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे पापमध्यगतेऽपि वा।
मृतिः स्यात् बलंयुक्तसौम्यदृष्टयाचिरात्सुखम्।। (ता० नी०, प्रश्नतन्त्र, श्लो० ५६, ५७)
(ख) लग्ने रविः स्मरे चन्द्रो भवेद्योगोऽयमेव हि।
एतेषु रोगिणो मृत्युः सद्यस्त्वन्यस्यचापदः।। (भुवनदीपक, श्लो० ११६)
(ग) भारतीय ज्योतिष, नेमि० अ० ५, पृ० ४२७
(घ) चन्द्रे लग्ने कलत्रेऽर्के शीघ्रं रोगीविनश्यति।
कौर्प्यंशे मेषथे भौमे चन्द्रयुक्ते च नश्यति।। (प्रश्नभूषण, श्लो० ३, अ० ११)
2. (क) लग्ननाथे च सबले केन्द्रसंस्थे शुभग्रहे। उच्चगे वा त्रिकोणे वा रोगी जीवति निश्चितम्।
एकःशुभो बली लग्ने त्रायते रोगपीड़ितम्।
सौम्या धर्मारिलाभस्थास्तृतीयस्था गदापहाः।। (ता० नी०, प्रश्नतन्त्र, श्लो० ६१, ६२)
(ख) भुवनदीपक, पृ० १२६, (ग) प्रश्नभूषण, अ० ११, पृ० ४७, श्लो० ४
(घ) भारतीय ज्योतिष, नेमि०, अ० ५, पृ० ४२७
3. (क) भुवनदीपक, पृ० १२६ (ख) ता० नी० भावफलाध्याय, षष्ठभाव फलम्०
(ग) रक्तपित्तप्रकोपो दिनेशोऽष्टमे भूसुतो वा बुधःसन्निपातस्तदा।
कुष्टरोगोऽष्टमे राहुयुक्तो रविः षष्ठगो वा महाकुष्टरोगप्रदः।
अष्टभे राहुणा संयुतः सूर्यजो वातरोगेण पादादिकम्पस्तदा।
सन्निपातः कविश्चन्द्रयुक्तोऽष्टमे वीर्यहीन सपापो महारोगकृत्।। (प्रश्नभूषण, अ० ११, श्लो० ५, ६)
(घ) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतु० पृ० १५४

ग्रह	रोग
सूर्यः	ज्वर, पित्तविकार, एवं हृदय रोग
चन्द्रमाः	कफ, शीत, दमा, निमोनिया आदि
मंगलः	दुर्घटना में चोट, बवासीर, रक्त चाप आदि
बुधः	सन्निपात, त्रिदोष, क्षय निरगी आदि
गुरुः	अजीर्ण, हैजा, पथरी एवं गैस आदि
शुक्रः	जलोदर, पाण्डु एवं गुप्त रोग
शनिः	दुर्बलता, अङ्गों का कम्पन, केन्सर आदि
राहुः	कुष्ठ, एलर्जी, वात, आदि
केतुः	चेचक, व्रण, रक्त विकार आदि

देवदोष विचार :-

यदि प्रश्न लग्न से नवें बाहरवें और छठे स्थान में पापग्रह हों तो रोगी तथा जल-शस्त्रादि से पीड़ित मनुष्य को अपने कुलदेवता का कोप, श्राप या अवज्ञा माननी चाहिए।

यदि अष्टम या द्वादश स्थान में राहु हो तो प्रेतदोष, बृहस्पति हो तो पितरों का दोष, चन्द्रमा हो तो जल देवीका, सूर्य हो तो देवी का और शनि-बुध हों तो अपने कुलपुज्य देवता का दोष होता है।

यदि आठवें तथा बाहरवें मंगल हो तो शाकिनी का और शुक्र हो तो जल देवी का दोष जाने।

इन पापग्रहों में से जो बलवान हो तथा वह जिस राशि में स्थित हो उस राशि के अनुसार देवता का निश्चय निम्न चक्र के आधार पर कर लेना चाहिए।[1]

राशि	देवता	राशि	देवता	राशि	देवता
(१) मेष	कुलदेव	(५) सिंह	कुलदेवी	(९) धनु	यक्ष
(२) वृष	पितृदेव	(६) कन्या	योगिनी	(१०) मकर	प्रेत
(३) मिथुन	शाकिनी	(७) तुला	यक्षिणी	(१२) कुम्भ	वरुण
(४) कर्क	क्षेत्रपाल	(८) वृश्चिक	नाग	(१२) मीन	इष्टदेव

1. (क) भुवनदीपक पृ॰, १२७

(ख) वहनयङ्क द्वादशे षष्ठे लग्नात्पापग्रहो यदि। हतोगदैर्जलैः शास्त्रैस्तस्य दोषः कुलोद्भवः।।
प्रेताश्च राहौ पितरः सुरेज्ये चन्द्रेऽम्बुदेव्यस्तपनेऽपि देव्यः।
स्वगोत्रदेव्यश्च शनौ बुधे व च भूतानिविद्याद्व्ययरन्ध्रसंस्थे।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ६३, ६४)

(ग) अष्टमे वा तनुस्थाने राहौ कृत्याभवो गदः।
भूतामयो वा मन्देन युतेकेतावपि ध्रुवम्।। (प्रश्नभूषंण, अ॰ ११, श्लो॰ ९)

चिकित्सा विचार :-

प्रश्न कुण्डली में लग्न चिकित्सक (वैद्य), चतुर्थ औषधी का, सप्तम रोग का और दशम रोगी का प्रतिनिधि भाव है। अतः यदि चतुर्थेश और दशमेश में मित्रता हो तो औषधी रोगी को लाभ करती है अन्यथा नहीं। इसी प्रकार यदि लग्नेश और चतुर्थेश में मित्रता हो तो चिकित्सक रोगी को ठीक करने का यश प्राप्त करता है। यदि कदाचित सप्तमेश और दशमेश में मित्रता हो तो रोग दीर्घकाल तक रहता है। इस प्रसङ्ग में एक और बात ध्यान देने योग्य यह है कि यदि लग्न में शुभ ग्रह हों तो निश्चित रूप से स्वास्थ्य लाभ होता है किन्तु यदि लग्न में पाप ग्रह हों तो रोग काफी समय तक रहता है।[1]

चोरी में लाभ हानि विचार :-

कोई व्यक्ति प्रश्न करे कि मुझे चोरी में सफलता मिलेगी या नहीं तो इस प्रश्न में लग्न में पाप ग्रह की स्थिति शुभ और लग्न पर पाप ग्रह की दृष्टि अशुभ मानी गई है। विवाद, शत्रुवध, युद्ध एवं संकट आदि प्रश्नों में लग्न में पाप ग्रह होने पर विजय और पापग्रह की दृष्टि से पराजय होती है। चोरी के प्रश्न में लग्न में शुभग्रह होने पर चोरी में सफलता नहीं मिलती। मात्र शुभग्रह के योग के प्रभाव से शरीर सकुशल रहता है। अर्थात् चोरी आदि कार्यों में लग्न में पाप या शुभ ग्रह की स्थिति या दृष्टि के अनुसार विचार करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि इन प्रश्नों के फलादेश का निश्चय केवल लग्न से ही कर लेना चाहिए अन्य भावों से नहीं।[2]

नष्ट द्रव्य लाभ प्रश्न :-

प्रश्न कुण्डली में लग्नेश से उस व्यक्ति का विचार करते हैं; जिसका सामान चोरी हुआ है तथा सप्तम से चोर और चन्द्रमा, सूर्य तथा वस्तु के भावेश से चोरी गई वस्तु का विचार करते हैं। चोरी हुआ धन तब मिलता है जब प्रश्न कुण्डली में निम्नलिखित कोई योग हो -

प्रश्नलग्नस्थ पूर्णबली चन्द्रमा यदि शुभ ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो नष्ट धन का लाभ होता है। अथवा प्रश्नलग्न यदि शीर्षोदय राशि (मि॰, सिं॰, का॰, तु॰, वृ॰, कु॰) का हो और शुभग्रह एकादश स्थान में गत हो तो, नष्ट धन का लाभ होता है।

प्रश्नलग्न में चतुर्थेश हो वा चतुर्थेश प्रश्न लग्न को देखे तो धन अवश्य प्राप्त होता है। यदि चन्द्रमा भी प्रश्न लग्न में हो तो अवश्य द्रव्य प्राप्त होने की बात कहनी चाहिए।

यदि लग्नेश सप्तम में और सप्तमेश लग्न में हो तो नष्टधन प्राप्त होता है। यदि लग्नेश और सप्तमेश का सप्तम स्थान में इत्थशाल हो तो नष्ट धन चोर स्वयं दे देता है। लग्नेश

---

1. (क) तथा लग्नगते सौम्ये वेद्योक्तममृतं वचः। लग्नं वैद्यो द्यूनं व्याधिः खं रोगो तुर्यमौषधम्।।
रोगिणो भिषजो मैत्री मैत्री भेषजरोगयोः।
व्याधेरूपशमो वाच्यः प्रकोपः शात्रवे तयोः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ५९, ६०)

(ख) भुवनदीपक, पृ॰ १२८

(ग) सुखागारं रोगी दशमभवनं त्वौषधगृहं रूगस्तं वैद्योऽङ्गं सकलमिति विज्ञाय गणकः।
बलाक्रान्तौ वैद्यौषधगृहपती प्रश्नसमये तदा भद्रं विद्यादिह हि तदभावेन कुशलम्।।
(प्रश्नभूषण अ॰ ११, श्लो॰ ८)

2. (क) एवं चौर्याय यामीति मूर्तौ क्रूरः शुभावहः। दृष्टि शुभावहाऽत्रापि न क्रूरस्य कदाचन।।
विवादे शत्रु हनने रणे संकटके तथा। क्रूरे मूर्तौ जयो ज्ञेयः क्रूरदृष्टया पराजयः।।
अपरेष्वपि चौर्यादियोगेष्वेवं बिना ग्रहम्। मूर्तौ सर्वत्र वक्तव्यं चौर्य प्रश्ने शुभग्रहे।।
मूर्तौ सति न चौर्य स्यात्सफलं केवलं भवेत्। शरीरं मुख्य कुशलं शुभंयोग प्रभावतः।।
रणे चौर्यादि हनने धातुवादादि कर्मसु। क्रूरा क्रर समायोगान्मूर्ताविव विचार्यते।।
(भुवन दीपक, श्लो॰ १२२-१२५)

और सप्तमेश पापग्रहों से दृष्ट हों अथवा धनेश और अष्टमेश दोनों लग्नेश एवं दशमेश से दृष्ट हों तो पुलिस की सहायता से चोर तथा चुराया सामान मिल जाता है। यदि लग्न अथवा दशम भाव में बैठे हुए चन्द्रमा शुभग्रहों के साथ इत्थशाल करता हो तो नष्ट धन का लाभ होता है। यदि लग्न में चन्द्रमा को सूर्य तथा शुभग्रह मित्रदृष्टि से देखते हों तो भी नष्ट धन मिल जाता है। प्रश्न लग्न स्थित पूर्ण बली चन्द्रमा यदि गुरु व शुक्र से देखा जाय तो नष्ट धन का लाभ होता है। एकादश भाव में बलवान् शुभ ग्रह हों तो शीघ्र ही नष्ट धन का लाभ होता है।[1]

नष्ट द्रव्य न मिलने के योग :-

यदि प्रश्न कुण्डली में निम्नलिखित में से कोई एक योग हो तो, चोरी का सामान नहीं मिलता :-

लग्न पर गुरु या शुक्र की दृष्टि न हो और लग्न पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो नष्ट धन नहीं मिलता है। यदि सूर्य लग्न में तथा चन्द्रमा सातवें मे हो तो नष्ट धन नहीं मिलता है। यदि अष्टम भाव में धनेश हो अथवा धनेश सप्तम में हो तो धन न मिले। यदि अष्टमेश और दशमेश का परस्पर इत्थशाल हो तो राजा चोर का पक्ष ले। यदि लग्नेश तथा धनेश एक ही हो और लग्न व धनस्थान पर दृष्टि न हो तो चोरों की वस्तु सुनने में आवें, किन्तु प्राप्त नहीं होती है। लग्न, तृतीय, पंचम और सप्तम इन भावों में राहु शनि सूर्य या मंगल स्थित हो।

लग्न में राहु और अष्टम में सूर्य हो। सप्तम स्थान में शुभग्रह हो या लग्नेश सप्तम स्थान में बैठा हो अथवा क्षीण चन्द्रमा सप्तम भवन में हो तो चोरी गयी या भूली हुई वस्तु नहीं मिलती। सप्तमेश व चन्द्रमा सूर्य के साथ स्थित हों तो चोरी गयी वस्तु प्राप्त नहीं होती है।[2]

चोरी की वस्तु कहाँ है?

चोरी का सामान कहाँ है? यह जानने के लिए सर्वप्रथम प्रश्न लग्न में चर, स्थिर एवं द्विस्वभाव राशि का विचार करना चाहिए। यदि लग्न में चर राशि हो चोरी का सामान घर के बाहर, स्थिर राशि हो तो घर में और द्विस्वभाव राशि हो तो घर के पास की खाली जमीन में होता है। प्रश्न लग्न में स्थिर राशि का योग होने पर यदि लग्न में प्रथम द्रेष्काण (१०अंश के भीतर) हो तो दरवाजे के समीप, द्वितीय द्रेष्काण (१० से २० अंश के मध्य) हो तो मकान के भीतर और तृतीय द्रेष्काण (२० से ३० अंश) हो तो मकान के पिछले हिस्से में वह मकान के पिछले हिस्से में वह सामान होता है।

यदि चोर ज्ञान के प्रश्न समय लग्न में सूर्य तथा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो अपने बन्धु व दास

---

1. (क) पूर्णेन्दुरङ्गगो युक्तो दृष्टो वा शुभखेचरैः। शीर्षोदये वा नष्टाप्तिं कुरुते लाभगोऽपिसत्।।
पूर्णबिम्वः शशी लग्नगो वीक्षितो देवपूज्येनशुक्रेण वा पृच्छतः।
नष्टवित्तस्य लाभं च लाभालये सौम्यखटो बलीसत्वरं यच्छति।। (प्रश्नभूषण, अ॰ १२, श्लो॰ ३, ४)
(ख) प्रश्ने चतुर्थाधिपतिस्तत्रस्थे वाऽवलोकिते। अवश्यं वर्तते तत्र धनं चन्द्रेऽथ वा वदेत्।।
लग्नेश्वरो द्यूनगते विलग्ने जायेश्वरे नष्टधनस्यलाभः। जायेशलग्नाधिपतीत्थशाले द्यूनेविनष्टं धनमेतिमर्त्यः।।
कर्मेशलग्नाधिपतीत्थशालेयल्लभ्यते राजकुलाच्चचौर्यम्। त्रिधर्मपद्यूनपतीत्थशाले त्वन्यप्रदेशात् गमने तदाप्तिः।।
शुभेत्थशाले हिमगौ विलग्ने खस्थेऽथ वा नष्ट धनस्मलाभः।
सुस्नेहदृष्टया रविणा शुभेन दृष्टें विलग्ने हिमगौ च लाभः।। (ता॰ नी॰, विशेषप्रश्नाध्याय, श्लो॰ ८३-९१)
(ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल ज्योतिषी, पृ॰ १८९ (घ) भुवन दीपक, पृ॰ १३७
(ङ) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव, पृ॰ १३९ (च) भारतीय ज्यो॰ नेमि॰ पृ॰ ४२८
2. (क) भारतीय ज्यो॰ नेमि॰, अ॰ ५, पृ॰ ४२८ (ख) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव पृ॰ १३७
(ग) सूर्ये विलग्नेऽस्तमिते शशांके न लभ्यतेयद्द्रविणविनष्टम्। रन्ध्रं चौरस्य धनं धनपे तत्राथ सप्तमे नाप्तिः।।
रन्ध्रपतौ दशमपतेर्मुथशिलगे चौरपक्षकृद्भूपः। धनपे विलग्नपे सति दृष्टि विहीने श्रुतिर्भवतिनाप्तिः।।
(ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ८७/२, १०३/२, १०४)

आदि द्वारा वस्तुयें चोरी हुई हैं। यदि सप्तमेश सहित लग्नेश लग्न में हो तो घर ही में चोर समझें। यदि सप्तमेश बारहवें या तीसरे स्थान में हो तो सेवक को चोर जानें।[1]

चोर का ज्ञान :-

यदि प्रश्न लग्न में स्थिर राशि, स्थिर राशि का नवांश अथवा वर्गोत्तम नवांश हो तो चोर प्रश्नकर्ता का सम्बन्धी होता है। यदि लग्न में चर राशि हो तो चोर बाहरी व्यक्ति होता हैं और यदि लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो चोर घर समीप रहने वाला होता है। चोर का निश्चिय करने के लिए प्रश्न शास्त्र में अनेक योगों का प्रतिपादन किया गया है जो इस प्रकार है :-

प्रश्न लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो चोर अपने घर का होता है।

प्रश्न लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा से किसी एक की दृष्टि होने पर पड़ोसी चोर होता है। लग्नेश और सप्तमेश दोनों प्रश्न लग्न में हों, तो चोर घर में रहने वाला होता है। सप्तमेश ३ या १२वें स्थान में हो तो अपना नौकर चोर होता है।

यदि सप्तमेश उच्च राशि या स्वराशि में हो तो चोर सुप्रसिद्ध (नामी) होता है।

यदि प्रश्न लग्न स्थिर हो तथा बलवान सप्तमेश सूर्य हो तो घर के स्वामी का पिता चोर होता है। इसी प्रकार उक्त योग कर्ता चन्द्रमा हो तो माता, शुक्र हो तो पत्नी, शनि हो तो पुत्र या नौकर, गुरु हो तो परिवार का मुखिया, मंगल हो तो पुत्र या भाई और बुध हो तो कोई सम्बन्धि या मित्र चोर होता है।[2]

चोर की जाति :-

चोर की जाति का निर्णय करने के लिए प्रश्नशास्त्र में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। लग्नेशग्रह की जाति एवं लग्न में जैसी राशि का प्रभाव हो तदनुसार चोर की जाति का निश्चिय करना चाहिए। ग्रहों में गुरु और शुक्र ब्राह्मण, सूर्य और मंगल क्षत्रिय, चन्द्रमा वैश्य, बुध शूद्र तथा शनि चाण्डाल जाति के प्रतिनिधि ग्रह हैं। इसी प्रकार मेष लग्न हो तो ब्राह्मण चोर, वृष हो तो क्षत्रिय चोर, मिथुनलग्न हो तो वैश्य चोर, कर्क लग्न हो तो शूद्र चोर, सिंह लग्न हो तो अन्त्यज चोर होता है। अतः प्रश्न लग्न में स्थित राशि एवं प्रश्न लग्न का स्वामी ग्रह जिस जाति का हो, चोर भी उसी जाति का कहना चाहिए।[3]

नष्ट वस्तु की दिशा :-

प्रश्न लग्न से केन्द्र (१/४/७/१०) स्थित बली ग्रह के अनुसार नष्ट धन की दिशा समझनी चाहिये, अर्थात् केन्द्र में सूर्य हो तो पूर्व दिशा, शुक्र हो तो आग्नेय कोण, मंगल हो

---

1. (क) चौरज्ञान प्रश्ने लग्नरविशशिदृशा स्वगृहचौरः। अनयोरेकदृशा गृहसमीपवर्ती वसत्येषः।।
   लग्नस्थे लग्नपतावस्तपयुक्ते च गृहगतश्चोरः। अस्ताधिपतावन्त्ये सहजे वा स्वीयभृत्योऽयम्।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १०५-१०६)
   (ख) स्थिरे लग्ने तदंशे वा निजवर्गोत्तमेऽपि वा। निजेन चोरितं वित्तं यदा तत्रैव संस्थितम्।।
   पूर्वे मध्येऽन्तिमेऽङ्गस्य दृक्काणे क्रकतो बुधः। द्वारान्तिके तथा मध्ये गृहान्ते तद्धनं वदेत्।।
   (प्रश्नभूषण अ॰ १२, श्लो॰ १, २) (ग) भुवन दीपक, पृ॰ १३६
2. (क) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १३४
   (ख) एवं योगं तु बिना द्यूनेशस्यैव बलमभिग्राह्यम्। इत्थं चौरज्ञाने चौरः सूर्ये गृहश्नवरस्य पिता।।
   चन्द्रे माता शुक्रे भार्या मन्दे सुतो भवेन्नीचे। जीवे गृहप्रधानं भौमे पुत्रोऽथ वा भ्राता।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १०९, ११०)
   (ग) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ४२८ (घ) प्रश्नभूषण नष्टद्रव्य प्रश्नाध्याय १२, श्लो॰ १
3. (क) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी पृ॰ १३५ (ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ४२८
   (ग) विप्रादितः शुक्रगुरुकुजार्कौ शशी बुधश्चत्यसितोऽन्त्यजानाम्। (बृहज्जातके ग्रहयोनिप्रभेदाध्याय-२ श्लो ७)
   (घ) यः खेटः स्याद् बलवान्, सज्ञेयस्तस्करस्यबली। लग्नादिषु यो ग्रहः स्वोच्चादि बली स यज्जातिः।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १०८)

तो दक्षिण दिशा, राहु हो तो नैत्रर्ऋत्य कोण, शनि हो तो पश्चिम दिशा, चन्द्र हो तो वायव्य कोण, बुध हो तो उत्तर दिशा, गुरु हो तो ऐशान्य कोण समझना चाहिये। यदि केन्द्र (१/४/७/१०) स्थानों में ग्रह अभाव हो तो लग्न राशि के अनुसार दिशा जाननी चाहिये अर्थात् मेष, सिंह और धनु लग्न हो तो पूर्व दिशा वृष, कन्या और मकर लग्न हो तो दक्षिण दिशा, मिथुन तुला और कुम्भ लग्न हो तो पश्चिम दिशा, कर्क, वृश्चिक और मीन लग्न हो तो उत्तर दिशा होती है और लग्न के गत नवांश तुल्य योजन दूरी पर चोरी हुआ धन होता है अर्थात् लग्न प्रथम नवांश में हो तो १ योजन तुल्य प्रदेश के भीतर, द्वितीय नवांश में हो तो १ योजन के बाद, २ योजन के भीतर चोरी धन होता है इस प्रकार अनुमान लगाना चाहिए।[1]

चोर की आयु :-

चोर की आयु का निर्णय करने के लिए सरल प्रकार इस तरह जानें - योग कारक ग्रह लग्नेश शुक्र हो तो चोर युवावस्था का होता है। यदि योग कारक बुध हो तो बालक, बृहस्पति के होने से मध्य अवस्था, मंगल हो तो युवक, शनि हो तो वृद्ध और सूर्य हो तो चोर अतिवृद्ध होता है। यदि दशम, लग्न के मध्य में रवि हो तो वृद्ध और लग्न, चतुर्थ के मध्य में सूर्य हो तो अत्यन्त वृद्ध समझना चाहिए।[2]

यह चोर है या नहीं?

प्रश्न कर्ता का जिस व्यक्ति पर चोरी करने का सन्देह है, वह चोर है या नहीं? यह निश्चय करने का आसान तरीका इस प्रकार है - यदि प्रश्नकुण्डली में चन्द्रमा पापग्रह से इत्थशाल करता हो तो सन्दिग्ध व्यक्ति चोर होता है और यदि वह शुभ ग्रह से इत्थशाल करता हो तो वह व्यक्ति चोर नहीं होता। क्या इसने कभी चोरी की है? इस प्रकार के प्रश्न में यदि लग्नेश या चन्द्रमा से सप्तमेश का ईसराफ योग हो तो उक्त व्यक्ति ने पहले भी चोरी की हे यह जानना चाहिए।[3]

चोर स्त्री है या पुरुष?

चोर स्त्री है या पुरुष? यह निश्चय करने के लिए सप्तमेश की स्थिति और उस पर दृष्टि आदि सूक्ष्म रीति से विचार कर लेना चाहिए। प्रश्न कुण्डली में यदि सप्तमेश स्त्री राशि (समराशि) में स्थित हो, वह स्वयं स्त्रीग्रह हो या उस पर स्त्री ग्रहों की दृष्टि हो तो चोरी करने वाली स्त्री होती है।

यदि सप्तमेश पुरुष राशि (विषम राशि) में स्थित हो, वह पुरुष ग्रह हो या उस पर पुरुषग्रह की दृष्टि हो तो चोरी करने वाला पुरुष होता है ऐसा कहना चाहिए।[4]

---

1. (क) वक्तव्या नष्टवित्ताशा केन्द्रोपगलखेचरैः।
अभावे प्रश्नलग्नर्क्षाद्विच्युतांशैस्तु योजनम्।। (प्रश्नभूषण, अ॰ १२, श्लो॰ ५)
(ख) मेषेच सिंहे धनुषीन्द्र भागे वृषे च कन्यामकरे च याम्ये।
युग्मेतुलायां च घटे प्रतीच्यों कर्कालिमीने दिशिचोत्तरस्यां।। (होड़ाचक्रम् श्लो॰ ३)
(ग) वर्षफल चन्द्रिका, पं॰ पन्ना लाल, पृ॰ १८९
2. (क) चौरस्य वयोज्ञाने सिते युवा ज्ञे शिशुर्गुरौ मध्यः। तरूणो भौमे मन्दे वृद्धोऽर्के स्यादतिस्थविरः।।
तनुखभयोः खभमदयोः स्मरभूम्योर्भूमि लग्नयोर्मध्यम्।
चरति रवौ नवमध्यम वृद्धवयोऽतीतकाःक्रमशः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ११४, ११५)
(ख) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १३५
3. (क) चौरोऽयमथ न वेति क्रूरेन्द्वोर्मुथशिले चचौरः स्यात्। सौम्यशशिमुथशिले खलु न भवति चौरः प्रवक्तव्यम्।।
किमनेन तस्करत्वं कदापि विहितं न वेति पृच्छायाम्।
लग्नपशशिनोरेकस्मादपि मूसरिफेऽस्तये विहितम्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ११६-११७)
(ख) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १३६
4. (क) चौरः स्त्री पुरुषो वा पृच्छायामस्तपेस्त्रियो राशौ।
स्त्रीखेटे स्त्रीदृष्टे चौरः स्त्रीव्यत्ययात्पुरुषः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ११८)
(ख) भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १३७

सन्तान योग :-

सन्तान की प्राप्ति के लिए अर्थात् सन्तान सम्बन्धी प्रश्नों में लग्नेश और पंचमेश तथा लग्न और पंचम के सम्बन्ध का विचार करना चाहिए। लग्नेश और पंचमेश परस्पर में एक-दूसरे को देखते हों तो सन्तान लाभ होता है। यदि सन्तान प्रश्न में लग्नेश अथवा चन्द्रमा से पञ्चमेश इत्थशाल करे तथा पंचमेश शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तो प्रश्नकर्त्ता को सन्तति प्रदान करते हैं। यदि पंचम स्थान को शुभग्रह देखते हों और पञ्चमेश केन्द्र (१/४/७/१०) में अथवा त्रिकोण (५/९) में हो तो भी सन्तान होती है। सन्तान लाभ के प्रसङ्ग में यह ज्ञातव्य है कि लग्न और पंचम पर लग्नेश और पंचमेश की दृष्टि का होना तथा शुभग्रहों के साथ इत्थशाल योग का रहना सन्तान-प्राप्ति के लिये शुभ माना गया है।[1]

सन्तान हानि योग :-

यदि प्रश्नकुण्डली में निम्नलिखित योगों में से कोई एक भी योग हो तो गर्भ में स्थित शिशु जन्म लेते ही मर जाता है अथवा मरे हुए बच्चे का जन्म होता है।

पंचमेश यदि अस्त हो वा नीच राशि में हो अथवा पापपीड़ित हो तो पुत्र (सन्तान) नहीं होता है, दैवात् यदि हो तो शीघ्र ही मर जाता है। पंचमेश मंगल या राहु से युक्त होकर त्रिक (६/८/१२) स्थान में स्थित हो तो सन्तान की हानि होती है।

यदि शुक्र तथा गुरु अष्टम भाव में हों तो मरी सन्तानें उत्पन्न हों। यदि मंगल अष्टम भाव में हों तो गर्भ ही गिर जाय। यदि अष्टमेश अष्टम भाव में बलवान् हो तो स्त्री का पुत्रदायक रज ही न आवे। पंचमेश और गुरु अष्टम स्थान में हों। पंचम और सप्तम स्थान में बलवान पापग्रह हों। पंचम स्थान में धनु राशि हो, उसमें राहु बैठा हो और किसी पापग्रह की उस पर दृष्टि हो तो भी सन्तान की हानि होती है। प्रश्नकुण्डली में गुरु पापग्रहों से दृष्ट या युंक्त हो और व्यय स्थान भी पापग्रहों से प्रभावित हो, तो शिशु मर जाता है। यदि शुक्र तथा सूर्य अष्टम स्थान में हों और पापग्रह दूसरे, बारहवें तथा आठवें हों तो प्रश्नकर्ता को सन्तानें हो-होकर मरती जायें और भविष्य में भी उसे सन्तान सुख प्राप्त नहीं होता है।[2]

पुत्र, कन्या जन्म विचार :-

प्रश्नशास्त्र में पुत्र और कन्या के जन्म के सम्बन्ध में यहाँ कुछ योग इस प्रकार हैं :-

यदि प्रश्न समय विषम राशि (१।३।५।७।९।११) में व विषय राशि के नवमांशों में यदि शनि वर्तमान हो तो गर्भस्थित पुत्र समझना चाहिए। यदि वह शनि समराशि (२।४।६।८।१०।१२) में व समराशि नवांश में हो तो गर्भ में कन्या होती है।

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ॰ ४३३
   (ख) पञ्चमें शुभदृष्टे च पञ्चमाधिपतावपि।
   केन्द्रकोणे तदा नारी बहुपुत्रवती भवेत्।। (मार्त्तण्ड पंचाङ्ग सं॰ २०६४ पृ॰ ६८)
   (ग) लग्नेश्वरेणाथ निशाकरेण यदीत्थशालं कुरुते सुतेशः।
   शुभःशुभैः संयुत ईक्षितः स्यात्सुसन्ततिः प्रष्टुरसौविदध्यात्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १२०)
2. (क) मृतप्रजा छिद्रगयोः सितेज्ययोर्गर्भस्त्रवा भूमिसुतेऽष्टमर्क्षे। छिद्रेश्वरे छिद्रगतेऽतिवीर्ये पुष्पं न विन्दत्यबलासुतप्रदम्।।
   शुक्रार्कयोष्टमसंस्थयोर्वा क्रूरैर्धनान्त्याष्टमराशिसंस्थैः।
   जाता पुरस्तान्म्रियते प्रजा वै प्रष्टुर्न चाग्रे शुभसन्ततिःस्यात्। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १२५, १२६)
   (ख) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ९३
   (ग) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १४९
   (घ) अस्तांशे पञ्चमाधीशे नीचे वा खलपीड़िते। पुत्रो न जायते तस्य भवत्यपि न जीवति।।
   पञ्चमेशो यदा युक्तो राहुणा वा कुजेन वा।
   तदा सन्तान हानिः स्यादित्युक्तं पूर्वसूरिभिः।। (प्रश्नभूषण, अ॰ १०, श्लो॰ १०-११)

यदि पञ्चमेश अथवा लग्नेश विषम स्थान में हों तो इन्हें पुत्र को जन्म देने वाला समझें। यदि पञ्चमेश तथा लग्नेश समराशि में हों तो कन्या को जन्म देते हैं।

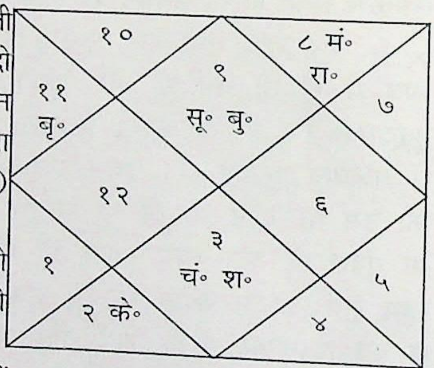
सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति यदि विषय राशि में वर्तमान रहें तो गर्भस्थित पुत्र होता है। एवं यदि पञ्चमभाव में शुक्र, मंगल और चन्द्रमा, इन ग्रहों की दृष्टि हो तो गर्भ से पुत्रोत्पत्ति होती है। शुक्र और चन्द्रमा यदि पञ्चम भाव में रहे तो गर्भ से कन्या की उत्पत्ति होती है। यदि बलवान शुक्र और चन्द्रमा पञ्चम भाव को देखें तो गर्भ से पुत्रोत्पत्ति होती है। पञ्चम भावेश और प्रश्नलग्नेश ये दोनों ग्रह यदि पुरुष राशि (१।३।५।७।९।११) में गत हों तो गर्भस्थ पुत्र होता है। यदि वे दोनों स्त्री राशि (२।४।६।८।१०।१२) में रहे तो गर्भस्थ कन्या होती है। जितने भी पुरुष ग्रह बनवान होकर पंचम भाव को देखते हों, उतने पुत्र और जितने स्त्री ग्रह बली होकर देखें उतनी ही कन्यायें हों। पंचम भाव में जितने नवांश हों उतनी ही संख्या की सन्तानें होती हैं। प्रश्न समय में यदि दैवज्ञ (ज्योतिषी) का दक्षिणश्वास (सूर्यनाड़ी) चले तो गर्भस्थ पुत्र होता है। यदि वामश्वास (चन्द्रनाड़ी) चले तो गर्भस्थ कन्या होती है।[1]

यमल सन्तान का योग :–

यदि लग्न सम (२।४।६।८।१०।१२) राशि का हो और उसमें शुभ ग्रह हों तो गर्भ में दो सन्तानों की स्थिति होती है। प्रश्नकुण्डली में किन्हीं चार भिन्न-भिन्न स्थानों में दो-दो ग्रह बैठे हों तो दो सन्तानों का जन्म होता है। यदि प्रश्न लग्न में द्विस्वभाव (मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन) राशि हो तथा लग्न में या पंचम स्थान में शुभ ग्रह बैठे हों तो यमल (जुड़वां) सन्तति का जन्म होता है।

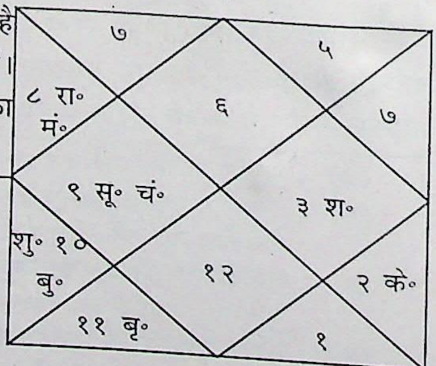
यदि लग्न में मिथुन और धनु ये पुरुष राशियाँ हों तो दो पुत्र तथा यदि कन्या और मीन ये स्त्री राशियाँ हों तो दो कन्याओं का जन्म होता है।[2]

यमल योग १



इस कुण्डली में लग्न तृतीय, सप्तम और द्वादश स्थान में दो-दो ग्रह स्थित है।अतः उपरोक्त नियमानुसार यमल योग है।

२



इस कुण्डली में कन्या (द्वि॰स्व॰) राशि लग्न में है और पंचम स्थान में दो शुभ ग्रह बुध एवं शुक्र बैठे हैं। अतः पंचम स्थान में राशि होने के कारण दो कन्याओं का जन्म होगा, यह कहना चाहिये।

---

1. (क) ओजर्क्षे विषमांशे वा पुत्र जन्मकरः शनिः।
समांशे समभे पुत्रीकारको नाऽत्र संशयः।।
सूर्यः सोमो गुरुश्चैव विषमे पुत्रकारकः।
शुक्रमङ्गल चन्द्राणां यदि दृष्टिः सुते सुतः।।
शुक्रचन्द्रौ पञ्चमस्थौ कन्याजन्मकराविमौ।
पश्यतस्तौ सुतस्थानं पुत्रदौ बलिना यदि।।
सन्तानभवनाधीशः प्रश्नलग्नाधिपस्तथा। द्वावेव नरराशिस्थौ पुत्रः स्त्री राशिगौ सुता।।
वहमाना यदा नाड़ी दक्षिणा पुत्रसम्भवः। वामनाड़ी तदा पुत्री वदमाना विशेषतः।। (प्रश्नभूषण, १०/१-६)

2. (क) युग्मराशिगते लग्ने यदा तत्र शुभग्रहाः।
गर्भेऽपत्यद्वयं वाच्यं दैवज्ञेन विपश्चिता।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १२९)
(ख) पृच्छालग्ने च चतवारि ग्रहयुग्मानि सन्ति चेत्।
यत्र तत्रैव युग्मस्य प्रसवं ब्रुवते बुधाः।। (भुवनदीपक श्लो॰ ८९)
(ग) मूक प्रश्न विचार शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १४८ (घ) भारतीय ज्योतिष, नेमि॰ अ॰ ५, पृ॰ ४३६

भोजन सम्बन्धी प्रश्न :-

आज मैंने कितनी बार भोजन किया है और कैसा भोजन किया है, इस प्रश्न के उत्तर को समझने के लिए लग्न स्वभाव का विचार किया जाता है। यदि प्रश्न लग्न स्थिर हो तो एक बार भोजन, द्विस्वभाव हो तो दो बार भोजन और चर लग्न हो तो कई बार भोजन किया है, यह समझना चाहिए। यदि चन्द्रमा लग्न में हो तो नमकीन, मंगल हो तो कडुवा तथा खट्टा, गुरु हो तो मीठा, सूर्य हो तो तिक्त, शुक्र हो तो स्निग्ध (चीकना), और बुध लग्न में हो तो समस्त रसों का भोजन किया है। यदि शनि लग्न में हो तो कषायला (कसैला) रस का भोजन किया है यह कहना चाहिए।

भोजन के सम्बन्ध में चन्द्रमा, गुरु, मंगल से भी विचार करना चाहिए।

ज्योतिष में सूर्य का कटु रस, चन्द्रमा का नमकीन, मंगल का तिक्त, बुध का मिश्रित, गुरु का मधुर, शुक्र का खट्टा और शनि का कषायला रस कहा है। जो ग्रह लग्न में हो अथवा लग्न को देखता हो, उसी के अनुसार भोजन का रस समझना चाहिए। चन्द्रमा जिस ग्रह के साथ इत्थशाल योग कर रहा हो, उस ग्रह को रस भोजन में प्रधान रूप से रहता है। लग्न में राहु या शनि, सूर्य से दृष्ट हों तो भोजन अच्छा नहीं मिलता या अभाव रहता है इस प्रकार कहना चाहिए।[1]

विवाद सम्बन्धी प्रश्न :-

हमारे प्राचीन आचार्यों ने पाँच प्रकार के युद्ध बतलाये हैं- १. वाक्युद्ध, २. द्यूतयुद्ध ३. मदनयुद्ध ४. मल्लयुद्ध ५. सैन्ययुद्ध। जो व्यक्ति मुकद्दमा दायर करता है, उसे वादी तथा जिस पर मुकद्दमा चलाया जाता है वह प्रतिवादी कहलाता है। विवाद के प्रश्न में यदि लग्न में पापग्रह हों तो सब अवस्था में वादी की विजय होती है। सप्तम भाव में नीचग्रह अस्त तथा नीचगत हों तो मुकद्दमे में विजय लाभ नहीं होता है। लग्न और सप्तम में क्रूर ग्रहों के रहने से मुकद्दमा वर्षों तक चलता है और कई वर्ष के पश्चात वादी की विजय होती है। लग्नेश, पंचमेश और शुभग्रह केन्द्र में हों तो सन्धि हो जाती है। लग्नेश, सप्तमेश और षष्ठेश छठे स्थान में हों तो परस्पर कलह कुछ अधिक दिनों तक चलती है; पर अन्त में विजय लाभ होता है।[2]

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री अ॰ ५, पृ॰ ४३५
   (ख) कटुको लवणस्क्तिो मिश्रितो मधुरो रसः। अम्लः कषायः कथिता रव्यादीनों रसा बुधैः।।
   लग्नं पश्यति यः खेटस्तस्य यः कथितो रसः। भोजनेऽसौ रसो वीर्यक्रमाद्वाच्याः परे रसाः।।
   चन्द्रो यस्य मुथशिलस्तस्य विशेषं वदेद् भुक्तौ। लग्ने राहौ मन्दे रविदृष्टे भोजनाभावः।।
   कीदृङ्मयाऽद्य भुक्तं पृच्छायां यदि भवेत्स्थिरं लग्नम्। तद्भुक्तमेकवेलं द्वयात्मनि वेलद्वयं चरेत्वसकृत्।।
   चन्द्रे लग्नगते स्यात्क्षारं भौमे च कटुकमम्लगुरौ। मधुरं दिनकृति तिक्तं शुक्रे स्निग्धं बुधे च सर्वरसम्।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १३१-१३५)

2. (क) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ ५, पृ॰ ४३४
   (ख) क्रूरः खचरो लग्ने विवाद पृच्छासुजयति विवादं तम्। सर्वावस्थासु परं नीचेऽस्ते जयति न द्विषतः।।
   लग्ने द्यूने च यदि क्रूरः खचरो विवादिनोर्न तदा। कलहनिवृत्तिः काले जयति हि बलवान् गतबलं तु।।
   लग्नेशः सुतपः सौम्याः केन्द्रे सन्धिर्न वाऽन्यथा। लग्नद्यूनेशषष्ठेशारित्त्वेऽप्यन्योन्यविग्रहः।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १४७, १४८, १५०)
   (ग) मूकप्रश्नविचार, शुकदेव चतुर्वेदी पृ॰ १५१-१५२
   (घ) वादिनो विजय प्रश्ने लग्ने क्रूरे तदा जयः। यदि स्यात्सप्तमे क्रूरो विजयः प्रतिवादिनः।।
   लग्ने च सप्तमे क्रूरावनयोर्वलिनो जयः। यदा द्वौ बलिनौ स्यातां सन्धिर्वा विग्रहो महान्।।
   (प्रश्नभूषण, अ॰ १३, श्लो॰ १, २)

नौका प्रश्न विचार :-

नौका के विषय में चार प्रकार के प्रश्न होते हैं:- १. विदेश से सकुशल नाव का वापिस लौटना २. जल में डूब जाना ३. जल में तैरती रहना और ४. व्यापार में लाभ। इन चारों प्रश्नों का विस्तारपूर्वक विचार प्रश्न शास्त्र के सभी ग्रन्थों में किया गया है। व्यापार के लिए गयी हुई नौका (जहाज आदि) कल्याण युक्त है या आपत्ति में पड़ी हुई है, इस प्रश्न में अष्टम स्थान विचारणीय है।[1]

नौका पति को लाभकर योग :-

यदि कोई प्रश्न पूछे कि नाव के व्यापार में हमको लाभ होगा या नहीं? इस समय यदि केन्द्र में शुभ ग्रह और शेष स्थानों में पापी ग्रह हों तो वे जय तथा अर्थ देने वाले होते हैं। यदि लग्नेश और अष्टमेश अपने घर में हों अथवा अपने स्थान को देखते हों तो व्यापार से लाभ हो। यदि आठवें स्थान में बलवान शुभग्रह बैठें हों तो नाव लाभ व सुखदायक होती है। नौका प्रश्न में यदि बृहस्पति अष्टम स्थान में रहे और लग्नेश यदि लग्न को देखे तो व्यापार से अवश्य ही लाभ होता है। अष्टम स्थान में यदि शुभग्रह सहित शुक्र रहे और लग्नेश बलवान् हो तो नौकापति को व्यापार में विशेष लाभ होता है एवं यदि शुभग्रह सहित चन्द्रमा अष्टम भाव में हो और लग्न बली हो तो व्यापार से विशेष लाभ होता है।[2]

नौका व्यापारी को हानि :-

यदि प्रश्न काल में अष्टमेश अपनी नीच राशिगत या अस्तंगत होकर नवम स्थान में स्थित हो अथवा वह नीच या शत्रु राशि में होकर किसी भी भाव में स्थित हो तो (जहाज द्वारा लाये गये सौदे के) व्यापार में हानि होती है।

लग्नेश और अष्टमेश यदि नीचराशि में रहें और नवम स्थान गत बृहस्पति शत्रु गृह का हो तो व्यापारी (नौका पति) को नौका व्यवहार से लाभ नहीं होता है। लग्न में व अष्टम में व चतुर्थ में यदि पापग्रह हों और लग्नेश अस्त हो तो नौकापति (व्यापारी) को रोगग्रस्त व मरा हुआ समझना चाहिए।

यदि लग्नेश, चन्द्रराशि के स्वामी अथवा चन्द्रमा इनको अष्टमेश क्रूर दृष्टि से देखे तो नौका समेत स्वामी का नाश होता है।[3]

---

1. (क) क्षेमायातं बहित्रस्य मज्जनं वपनं जले।
पण्यव्यवहतौ लाभो नावि प्रश्न चतुष्टयम्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १६६)
(ख) कल्याणसंयुता नौका न वा कल्याणसंयुता।
इति प्रश्नेऽष्टमस्थानंसर्वतः परिचिन्तयेत्।। (प्रश्नभूषण, अ॰ ५, श्लो॰ १)

2. (क) नौर्लाभदा स्यान्मम नेति पृष्टे केन्द्रे शुभाश्चेदितरेषुपापाः।
बलोज्झिताः क्षेमजयार्थदा नौर्भावीति वाच्यं विदुषाविमृश्य।।
विलग्नरन्ध्राधिपतिः स्वगेहे प्रवेक्ष्यतश्चेद्वयवहारलाभः।
यदाऽष्टमेसौम्यखगा बलाढ्यास्तदातरी लाभसुखपदास्यात्।।
(ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १६७, १६९)

2. (क) लग्नेशं चन्द्रनाथं वा चन्द्रं वा मृत्युपो यदि।
पश्येत्क्रूरदृशा नावा समं नश्यति नौपतिः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १७१)
(ख) नीचस्थोऽस्तमितो वा मृत्युपतिर्नवमगोरिपुक्षेत्रे।
नीचो वा भवति यदा व्यवहृतलाभो भवेन्न तदा।। (भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ १४४)
(ग) लग्नेऽष्टमे चतुर्थे वा पापो रविकरेऽङ्गपः। नौकापतिस्तदा रोगी मृतो वेति बुधो वदेत्।।
लग्नाऽष्टमपती नीचे गुरुर्नवमगो यदि।
रिपुक्षेत्रे तदा लाभो न नौकाव्यवहारतः।। (प्रश्नभूषण, अ॰ ५, श्लो॰ ४, ६)

नौका गमने उत्पात योग :-

नौका के प्रश्न में यदि लग्नेश और अष्टमेश ये दोनों अपने स्थान को न देखें तो नौका निश्चित रूप से डूब गई ऐसा कहना चाहिए। यदि लग्नेश और अष्टमेश सप्तम स्थान में हों तो द्रव्य सहित नौका जल में डूब गई या शत्रु और अग्नि जनित उत्पात होता है। यदि लग्नेश और चन्द्रमा की राशि का स्वामी, ये दोनों पाप दृष्टि से एक दूसरे को देखते हों तो नाववालों में ही परस्पर कलह हो जाये।

प्रश्न समय यदि लग्नेश लग्न को न देखे और अष्टमेश अष्टम को न देखे तो नौका नदी में नष्ट हो गई ऐसा समझना चाहिए।[1]

क्रय-विक्रय सम्बन्धी विचार :-

क्रय-विक्रय के प्रश्न में इस वस्तु को मैं खरीदूँ या नहीं? इस प्रश्न में लग्नेश ग्राहक और लाभेश विक्रेता कहा गया है।

मैं यह वस्तु खरीद करूँगा? इस प्रश्न के अवसर पर यदि लग्न बलवान हो तो वह वस्तु खरीद लें। इस समय खरीदने से लाभ होगा, ऐसा पृच्छक से कह देना चाहिए।

मैं अमुक वस्तु बेचूँगा इसमें लाभ या हानि क्या फल होगा? ऐसे प्रश्न में यदि ग्यारहवाँ स्थान बलवान हो तो वह वस्तु बेचने से लाभ होगा। इसलिये बेच डालने की अनुमति दे दें।[2]

तेजी-मन्दी का विचार :-

धान्यादि वस्तु सस्ती है या महंगी, इस प्रश्न में दैवज्ञ प्रश्न लग्न की सौम्यता (शुभ ग्रह से योग आदि) देखकर फल कहे-

यदि मेष, वृष और मिथुन ये राशियाँ शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों तो ग्रीष्म ऋतु की फसल अच्छी न हो। यदि धन, मकर, कुम्भ ये राशियाँ शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हों तो शरद् ऋतु की फसल अच्छी होती है।

यदि लग्न लग्नेश तथा चन्द्रमा शुभग्रह युक्त अथवा दृष्ट हों तो समय अच्छा हो और पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो महँगाई आवे।

---

1. (क) लग्नपो वाऽष्टमेशश्च सप्तमे यदि वर्त्तते। तदोत्पातं विजानीयादरिवाह्निकृतं तदा।।
लग्नपो नेक्षते लग्नं नाष्टमं निधनाधिपः। नद्यां प्रब्रूडिता नौका विज्ञेया गणकोत्तमैः।।
(प्रश्नभूषण, अ॰ ५, श्लो॰ ३, ५)

(ख) नेक्षते लग्नपो लग्नं मृतिपो नेक्षते मृतिम्। यानपात्रस्य वकतव्यं निश्चितं बुडनं तदा।।
लग्न पश्चाष्टमस्थानाधिपतिर्वा भवेद्यदि। सप्तमे कथयन्त्यन्तर्जले वापकिनं तदा।।
(भुवनदीपक, श्लो॰ १४२-१४३)

(ग) लग्नेशोऽष्टपतिः स्वस्वगेहं नालोकते यदि। तदा यानस्य वक्तव्यं निश्चितं मज्जनं बुधैः।।
तावुभौ सप्तमस्थो चेज्जले वापनिकांवदेत्। लग्नचन्द्रपतीक्रूरदृष्ट्याऽन्योन्यें यदीक्षितौ।
तदा पोतजनानां च मिथः कलहमादिशेत्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १७२, १७३)

2. (क) भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ १३८

(ख) प्रश्नलग्नपतिः क्रेता विक्रेता लाभपो ग्रहः। क्रयाद्यदि भवेल्लाभो गृह्णामीदमहन्तदा।।
इति प्रश्ने शुभं लग्नं प्रष्टुर्लाभः क्रयाणकात्। विक्रीणामीति सम्प्रश्ने लाभस्थानं विचारयेत्।।
शुभस्वामियुते लाभे विक्रयाल्लाभमादिशेत्।
लाभेशे शुभवर्गाढये मित्रक्षेत्रादिगेऽपि च।। (प्रश्न भूषण अ॰ १५, श्लो॰ १, २, ३)

(ग) क्रेता लग्नपतिर्ज्ञेयो विक्रेताऽऽयपति स्मृतः। गृह्णाम्यहमिदं वस्तु प्रश्न एवंविधे सति।।
बलशालि विलग्नं चेद् गृह्यत तत्क्रयाणकम्। तस्मात्क्रयाणकाल्लाभः प्रष्टुर्भवति निश्चितम्।।
विक्रीणाम्यमुकं वस्तु प्रश्न एवंविधे सति।
आयस्थाने बलवति विक्रेतव्यं क्रयाणकम्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १७४-१७६)

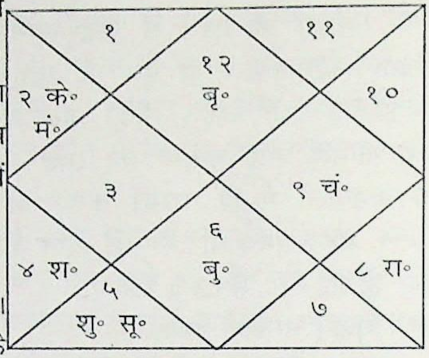
एकादशेश और एकादश भावगत नवमांशेश यदि सबल हो तो चीजें महंगी होती हैं। वे दोनों यदि बलहीन हों तो चीजें सस्ती होती हैं।

यदि प्रश्न काल में लग्न बलवान हो, अर्थात् लग्नेश शुभग्रह से युक्त दृष्ट और केन्द्र में शुभ ग्रह बैठे हों तो सब अन्न सस्ता (मन्दी) हो। यदि लग्न बलहीन हो और केन्द्र में पापग्रह हों तो अन्नादि महँगे (तेज) होते हैं।[1]

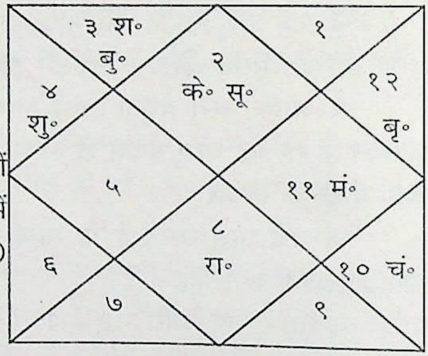
उदाहरणार्थ निम्नलिखित कुण्डलियाँ देखियेः-

यहाँ लग्न लग्नेश गुरु से युक्त और बुध से दृष्ट है। तथा चन्द्रमा केन्द्र में है। अतः लग्न के बलवान् होने के कारण मन्दी (समर्घ) का योग है।

मन्दी योग



तेज़ी योग



इस कुण्डली में लग्न पर लग्नेश शुक्र की दृष्टि नहीं है। अपितु मंगल और राहु की दृष्टि है। तथा ये दोनों केन्द्र में स्थित भी हैं। अतः लग्न निर्बल होने के कारण तेजी (महर्घ) का योग है।

लाभालाभ प्रश्न :-

प्रश्न कालीन कुण्डली बनाने के अनन्तर विचार करना- यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों आठवें स्थान में हों तो तथा ये दोनों एक ही द्रेष्काण में स्थित हों पृछच्क को निश्चित रूप से लाभ होता है। प्रश्नकाल में लग्न में सौम्य ग्रहों का वर्ग हो तो ग्रहभाव की अपेक्षा शुभ फल समझना चाहिए। लग्न में चन्द्रमा और लाभभाव में गुरु या शुक्र हो तथा लाभभाव के ऊपर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो पृच्छक को विशेष रूप से लाभ होता है।

लग्नेश और लाभेश एक साथ हों तो भी लाभ होता है।

लग्नेश और लाभेश का इत्थशाल योग होने पर भी लाभ होता है। यदि लग्नेश चन्द्रमा से दृष्ट होकर लाभ स्थान में स्थित हो तो दूसरों की सहायता से लाभ होता है। दशमेश और चन्द्रमा का इत्थशाल होने पर भी लाभ की प्राप्ति होती है।

---

1. (क) समर्घं वा महर्घस्यादिति प्रश्ने विशेषतः। लग्नस्य सौम्यतां ज्ञात्वा फलं कुर्याद्विचक्षणः।।
लाभलाभांशपौ प्रश्ने सबलौ चेन्मर्ध्वता।
तावेवं बलहीनौ चेत्समर्घं जायते तदा।। (प्रश्नभूषण, अ॰ १५, श्लो॰ ४, ११)

(ख) क्रयाणकानां पृच्छायां सौम्या ज्ञेयामहात्मभिः। समर्घ सबले लग्ने महर्घमबले पुनः।
सौम्य दृष्टं स्वामि दृष्टं सौम्यकेन्द्रे युतं शुभैः।
सबलं बुवते लग्नमबलं त्वन्यथा बुधाः।। (भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव॰ श्लो॰ १३६-१३७)

(ग) मेषे वृषे च मिथुने शुभयुक्तदृष्टे न ग्रैष्मिक तु सुलभं भविता पृथिव्याम्।
सौम्ये जनुर्भृगुघटेषु च सारधान्यं कुर्यात्समर्घमशुभैः सहितो महर्घम्।।
लग्ने बलाढ्ये निजनाथ सौम्यैर्युक्तेक्षिते केन्द्रगतैः शुभैश्च।
सर्वैः समर्घ विबलैर्वलग्ने केन्द्रेषु पापैः सकलं त्वनर्घ्यम्।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ २२३-२२४)

कर्माधिपति का लग्नेश के साथ रहना, उसके साथ इत्थशाल होना एवं कर्माधिपति और लाभेश का योग होना भी लाभ का सूचक है।

लाभेश और अष्टमेश का योग और इत्थशाल होने पर लाभ नहीं होता। जिस-जिस स्थान पर चन्द्रमा की दृष्टि हो उस-उस स्थन से पुण्य की वृद्धि तथा कर्म की सिद्धि होती है। अष्टम भाव पर चन्द्रमा की दृष्टि रहने से लाभ नहीं होता तथा धर्म-कर्म का भी ह्मास होता है। लग्नेश षष्ठ या अष्टम में हों तो लाभ नहीं होता तथा नाना प्रकार के कष्ट भी सहने पड़ते हैं। लग्नेश द्वादश भाव में स्थित हो तो व्यय अधिक होता है और लाभ कुछ नहीं। प्रश्नकुण्डली में लग्न में बुध स्थित हो और चन्द्रमा की दृष्टि हो अथवा पापग्रहों की बुध पर दृष्टि हो तो लाभ के साथ-साथ दुर्घटना घटती है।

लग्नेश स्वयं पापग्रह हो तथा द्वितीय एवं एकादश स्थान पर पापग्रहों का प्रभाव हो, तो लाभ नहीं होता।[1]

विवाह विचार :-

प्रश्न कुण्डली में लग्नेश, सप्तमेश एवं शुक्र के परस्पर सम्बन्ध के आधार पर विवाह का विचार किया जाता है। प्रश्नकुण्डली में निम्नलिखित योगों में से कोई एक योग होने पर विवाह होता है -

स्त्री लाभ सम्बन्धी प्रश्न में सप्तम भावेश और लग्नेश अथवा चन्द्रमा का इत्थशाल योग हो तो बिना माँगी स्त्री का लाभ होता है।

यदि लग्न स्वामी या चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो तो भी बिना माँगी स्त्री प्राप्त हो। यदि लग्नेश सप्तम भाव से ईसराफ योग करता हो और चन्द्रमा का सप्तमेश के साथ इत्थशाल हो तो अपने आप स्त्री की प्राप्ति होती है अर्थात् विवाह होता है। प्रश्नलग्नेश और सप्तमेश यदि अपने राशि में व अपने उच्च राशि में वर्तमान होकर परस्पर दृष्ट रहें तो विवाह कारक होता है अथवा लग्नेश यदि सप्तम स्थान में वर्तमान हो और सप्तमेश यदि लग्नगत हो तो शीघ्र ही विवाह होता है। प्रश्न करने के समय यदि प्रश्न लग्न से ३।५।७।११ इन घरों में चन्द्रमा हो तथा रवि, बुध, गुरू से देखा गया हो तो तत्काल विवाह होगा।

यदि बृहस्पति, बुध, शुक्र और चन्द्रमा लग्न से त्रिकोण (५/९) वा केतु (१।४।७।१०) स्थानों में रहें तो विवाह होता है। यदि प्रश्न लग्न २।४।७ इनमें से कोई हो, शुभ ग्रह से युक्त हो, अथवा शुभग्रह उसे देखता हो तब यह लग्न विवाह कार्य शीघ्र सम्पन्न कराने वाला होता है।

चन्द्रमा एवं शुक्र यदि बलवान् होकर, विषम राशि (१।३।५।७।९।११) पर हों, अथवा

---

1. (क) लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यौ स्यातामुभौ यदि। स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन् प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम्।।
एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलम्। बुधो विनिश्चियं ब्रूयाद्योगेष्वन्येषु निस्पृहः।।
प्रश्नकाले सौम्यवर्गे लग्ने यदधिको भवेत्। ग्रहभावानपेक्षेण तत्राख्येयं शुभं फलम्।।
लग्नाधिपश्च लाभस्याधीशश्च दायको भवेत्। लग्नाधिपस्य योगोलाभाधीशेन लाभकरः।।
भवति स परलाभकरस्तदैव स यदि चनद्रदृग्लाभे। योगाः सर्वेऽप्यफलाश्चन्द्रमृते व्यक्तमेतच्च।।
धर्माधीशेनैव कर्माधीशेन निवृत्य धीशेन। मृत्युपतिना च योगे लाभाधीशस्य वक्तव्यम्।।
तत्तत्स्थानेक्षणतः पुण्यविवृद्धिश्च कर्मवृद्धिश्च। विबुधैस्तदा निवृत्तिर्मृत्युर्भावाः परेऽप्येवम्।।
लग्नेशो यदि षष्ठः स्वयमेव रिपुर्भवत्यात्मा। मृत्युकृदष्टमगोऽसौ व्ययगोऽसौ सन्ततं व्ययंकुरूते।।
लग्नस्थं चन्द्रजं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति।
धनलाभो भवत्याशु किन्त्वनर्थोऽपि पृच्छतः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ १८३-१९१)
(ख) भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ ५, पृ॰ ४३३
(ग) मूकप्रश्नविचार, शुकदेवचतुर्वेदी, पृ॰ १३७
(घ) लग्नाधिपतिर्लब्धो ... किन्त्वनर्थोऽविदृश्यते।।
(भुवनदीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ८०-८५)

नवांश पर होकर लग्न को देखते हों, तो कन्या को वर की प्राप्ति अवश्य होती है। तथा यदि चन्द्र एवं शुक्र समराशि (२।४।६।८।१०।१२) पर हो अथवा इनके नवांश पर हो तब यह योग वर को कन्या का लाभ शीघ्र होता है।

लग्न से सम स्थान में शनिश्चर हो, तो वर को वधू और विषम स्थान में शनिश्चर हो, तो कन्या को वर अवश्य प्राप्त होता है।[1]

दम्पत्ति प्रेम सम्बन्धी प्रश्न :-

प्रश्नकुण्डली में दम्पति प्रेम तथा बैर आदि का विचार इस प्रकार जानें -

स्त्री प्रीति सम्बन्धी प्रश्न में यदि सप्तम भावेश और लग्नेश का इत्थशाल हो तो स्त्री से प्रीति होगी और यदि उनकी शत्रुदृष्टि हो तो कलह हो और चन्द्रमा कंबूल योग कर रहा हो तो स्त्री सरल स्वभाव वाली होती है।

लग्नेश और सप्तमेश यदि स्वराशिगत हों, अथवा लग्नेश और सप्तमेश के राशिगत हो और सप्तमेश यदि लग्नेश के राशिगत हो तो दम्पति प्रेम दिनोनुदिन विशेष होता है।

लग्नेश यदि सप्तम स्थान में हो तो पुरुष स्त्री की आज्ञा में रहता है और सप्तमेश यदि लग्नगत हो तो स्त्री स्वामी की आज्ञा में रहती है।

लग्नेश और सप्तमेश की यदि लग्न पर अथवा सप्तम भाव पर दृष्टि हो तो दोनों स्त्री-पुरुष में परस्पर अमृत समान प्रेम होता है। प्रश्न लग्नेश यदि उच्च राशिगत हो तो स्वामी स्त्री की अपेक्षा गुणों में श्रेष्ठ होता है। सप्तमेश यदि उच्च राशिगत हो तो स्त्री स्वामी की अपेक्षा गुणों में श्रेष्ठ होती है। अतएव यदि लग्नेश और सप्तमेश दोनों उच्च के हों तो स्त्री पुरुष दोनों उच्च होते हैं।

यदि लग्न का स्वामी और सप्तमेश ये दोनों एक ही राशि में स्थित हों तो पहले कलह हो किन्तु बाद में प्रीति हो जाय। यदि सूर्य बलहीन हो तो पुरुष को शुभ नहीं है। यदि शुक्र बलहीन हो तो स्त्री को शुभ नहीं होगा ऐसा समझो। यदि दोनों बलरहित हों तो दोनों का शुभ नहीं होगा। लग्नेश और सप्तमेश परस्पर शत्रु राशि में, निर्बल हों, पापग्रहों की दृष्टि में हों या अस्तंगत हों अथवा परस्पर छठे और आठवें स्थान में हों तो पति पत्नी में कलह, विवाद और मतभेद रहता है।[2]

---

1. (क) भारतीय ज्योतिषी, नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ ५, पृ॰ ४३६ (ख) मुक प्रश्न विचार शुकदेव चतुर्वेदी पृ॰ १४१
   (ग) त्रि.सप्तमायपञ्चमारिभावगो निशाकरो, रविज्ञजीववीक्षितो विवाह कारको भवेत्।
   त्रिकोणकेन्द्रगा गुरुज्ञशुक्रशीतभानवोयदीहलग्नतोभवन्ति वा विवाहकारकाः।।
   प्रश्नलग्नेशजायाधिपौ स्वर्क्षगावुच्चभावस्थितौचेन्मिथोवीक्षितो।
   लग्नपः सप्तमे सप्तमेशो यदा लग्नगः सत्वरं यद्विवाह वदेत्।। (प्रश्नभूषण अ॰ ७ श्लो॰ १, २)
   (घ) स्त्रीलाभस्य प्रश्नेस्मराधिपे लगनपेनशशि ना वा। कृतमुथशिले युवत्या अयाचिताया भवेल्लाभः।।
   यदि लग्नपो विधुर्वा द्यूने तद्याचितां स्त्रियं लभते। लग्नेशान्मूसरिफे चन्द्रेऽस्तमुथशिले स्वयं लाभः।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ७७/७८)
   (ङ) अदौसंपूज्यरत्नादिभिरथगणकं वेदयेत्स्त्रस्थचित्तंकन्योद्वाहेदिगीखानलहयविशिखेप्रश्नलग्नाद्यदींदु।
   दृष्टोजीवेनसद्यः परिणयनकरोगेतुलाकर्कटाख्यंवास्यात्प्रश्नस्यलग्नंशुभखचयुतालोकितंतद्विदध्यात्।।
   विषमेभांशगतौशशिभागेवौतनुगृहंबलिनौयदिपश्यतः। रचतो वरलाभमि मौयदायुगलभांशगतौयुवति प्रदौ।।
   (मूहूर्तचिन्तामणि, षष्ठम प्रकरण, श्लो॰ २, ३)
2. (क) प्रीतिस्थान प्रश्ने स्मरपतिलग्नेशमुथशिले स्नेहः। झकटकदृशा झकटकः शशिकम्बूले तूसाऽपि शुभा।।
   उभयोरेकस्थितयोर्ज्ञातव्या झकटकं तयोः पीतिः। सूर्ये न शुभं विबले नरस्य शुक्रे स्त्रियाद्वयोंद्वतयौ।।
   (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, अ॰ २, श्लो॰ ८१, ८३)
   (ख) लग्नजायाधिपौ स्वस्थौ यदि वा व्यत्ययेन तौ। दिने दिनेऽधिका प्रीतिर्दम्पत्योर्जायते मिथः।।
   नरो लग्नपतिः कामे जायाज्ञाप्रतिपालकः। नारीजायाऽधिपे लग्ने पत्याज्ञाकारिणी भवेत्।।
   लग्नजायेशयोर्दृटिर्लग्ने वा सप्तमे तयोः। परस्परं तदा प्रीतिः पीयूषदृशी भवेत्।।
   प्रश्नलग्नपतिः स्वोच्चे गुणरूच्चो भवेत्पतिः। जायास्वामी यदोच्चस्थो नारी स्वामिगुणाधिका।।
   (प्रश्नभूषण, अ॰ ८, श्लो॰ १-४) (ग) न धृता परिणीता वा योगेऽत्र सुखदायिका।
   परिणीता धृता वाऽपि पाश्चात्ये सुखदायिका।। (भुवन दीपक, डॉ॰ शुकदेव चतुर्वेदी, श्लो॰ ९४)

मौष्टिकादिमूक प्रश्न ज्ञान :-

पृच्छक के मन में धातु, मूल या जीव किसकी चिन्ता है? यह निश्चय करने के लिए निम्नलिखित योग प्रश्न शास्त्र में बताये गये हैं। किसी मूक प्रश्न अथवा मुष्टिगत प्रश्न में लग्नेश तथा चन्द्रमा यदि अपने नवांश व लग्न में अथवा त्रिकोण (५/९) में हो या अपने नवांश में रहकर लग्न को देखें तो पृच्छक के मन में धातु चिन्ता होती है।

यदि वह ग्रह दूसरे के नवांश में बैठकर दूसरे के नवांश में स्थित लग्न या चन्द्रमा को देखे तो जीव चिन्ता होती है। यदि दूसरे के नवांश में बैठकर दूसरे के नवांश में स्थित लग्न या चन्द्रमा को देखे तो मूल विषयक चिन्ता की बाते कहें।

यदि प्रश्न लग्न में विषम राशि का लग्न हो तो प्रथम नवांश से धातु, दूसरे नवांश से मूल, तीसरे से जीव, चौथे से धातु, पाँचवें से मूल, छठे से जीव, सातवें से धातु, आठवें से मूल और नवें नवांश से जीव चिन्ता कहनी चाहिए। यदि प्रश्न लग्न में समराशि हो तो विपरीत अर्थात् १।४।७ नवांश से जीव, २।५।८ से मूल और ३।६।९ नवांश से धातुचिन्ता की बात कहें।[1]

मुट्‌ठी में वस्तु का वर्णविचार :-

मुट्‌ठी में किस रंग की वस्तु है? इसका निश्चय प्रश्नलग्न की राशि के अनुसार करना चाहिए। यदि प्रश्न लग्न में मेष राशि हो तो वस्तु का लाल रंग, वृष हो तो सफेद, मिथुन हो तो हरा, कर्क हो तो गुलाबी, सिंह हो तो भूरा, कन्या हो तो अनेकरंग, तुला हो तो काला, वृश्चिक हो तो लाल, धनु हो तो पीला, मकर हो तो चितकबरा, कुम्भ हो तो भूरा और मीन हो तो चमकीले सफेद रंग की वस्तु प्रश्नकर्त्ता की मुट्‌ठी में बतलानी चाहिए।

यदि प्रश्न-लग्न या उसके नवांश में सूर्य हो तो गुलाबी, चन्द्रमा हो तो सफेद, मंगल हो तो लाल, बुध हो तो हरा, गुरु हो तो पीला, शुक्र हो तो चमकीला सफेद, शनि हो तो काला, राहु हो तो भूरा और केतु हो तो धुयें के समान रंग वाला पदार्थ हाथ में होता है।[2]

धातुः, मूल या जीव की चिन्ता :-

प्रश्न कुण्डली में सर्वाधिक बलवान् ग्रह से भी धातु मूल एवं जीव चिन्ता का निश्चिय किया जाता है - यदि प्रश्न कुण्डली में सूर्य तथा मंगल बली होकर केन्द्र में हो तो धातु चिन्ता, बुध या शनि अधिक बलवान हो तो मूल की और चन्द्रमा, गुरु या शुक्र अधिक बलशाली हो तो जीव विषयक चिन्ता होती है।

यदि मेष, वृश्चिक तथा सिंह लग्न हो और लग्न में मंगल तथा सूर्य एक साथ बैठे हां या लग्न को देखते हों तो धातुचिन्ता की बात कहें। यदि मिथुन कुम्भ तथा कन्या लग्न हो और लग्न में शनि

---

1. (क) स्वांशे विलग्ने यदि वा त्रिकोणे स्वांशे स्थितः पश्यतिधातुचिन्ताम्।
परांशकस्थश्च करोति जीवं मूलं परांशोपगतः परीशम्।।
धातुं मूलं जीवमित्योजराशौ युग्मे विन्द्यादेतदेव प्रतीपम्।
लग्ने योंऽशस्तत्क्रमाद् गण्यमेवं संक्षेपोऽयं विस्तरात्तत्प्रभेदः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ २०६, २०८)
(ख) नवांशगः खेचरः स्वांशमङ्गे यदा धातुचिन्तात्रिकोणेऽथवाऽऽलोकयेत्।
अन्यभागस्थितोजीवचिन्ता तदा मूलचिन्ताऽन्यभागं परांशोपगः।।
जीवं मूलं धातुमंशक्रमेणविज्ञायैवं युग्ममे प्रश्नकाले।
धातुं मूलं जीवमित्यादि विद्यादोजे मुष्टौ हद्गतं वा विशेषात्।। (प्रश्नभूषण, अ॰ ३, श्लो॰ १, २)
(ग) मूकप्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ३७
2. (क) भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्रशास्त्री, अ॰ ५, पृ॰ ४३८
(ख) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव चतुर्वेदी, पृ॰ ७७

के साथ बुध बैठा हो तो मूलचिन्ता, वृष, तुला, सिंह, मीन, धन एवं कर्क इन लग्नों में से कोई लग्न हो और चन्द्र, गुरू तथा शुक्र ये ग्रह बैठे हों या देखते हों तो जीव सम्बन्धि प्रश्न कहें।[1]

भाव प्रश्न ज्ञान :-

लग्नेश या लाभेश से जिस स्थान में चन्द्रमा बैठा हो उसी भाव की चिन्ता पृच्छक के मन में होती है। बलवान चन्द्रमा से जितनी संख्या के भाव में लग्नेश बैठे हों, ज्योतिषी उस भाव सम्बन्धी प्रश्न को पृच्छक के हृदय में रहने की बात कहे।

लाभेश से जो ग्रह बलवान (निसर्ग, काल, दृष्टि, दिशा आदि बल से युक्त) हो उससे चन्द्रमा जिस भाव में हो उस भाव-सम्बन्धी प्रश्न कर्त्ता के मन में जानना चाहिए।

यदि उत्तम बली ग्रह तथा तात्कालिक लग्न का नवांशेश लग्न में हो तो शारीरिक, तीसरे में हो तो भाई के विषय में पंचम स्थान में हो तो सन्तान के विषय में, चतुर्थ स्थान में हो तो माता और मौसी के विषय में, छठे स्थान में हो तो शत्रु के विषय में, सप्तम स्थान में हो तो स्त्री के विषय में, नवम स्थान में हो तो धर्म या भाग्य के विषय में, दशम भाव में हो तो राजा के विषय में प्रश्न होता है।

यदि लग्न का नवांशेश बलवान होकर मित्र की राशि में बैठा हो तो मित्र और शत्रु की राशि में हो तो पृच्छक के मन में शत्रु सम्बन्धी प्रश्न जानें। इनमें जो बली हो उसी से प्रश्न का निर्णय करना चाहिये।[2]

मेषादि राशियों द्वारा धातु, मूल एवं जीव विचार :-

यदि प्रश्न लग्न में मेष राशि हो तो प्रश्न कर्ता के मन में मनुष्यों की अर्थात् जीवचिन्ता होती है। वृष राशि के लग्न में चौपायों (गाय, भैंस एवं बकरी आदि) की या मोटर आदि की चिन्ता होती है। मिथुन लग्न में जीव-चिन्ता होती है, किन्तु इस प्रश्न में प्रायः सन्तान, गर्भ आदि की चिन्ता होती है। प्रश्न लग्न में कर्क राशि हो तो धातु, मूल, एवं जीव के बारे में मिला-जुला प्रश्न होता है अर्थात् व्यवसाय के विषय में प्रश्न होता है। सिंह राशि के लग्न में हिंसक जीव (सिंह, चीता, चोर, डाकू, बदमाश) के विषय में चिन्ता होती है। यदि प्रश्न लग्न में कन्या राशि हो तो जीव-विषयक सम्बन्धि स्त्री, प्रेम, विवाह आदि के बारे में चिन्ता। प्रश्न लाभ में तुला राशि हो तो धन की चिन्ता होती है। वृश्चिक लग्न हो तो, जीव विषयक प्रश्न होता है। इस में अधिकांशतया रोग एवं रोगी का प्रश्न। यदि प्रश्न लग्न में धनुराशि हो तो मिला-जुला प्रश्न होता है। इसमें शिकार, व्यापार आदि प्रश्न होते हैं। मकर राशि के

---

1. (क) बलिनौ केन्द्रोपगतौ रविभौमौ धातुकरौ प्रश्ने। बुधसौरी मूलकरौ शशिगुरुशुक्राः स्मृता जीवाः।।
मेषालिसिंहलग्ने कुजार्कयुक्ते निरीक्षितेऽप्यथवा। धातोश्चिन्तां प्रवदेद् युगघटकन्यागतैर्लग्नैः।।
बुधरविजयुतैर्मूलं वृषतुलहरिमीन चापकर्कटकैः।
चन्द्रगुरुशुक्रयुतैर्दृष्टैर्जीवो विनिर्देश्यः।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ २०९-२११)
(ख) बलिनौ भास्कर भौमौ धातुकरौ संस्थितौ प्रश्ने।
मूलकरौ शनि सौम्यौ शशि गुरु गुजास्तथा जीवाः।। (मूक प्रश्न विचार, पृ॰ ३७)
2. (क) लग्नलाभपयोः प्राणी तयोर्ग्रद्भावगः शशी। तस्य भावस्य या चिन्ता प्रस्तुः सा हृदि वर्तते।।
एवं बलाधिकाच्चन्द्रल्लग्ननाथो यतः स्थितः। दैवज्ञेन विनिर्णेयः प्रश्नस्तद्भावसम्भवः।।
आत्मसमं लग्नगतैस्तृतीयगेर्भ्रातरः सुतं सुतगैः। माता वा भगिनी वा चतुर्थगैः शत्रुगैः शत्रुः।।
जाया सप्तम संस्थैर्नवमे धर्माश्रितो गुरुर्दशमे।
स्वांशपमित्रशत्रुषु तथैव वाच्यं बलयुतेषु।। (ता॰ नी॰, प्रश्नतन्त्र, श्लो॰ ११२-११५)
(ख) भारतीय ज्यो॰ नेमि॰ अ॰ ५, पृ॰ ४३८

लग्न में जीव-चिन्ता में मुख्यतया शत्रु, विवाद, लड़ाई, मुकद्दमा के बारे में प्रश्न होता है। कुम्भ राशि में लग्न में मूल-चिन्ता होती है। इसलग्न में जमीन, मकान, खेती आदि का प्रश्न होता है।

यदि प्रश्न लग्न में मीन राशि हो तो मूल-चिन्ता होती है। इस लग्न में वन, जंगली उद्योग, लकड़ी का कार्य, फल एवं भाग आदि का प्रश्न होता है।[1]

स्त्री विषयक चिन्ता प्रश्न :-

यदि सप्तम भाव में सूर्य, शुक्र तथा मंगल बलवान् होकर बैठे हों तो पर स्त्री की चिन्ता होती है। बृहस्पति हो तो अपनी स्त्री, बुध हो तो वेश्या, चन्द्रमा हो तो किसी सुन्दर स्त्री की चिन्ता होती है। शनि हो तो नाईन, धोबिन, तेलिन, आदि नीच वर्ण की स्त्री की चिन्ता होती है। यदि प्रश्न लग्न में बाल्यावस्था का चन्द्रमा या बुध हो तो किसी कुमारी/ कन्या की चिन्ता होती है। यदि इस स्थान में शनि हो तो वृद्धा की, सूर्य या गुरु हो तो प्रसूता की और मंगल या शुक्र हो तो कठोर स्वभाव वाली स्त्री के सम्बन्ध में प्रश्न होता है।

स्त्री के रूप, रंग का निश्चय ग्रह के वर्ण आदि के अनुसार कर लेना चाहिए। स्त्री की आयु का निश्चय करने का आसान तरीका यह है कि यदि लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो बालिका, द्वितीय द्रेष्काण हो तो युवती और तृतीय द्रेष्काण हो तो वृद्ध स्त्री कहनी चाहिए।[2]

---

1. (क) भारतीय ज्योतिष नेमि॰ अ॰ ५, पृ॰ ४३७
   (ख) मूक प्रश्न विचार, शुक॰, पृ॰ ४२
2. (क) अस्ते रविसितबलैः परजायां स्वां गुरौ बुधे वेश्याम्।
   चन्द्रे चं वयः शशिवत्प्रवदेत्सौरेऽन्त्यजादीनाम्।।
   कुमारिकां बालशशी बुधश्च वृद्धां शनिः सूर्यगुरुप्रसूताम्।
   स्त्री कर्कशांभौमसितौ च धने एवं यः स्यात्पुरुषेषुचैवम्।।
   (ख) मूक प्रश्न विचार, शुकदेव॰ पृ॰ ६१

सहायक ग्रन्थ सूची

क्रमांक	ग्रन्थ का नाम	लेखक/सम्पादक	प्रकाशक का नाम	संस्करण
१.	अंक ज्योतिष महानिबन्ध	डॉ. नारायण दत्त शास्त्री	चौखम्बा विद्या भवन चौक वाराणसी	१९६२
२.	आओ ज्योतिष सीखें	तिलक चन्द 'तिलक'	पुस्तक महल दिल्ली	जुलाई २००४
३.	कल्याण (संक्षिप्त नारद पुराण)	हनुमान पोद्दार चिम्मन लाल गोस्वामी	घनश्याम जातान, गीता प्रेस गोरखपुर	१४५४
४.	केशवीय जातक पद्धति	श्री केशवीय दैवज्ञ विरचित	वाराणसेय संस्कृत संस्थान सी-२७/६४ जगतगंज,वाराणसी	--
५.	ग्रहगोचर फल	हरिहर प्रसाद व्यास	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी	१९७०
६.	ग्रह लाघव करणम्	डॉ. रामचन्द्र पाण्डेय	प्राचार्य : श्री रणवीरकेन्द्रिय संस्कृत विद्यापीठम् जम्बु	१९९६
७.	ज्योतिष श्याम संग्रह	पं. श्यामलाल दैवज्ञ	गंगा विष्णु श्री कृष्णदास लक्ष्मी वेंकटेश्वर,	१९५३
८.	ज्योतिष सर्वस्व	डॉ. सुरेश चन्द्र मिश्र	रंजन पब्लिकेशन,१६ अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली	१९९५
९.	ज्योतिष रत्नाकर	देवकीनन्दन सिंह	मोती लाल बनारसी दास वाराणसी, दिल्ली	१९६४
१०.	ज्योतिष तत्व	पन्नालाल जालन्धर	रोहिणी प्रिंटर्ज़ जालन्धर	प्रथम
११.	ज्योतिष तत्व	पं. देवी दयालु ज्योतिषी	रोहिणी प्रिंटर्ज़ जालन्धर (शहर)	
१२.	ज्योतिष फल	डॉ. अर्जुन कुमार गर्ग	सुरेखा प्रकाशन ६५ त/८ नई पलबल हरियाणा	१९९९
१३.	जातकालंकार	पं. हरेकृष्ण शास्त्री दानार	सावित्री ठाकुर प्रकाशन वाराणसी	२०००
१४.	जातक तत्त्वम्	डॉ. सुरेश चन्द्र मिश्र	रंजन पब्लिकेशन्स नई दिल्ली	१९९९
१५.	जातक परिजात	श्री दैवज्ञ वैद्यनाथ	मोती लाल बनारसी दास वाराणसी	१९२९
१६.	जातक भरणम्	सीतराम झा	ज्योतिष प्रकाशन चौक वाराणसी	२००१
१७.	जीवन भविष्य दर्पण	पं. कैलास नाथ उपाध्याय	ज्योतिष प्रकाशन चौकवाराणसी	२००१
१८.	ताजिक नीलकण्ठी	दैवज्ञ वाचस्पति श्री वासुदेव गुप्ता	श्री ठाकुर पुस्तक भण्डार कचौड़ी गली, वाराणसी	सम्वत् १९८८
१९.	ताजिक नीलकण्ठी	पं. महीधर शर्मा	गंगा विष्णु, श्रीकृष्ण दास लक्ष्मी वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, कल्याण मुम्बई	
२०.	ताजिक की सर्वोत्तम पुस्तक	सम्पादक मार्तण्ड पञ्चांग कर्ता	रूचिका पब्लिकेशन्स	--
२१.	ताजिक तन्त्रसार	समर सिंह तुमार सिंहात्मजः	श्री रघुनाथ संस्कृतअनुसन्धान पुस्तकालय जम्मू।	
२२.	ताजिक पद्धति	केशव	श्री रघुनाथ संस्कृत अनुसन्धान पुस्तकालय जम्मू	--

क्रमांक	ग्रन्थ का नाम	लेखक/सम्पादक	प्रकाशक का नाम	संस्करण
२३.	ताजिक भूषणम्	गणेश गणकः	श्री रघुनाथ संस्कृत अनुसन्धान पुस्तकालय जम्मू	—
२४.	ताजिक संहिता	नीलकण्ठ	श्री रघुनाथ संस्कृत अनुसन्धान पुस्तकालय जम्मू	—
२५.	ताजिकसारः	हरिभद्र गणकः	श्री रघुनाथ संस्कृत अनुसन्धान पुस्तकालय जम्मू	—
२६.	पंचांग दिवाकर	पं. देवी दयालु ज्योतिष एण्ड सन्ज़	जनल बुक डिपो अड्डा होशियारपुर जालन्धर	वै. २०६३
२७.	पंचांग विज्ञान	पं. दीना नाथ झा	चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ वाराणसी	१९६८
२८.	पंचाग मार्तण्ड	पं. श्री मुकुन्द वल्लभ मिश्रा	रूचिका पब्लिकेशन्स	सं.२०६४
२९.	प्रश्न भूषणम्	पं. श्री कमलाकान्त शर्मा	चौखम्बा विमला 'सरला' वाराणसी	
३०.	प्रश्न ज्योतिष विज्ञान	श्री भारतीय योगी	डॉ. चमन लाल गौतम संस्कृति संस्थान ख्वाज़ा कुतुब बरेली	१९७९
३१.	फल दीपिका	पं. गोपेश कुमार ओझा	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	१९८९
३२.	बृहज्जातकम्	श्री दैवज्ञ वाराहमिहिर	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	१९४६
३३.	बृहत्ज्योतिषसार	दैवज्ञ वाचस्पति श्री वासुदेव गुप्त	चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी	१९९०
३४.	बृहत्संहिता	वाराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी	१९३७
३५.	बृहदवकहडाचक्रम	पं. जगन्नाथ शर्मा	देहाती पुस्तक भण्डार चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-६	१९९२
३६.	बृहत्पाराशर होराशास्त्रम्	पं. देव चन्द्र झा	चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी	२०६०
३७.	भाव प्रकाश	श्री जीवनाथ दैवज्ञ	चौखम्बा संस्कृत आफिस, विद्या विलास प्रेस, बनारस	१९६०
३८.	भावकुतुहलम्	श्री जीवनाथ दैवज्ञ	ज्योतिष प्रकाशन चौक वाराणसी	२०००
३९.	भारतीय ज्योतिष प्रवेश	डॉ. पुरूषोत्तम शर्मा	अभिमन्यु पब्लिकेशन्स कटड़ा (जे एण्ड के)	प्रथम १९९९
४०.	भारतीय ज्योतिष	नेमिचन्द्र शास्त्री	भारतीय ज्ञानपीठ १८ इन्स्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड, नई दिल्ली	२००५
४१.	भाव दीपिका	डॉ. गौरीशंकर कपूर	गोयल एण्ड कम्पनी दरीबा, दिल्ली	१९७३
४२.	भारतीय कुण्डली	मीठा लाल हिंमतराम ओझा	देर्वष प्रकाशन, डी. ३/४० मीरघाट वाराणसी (उ.प्र.)	
४३.	भृगु संहिता	सी.एम. श्री वास्तव	अमित पॉकेट बुक्स, नज़दीक अड्डा टांडा, जालन्धर शहर	—
४४.	भृगु संहिता	पं. गोविन्द प्रसाद जी दीक्षित	पुस्तक महल	२००१
४५.	भुवन दीपिका	डॉ. शुकदेव चतुर्वेदी	रंजन पब्लिकेशन्स १६ अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-३	—
४६.	मान सागरी	ज्योतिषाचार्य श्री रूप नारायण झा	श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार, कचौड़ी गली, वाराणसी	१९९४

क्रमांक	ग्रन्थ का नाम	लेखक/सम्पादक	प्रकाशक का नाम	संस्करण
४७.	मूक प्रश्न विचार	शुकदेव चतुर्वेदी	रंजन पब्लिकेशन्स दीबा, दिल्ली	मई १९९९
४८.	मुहूर्त चिन्तामणि	पं. चन्द्र प्रकाश आचार्य	संस्कृति संस्थान ख्वाजा कुतुब वेदनगर, बरेली (उ.प्र.)	सं. १९९४
४९.	मुहूर्त ज्योतिष विज्ञान	पं. राजशेखर	संस्कृति संस्थान ख्वाजा कुतुब वेदनगर, बरेली (उ.प्र.)	—
५०.	लग्न चन्द्रिका	पं. श्री मातृ प्रसाद पाण्डेय	कचौरी गली, बनारस सिटी	१९३७
५१.	लघु जातक	श्री वाराहमिहिर	कृष्णदास अकादमी पो. बॉ. १८ वाराणसी	सं. २०४०
५२.	लाल किताब	डॉ. राधेश्याम मिश्र परमहंस	राजा पॉकेट बुक्स ३६०/१, मेन रोड, बुराड़ी दिल्ली-८४	२०००
५३.	वर्षफल विचार	डॉ. उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर'	रणधीर प्रकाशन रेलवे रोड़ हरिद्वार २४९४०१	१९९५
५४.	वर्षफल दर्पण्	डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली	आनन्द पेपर बैक्स मदरसा रोड, कश्मीरी गेट दिल्ली	सं. २००५
५५.	वर्षफल चन्द्रिका	पं. पन्ना लाल ज्योतिषी पंचांग कर्ता	जनरल बुक डिपो अड्डा होशियारपुर जालन्धर	सं. १९९५
५६.	वर्ष पत्री दीपक	पं. नारायण प्रसाद सीताराम मिश्र	ज्ञानसागर पुस्तकालय कालका देवी रोड, बम्बई नं. २	—
५७.	शम्भु होरा प्रकाश	पं. महीधर शर्मा	गंगा विष्णु श्री कृष्णदास लक्ष्मी वेंकटेश्वर छापाखाना कल्याण, मुम्बई	१९३७
५८.	सारावली	डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी	मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली, बुम्बई, बंगलौर, वाराणसी	१९८६
५९.	सर्वार्थ चिन्तामणि	पं. महीधर शर्मा	खेमराज श्रीकृष्ण दास लक्ष्मी वेंकटेश्वर स्टीम, प्रेस कल्याण, बम्बई	१९५५
६०.	हिन्दी विश्वकोश भाग-८, ९	नगेन्द्र नाथ वसु,	बी.आर. पब्लिशिंग कार्पोरेशन ४६१ विद्याभवन नगर, दिल्ली	१९९९
६१.	होराचक्रम्	पं. चन्द्रभान	रतन एण्ड को. कुक सेलर्स १६, दरियागंज, नई दिल्ली-२	—

स
ब्र

२

